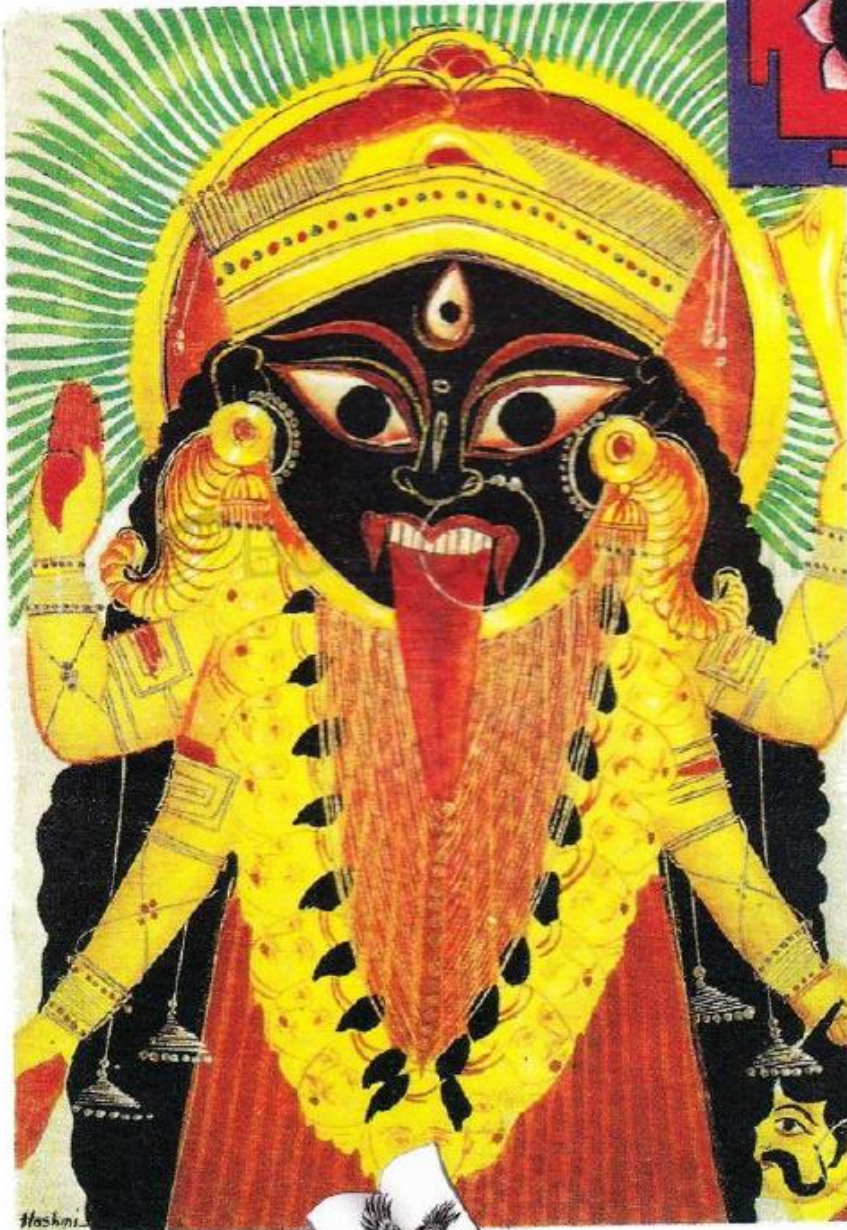


तांत्रिक सिद्धियां

डॉ. नारायणदत्त श्रीमाली



Hoshani



वी एंड एस पब्लिशर्स

प्रकाशक
हिन्द पुस्तक भण्डार, दिल्ली-110006

संबद्ध संस्था
पुस्तक महल, दिल्ली-110006

विक्रय केन्द्र

- 6686, खारी बावली, दिल्ली-110006.....फोन 239314, 2911979
- 10 बी, नेताजी सुभाष मार्ग, दरियागज, नई दिल्ली-110002.....फोन 3268292-93

प्रशासनिक कार्यालय

एफ-2/16, असारी रोड, दरियागज, नई दिल्ली-110002
फोन 3276539, 3272783, 3272784
टैलेक्स 031-78090 एस बी पी इन * फेक्स 91-11-2924673

शाखा कार्यालय

- 23-25, जाओवा बाड़ी, ठाकुरद्वार, बवई-400002 फोन 2010941
- 22/2, मिशन रोड (शामा राव कम्पाउंड), बगलोर-560027 फोन 2234025
- खेमका हाउस, वूमेन्स हॉस्पिटल के सामने, अशोक राजपथ, पटना-800004 फोन 653644

सूचना

इस पुस्तक के तथा इसमें समाहित सारी सामग्री (रेखा व छाया चित्रों सहित) के सर्वाधिकार 'पुस्तक महल' द्वारा सुरक्षित हैं। इसलिए कोई भी सज्जन इस पुस्तक का नाम, टाइटल डिजाइन, अन्दर का मैटर व चित्र आदि आशिक या पूर्ण रूप से तोड़-मरोड़कर एवं किसी भी भाषा में छापने व प्रकाशित करने का साहस न करे। अन्यथा कानूनी तौर पर हर्जे-खर्चे व हानि के जिम्मेदार होगा।

Revised Price
Rs 40/-
PUSTAK MAHAL

दो शब्द

मुझे प्रसन्नता है कि एक ऐसा ग्रन्थ प्रकाशित होने जा रहा है जिसकी विषय-वस्तु सर्वथा मौलिक और अप्रकाशित है, तथा वे साधनाएँ तथा सिद्धियाँ जिनके बल पर भारत सम्पूर्ण विश्व का सिरमौर कहा जाता है और प्रत्येक साधक की इन सिद्धियों को प्राप्त करने की लालसा रहती है, वे सिद्धियाँ स्पष्ट रूप में इस पुस्तक के माध्यम से पहली बार प्रकट हो रही हैं।

सिद्धियों और साधनाओं का विवरण स्पष्ट रूप से दे दिया गया है, इस सबध में जो भी पत्र मुझे प्राप्त हुए, मैंने बिना उनमें सशोधन किये उन पत्रों को इस पुस्तक में स्थान दिया है, अतः इन सिद्धियों की सफलता-असफलता के प्रति प्रकाशक लेखक या सम्पादक किसी भी प्रकार से उत्तरदायी नहीं हैं। जो साधक साधना करना चाहें, वे अपने विवेक और इच्छा के अनुसार इनसे लाभ उठा सकते हैं।

साधना कार्य एक कठिन कार्य है। इस पुस्तक में जो भी सिद्धियाँ और साधनाएँ दी हैं, वे प्रामाणिक हैं, पर सफलता और असफलता के मूल में साधक का विवेक और सामर्थ्य शक्ति मुख्य रूप से प्रभावक रहती है। यदि साधक किसी साधना में असफल होता है तो यह उसके अपने विवेक और सामर्थ्य शक्ति की न्यूनता ही कही जा सकती है।

प्रकाशक महोदय को तत्परता और रुचि के कारण यह पुस्तक इतने शीघ्र समय में सज-धज करके प्रकाशित हो रही है, उसके लिए प्रकाशक साधुवाद के पात्र हैं।

पुस्तक में वर्णित घटनाएँ कल्पना एवं यथार्थ का सुखद सामंजस्य हैं।

यह पुस्तक डॉ० श्रीमाली के संपूर्ण व्यक्तित्व पर प्रकाश डालती है। अतः उनका नाम मैं अपने गुरु होने के नाते आदर व्यक्त करने के लिए दे रहा हूँ। इस दृष्टि से यह पुस्तक मैं गुरु चरणों में समर्पित भाव से प्रस्तुत कर रहा हूँ।

—योगी ज्ञानानन्द

भूमिका

योगी ज्ञानानन्द ने परम प्रिय नारायणदत्त श्रीमाली के जीवन से सम्बन्धित पत्रों का सग्रह मुझे दिखाया, उनकी इच्छा इन पत्रों के प्रकाशन की है, इनमें जो पत्र उन्होंने चुने हैं वे वास्तव में ही महत्वपूर्ण हैं और श्रीमाली जी के व्यक्तित्व की झाकी इन पत्रों के माध्यम से प्राप्त होती है।

मेरी धारणा है कि ये पत्र बहुत पहले प्रकाशित हो जाने चाहिए थे, क्योंकि ये पत्र कालजयी होने के साथ-साथ साधना के क्षेत्र में कार्य करने वाले साधकों के लिए भी प्रेरणा स्तम्भ हैं। इनके माध्यम से वे अपने प्राणों में एक नई ऊर्जा का संचार अनुभव कर सकेंगे और अपने पथ पर बढ़ने में उन्हें एक नया साहस और शक्ति प्राप्त हो सकेगी।

मैं श्रीमालीजी के बहुमुखी व्यक्तित्व से परिचित हूँ, यद्यपि मैं उनके सम्पूर्ण व्यक्तित्व को आकने में समर्थ नहीं हूँ परन्तु जितना भी मैं उनके सम्पर्क में आ सका हूँ उससे ज्ञात होता है कि उनका व्यक्तित्व हिमालय के समान विराट और गंगा के समान निर्मल है। उन्होंने जीवन को पूर्ण क्षमता के साथ जीया है, और प्रत्येक क्षण का उन्होंने आनन्द के साथ उपभोग किया है। कई बार जब उनके व्यक्तित्व के बारे में चिन्तन करता हूँ तो आश्चर्यचकित रह जाता हूँ कि एक व्यक्ति साधना के इतने विविध आयामों को किस प्रकार से स्पर्श कर सकता है, पर श्रीमालीजी का व्यक्तित्व हमारे सामने इसका प्रत्यक्ष उदाहरण है, जिस प्रकार से वह अपनी विराटता को छू सका है।

मन्त्र के क्षेत्र में श्रीमालीजी अद्वितीय हैं, उन्होंने मन्त्रों के मूलस्वरूप को स्पष्ट किया है और वेदोक्त मन्त्रों की मूल ध्वनि को स्पष्ट कर हमें उस युग से साक्षात्कार कराया है जब इन मन्त्रों की रचना हुई थी। उनके द्वारा इस प्रकार के मूलध्वनियुक्त मन्त्रों के टेप तैयार किये गए हैं जो कि अपने आप में ऐतिहासिक कार्य हैं। आने वाली पीढ़ियों के लिए ये टेप सग्रहणीय रहेंगे क्योंकि इनके माध्यम से वे

साधक वेदों की श्रुति और उसकी मूल ध्वनि का परिचय पा सकेंगे कि हमारे मह-
पियों के मुह से वेदों की ध्वनि किस आरोह-अवरोह के साथ निस्तृत हुई थी जिससे
कि उन मन्त्रों का प्रभाव अभिट था ।

वर्तमान युग के सर्वश्रेष्ठ योगीराज श्री सच्चिदानन्दजी का शिष्य होना ही
अपने आप में अत्यन्त उच्चस्तरीय सौभाग्य है और यह सौभाग्य श्रीमालीजी को प्राप्त
है । योगीराज सिद्धाश्रम के मूल प्रवर्तकों में से एक हैं और पूरा विश्व उनके प्रति
कृतज्ञ है, इस प्रकार के परम श्रेष्ठ योगीराज के दर्शन ही हम साधकों के लिए दुर्लभ
हैं ऐसे योगीराज के शिष्य होना ही अपने आप में इस व्यक्तित्व का प्रमाण है ।
श्रीमालीजी, श्री योगीराज सच्चिदानन्दजी के परम प्रिय शिष्य हैं और उनके माध्यम
से मन्त्रों का साकार रूप हमें प्राप्त हो सका है ।

कामाक्षा के तांत्रिक सम्मेलन की हल्की-सी झांकी योगी ज्ञानानन्द ने इस
पुस्तक में दी है । उस सम्मेलन में श्रीमालीजी ने जो दुर्लभ और कठिन साधनाएँ सबके
सामने उपस्थित की थी वे अपने आप में अन्यतम हैं । उनके तांत्रिक स्वरूप को मैं
पहले से ही जानता था और यदि इस क्षेत्र में उन्हें आधुनिक गोरखनाथ कहा जाए तो
अतिशयोक्ति नहीं होगी ।

ज्योतिष के क्षेत्र में उन्होंने जो कुछ योगदान दिया है उससे पूरा भारत परि-
चित है, आने वाले समय में इस क्षेत्र में उनका और अधिक योगदान हमें मिल
सकेगा, ऐसी प्रभु से प्रार्थना है ।

श्रीमालीजी के व्यक्तित्व के बारे में कुछ लिखू ऐसी सामर्थ्य मैं अपने आप में
अनुभव नहीं करता हूँ । उनके सामने मैं लघु हूँ, भले ही आयु में मैं उनसे बड़ा हूँ परन्तु
वास्तव में ज्ञानवृद्ध ही वृद्ध कहलाता है इसलिए मैं उनके प्रति सम्मान और आदर
प्रदान करता हूँ ।

उन्होंने जीवन में जो कष्ट और यातनाएँ सहन की हैं, वे रोमांचकारी हैं ।
उन्होंने कभी भी अपने जीवन को जीवन समझा ही नहीं, अपितु अपने प्रत्येक क्षण को
सार्थकता प्रदान करने में ही जुटे रहे । तांत्रिक क्षेत्र में उन्हें त्रिजटा अघोरी जैसे युग-
पुरुष का सान्निध्य प्राप्त हो सका है, यह कम महत्व की बात नहीं है ।

मैं श्रीमालीजी के स्वभाव से परिचित हूँ । वे अत्यन्त सकोची हैं, अपने बारे
में कभी कुछ भी नहीं कहते हैं अपितु अपनी प्रशंसा सुनना भी वे पसन्द नहीं करते ।
इसलिए इन पत्रों का प्रकाशन यदि नहीं होता तो साधक समाज एक बहुत बड़े
अभाव में रह जाता । वास्तव में ही उनके ये पत्र प्रकाशन के योग्य हैं जिससे कि आने
वाली पीढ़ियाँ और हम सब लाभ उठा सकें । इस दृष्टि से ज्ञानानन्द ने जो कार्य
किया है, वह वास्तव में ही सराहनीय है ।

इन पत्रों के साथ कुछ दुर्लभ साधनाओं से सम्बन्धित पत्र भी प्रकाशित हो रहे हैं, जिससे यह ज्ञात होता है कि सही रूप में साधना करने पर उसका फल निश्चय ही मिलता है। इससे भी साधक वर्ग लाभ उठा सकता है। आज भी श्रीमालीजी सक्रिय हैं, और अपने ज्ञान को शिष्यों के माध्यम से प्रदान करने में प्रसन्नता अनुभव करते हैं, यह उनके पत्रों से स्पष्ट है।

मेरी भावनाएँ उनके प्रति नमन हैं और मैं प्रभु से प्रार्थना करता हूँ कि वे अभी और काफी समय तक गृहस्थ में रहे जिससे कि उनका लाभ समाज उठा सके और वे दीर्घायु हो जिससे हम सब उनसे प्रेरणा प्राप्त कर सकें।

—मूर्मुआ बाबा

विषय क्रम

दो शब्द	3
सूमिका	4
मनोद्गार	9—65
डॉ० श्रीमाली के पत्र अपनी पत्नी के नाम	66—98
डॉ० श्रीमाली का पत्र श्रुतु के नाम	99—107
पत्र—डॉ० श्रीमाली के नाम	108—128

साधना और सिद्धियाँ

नगलामुखी साधना	131—139
तारा साधना	140—147
कर्ण पिशाचिनी साधना	148—156
अष्ट लक्ष्मी साधना	157—165
सम्मोहन साधना	166—175
अघोर गौरी साधना	176—179
काल ज्ञान मन्त्र	180—183
अनग साधना	184—187
दत्तात्रेय साधना	188—191

प्रसिद्ध भविष्यवक्ता, प्रकाण्ड ज्योतिषी व हस्तरेखा विशेषज्ञ
डा० नारायणदत्त श्रीमाली कृत एक अन्य प्रकाशन



भारतीय हस्तरेखा ज्ञान का एक अनूठा एनसाइक्लोपीडिया

बृहद् हस्तरेखा शास्त्र

आप खुद अपने हाथ की रेखाएँ पढ़कर अपना भविष्यफल जान सकते हैं। किसी पण्डित अथवा ज्योतिषी के पास जाने की आवश्यकता नहीं है। इस पुस्तक में पहली बार हस्तरेखा का प्रैक्टिकल ज्ञान चित्रों सहित समझाया गया है।

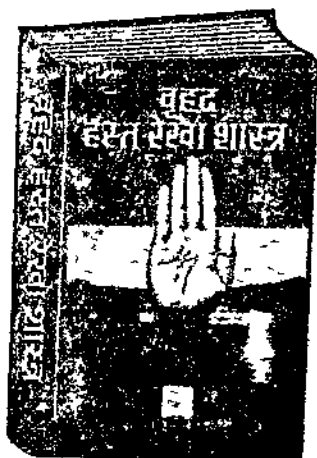
पुस्तक की कुछ अभूतपूर्व विशेषताएँ—

★ हस्तरेखा के 240 विभिन्न योगों का पहली बार प्रकाशन : जैसे—आपके हाथ में धन-सम्पत्ति का योग, पुत्र योग, विवाह योग, अकस्मात् धन प्राप्ति योग, विदेश यात्रा योग आदि हैं या नहीं ? इन सबका चित्रित वर्णन।

★ हस्तरेखा ज्ञान चित्रों द्वारा सिर्फ 15 दिन में सीखिए और अपने व अपने मित्रों के हाथ देखकर भाग्य का हाल बताए।

★ आपके हाथ की रेखाएँ क्या कहती हैं ? कौन-से व्यापार से आपको लाभ होगा ? नौकरी में तरक्की कब तक होगी ? पत्नी कैसी मिलेगी ? प्रेम में सफल होंगे या नहीं ? विवाहित जीवन सुखी होगा या नहीं, कब होगा आदि।

★ आप डाक्टर बनेंगे या इंजीनियर ? नेता बनेंगे या अभिनेता ? लेखक बनेंगे या प्रोफेसर, विदेश यात्रा पर कब जायेंगे ? मन की मशान्ति एवं कष्टों का कब अन्त है ? मुकदमों में जीत होगी या हार ? कर्ज से छुटकारा कब मिलेगा ? गृह-क्लेश कब खत्म होगा ? हत्यादि सैकड़ों प्रश्नों के उत्तर आदि।



सनोद्गार

वात प्रारम्भ करता हूँ, कामाक्ष्या के तांत्रिक सम्मेलन से। इस सम्मेलन की काफी कुछ चर्चा हम लोगो के बीच थी, विशेषकर जो तत्र में विश्वास रखते थे या तांत्रिक क्रियाएँ जानते थे, उनके लिये यह एक अभूतपूर्व अवसर था। जबकि तत्र की आराध्य कामाक्षा स्थान पर तांत्रिक सम्मेलन होने जा रहा था। यद्यपि इसकी चर्चा पत्र-पत्रिकाओं में नहीं थी, परन्तु तत्र के जानने वालों के लिये यह सूचना अनुकूल थी और इसमें भारत के ही नहीं, कुछ विदेशों के भी तांत्रिकों के भाग लेने के बारे में समाचार सुनने को मिले थे।

यह भी सुना था कि इसमें पूरे भारत से विशिष्ट तांत्रिक भाग लेंगे और उन तांत्रिकों के भाग लेने की भी यह शर्त थी कि इसमें केवल वे ही तांत्रिक भाग ले सकते हैं जो कि दस महाविद्याओं में से कोई एक महाविद्या सिद्ध की हों। तत्र के क्षेत्र में यह काफी ऊँचे स्तर की बात होती है। यह शर्त इसलिये रख दी थी जिससे कि विशिष्ट तांत्रिक ही भाग ले सकें, सामान्य तांत्रिकों से प्रागण भर जाय और व्यर्थ में ही समय बीत जाय, आयोजक ऐसा नहीं चाहते थे।

यह आयोजन न तो राजनीतिक स्तर पर था और न सामाजिक स्तर पर। इसके पीछे न किसी सेठ साहूकार का धन था और न कौतूहल आदि। इसका एकमात्र उद्देश्य यही था कि बदलते हुए परिवेश में तांत्रिकों का समाज को क्या योगदान हो सकता है, और समाज उनसे किस प्रकार से लाभ उठा सकता है?

इसके अलावा यह भी ज्ञात करना था कि वास्तव में उच्चकोटि के कितने तांत्रिक हैं। इसके लिये उन माध्यमों को चुना था जिनका सम्पर्क सुदूर हिमालय स्थित योगियों से और तांत्रिकों से भी था।

यहाँ जब मैं 'तांत्रिक' शब्द का प्रयोग कर रहा हूँ तो इसका तात्पर्य केवल तांत्रिक ही नहीं अपितु मन्त्र शास्त्र के जानने वाले व्यक्तियों या विद्वानों से भी है। मेरे कहने का तात्पर्य यह है कि इस सम्मेलन में उच्च कोटि के मन्त्र शास्त्री और तत्र शास्त्रियों को बुलाना था और परस्पर विचार विमर्श करना था।

लेने के लिये उत्सुक थे। अधीरता से उस तारीख की प्रतीक्षा कर रहे थे जब यह तांत्रिक सम्मेलन होना था। कुल १० दिन का यह सम्मेलन था और उन सभी तांत्रिकों से सम्पर्क स्थापित किया जा चुका था जो इस क्षेत्र में विशिष्ट थे या अति विशिष्ट थे। इसके साथ-ही-साथ उन मन्त्र शास्त्रियों या मन्त्र के जानने वालों और विद्वानों को भी बुलाया था जिन्होंने उस क्षेत्र में अभूतपूर्व कार्य किया हो, मन्त्रों के माध्यम से जो कुछ भी करने में समर्थ हो।

उन सभी योगियों और साधकों से सम्पर्क किया जा चुका था, जिन्होंने अपने जीवन का बहुत बड़ा हिस्सा उस विशिष्ट साधना में बिताया हो, और यह प्रसन्नता की बात थी कि भारत के अति विशिष्ट मन्त्र-मर्मज्ञों और तांत्रिकों ने भाग लेने की स्वीकृति दी थी। इनमें पगला बाबा, स्वामी चैतन्य मूर्ति, कृपालु स्वामी, बाबा भैरवनाथ, स्वामी प्रेत बाबा, अधोरी गिरजानन्द, अधोरी खर्परानन्द भारती, त्रिजटा अधोरी, आदि कई ऐसी विशिष्ट विभूतियाँ थीं जिनके बारे में लाखों करोड़ों बार सुना था, जिनके साथ आश्चर्यजनक कहानियाँ जुड़ी हुई थीं जो विशिष्ट सिद्धियों के स्वामी थे। इस प्रकार के तांत्रिकों, मांत्रिकों और अधोरियों का सम्मेलन एक स्थान पर हो, यह हम जैसी के लिये आश्चर्यजनक था।

इस सम्मेलन में निर्णय यही था कि इसमें वाममार्गी और दक्षिण मार्गी साधना से सम्पन्न साधक एक स्थान पर एकत्र हो और अपनी सिद्धियों का प्रदर्शन करें। सिद्धियों को प्राप्त करने में जो बाधाएँ आ रही हैं, उनका निराकरण किस प्रकार से हो तथा इन साधनाओं और सिद्धियों का लाभ जनमानस को किस प्रकार से मिल सके, इसका निर्णय और विचार इस सम्मेलन में होता था।

इसके अलावा पिछले पाँच हजार वर्षों में यह पहला अवसर था जबकि इस प्रकार के अति विशिष्ट योगी, साधक, तांत्रिक और मांत्रिक एक स्थान पर एकत्रित हुए। इसके लिये कुछ विशिष्ट योगियों ने जो प्रयत्न किया था वह वास्तव में ही सराहनीय था, और उनके ही प्रयत्नों से यह असंभव कार्य संभव हो सका था। उनके प्रयत्नों से ही सुदूर हिमालय स्थित साधकों से सम्पर्क हो सका था और उनको उस सम्मेलन में भाग लेने के लिये तैयार किया जा सका था।

प्रयत्न यह था कि इस सम्मेलन की चर्चा ज्यादा न हो, क्योंकि इससे पूरे भारत से लोग दर्शनों के लिये या मिलने के लिये एकत्र हो जाते और इससे अव्यवस्था-सी उत्पन्न हो जाती, फलस्वरूप जिस उद्देश्य के लिये यह सम्मेलन बुलाया जा रहा था, वह उद्देश्य ही अपने आप में समाप्त हो जाता। इसके अलावा साधकों ने भी यह शर्त लगा दी थी कि हम जन-साधारण के सामने न तो जाना चाहते हैं और न अपना या अपनी सिद्धियों का प्रदर्शन करना चाहते हैं।

उनकी बात अपने स्थान पर सही भी थी और यह उचित ही था कि जिस उद्देश्य के लिये यह अभूतपूर्व सम्मेलन हो रहा है, उसकी गरिमा बनी रह सके, साध-

ही-साथ इसमें जो महापुरुष या विशिष्ट साधक भाग ले रहे हैं उनकी प्रतिष्ठा में किसी प्रकार की आंच न आवे तथा किसी प्रकार की न्यूनता न रहे ।

पिछले बीस वर्षों में मैंने तत्र के क्षेत्र में घुसने का प्रयत्न किया है और तारा साधना को, जो कि दस महाविद्याओं में से एक है सिद्ध किया है, और सफलतापूर्वक प्रयोग भी किया है, इससे मैं अपने आपको कुछ समझने लग गया था । सही कहूँ तो अपने आपको बहुत कुछ समझने लग गया था, परन्तु इस सम्मेलन में भाग लेने पर ज्ञात हुआ कि मैं कुछ भी नहीं हूँ या यो कहूँ कि भाग लेने वाले साधकों के पास जो सिद्धियाँ हैं उनके सामने मैं नगण्य हूँ, धूल के कण जितना भी मेरा महत्त्व नहीं है । यदि मैं सैकड़ों वर्षों तक उनके चरणों में बैठकर ज्ञान प्राप्त करूँ तब भी उनकी थाह नहीं आ सकती ।

इस तारा साधना की कड़ी परीक्षा देने के बाद ही मुझे इस सम्मेलन में भाग लेने की अनुमति मिली थी । मैं सोचता हूँ कि पिछले बीस वर्षों में भी मैं जो नहीं जान सका था वह इस सम्मेलन से जान पाया । यह मेरे पूर्व जन्म और इस जन्म का पुण्य प्रभाव ही था, जिससे कि मैं इस सम्मेलन में भाग लेने का अधिकारी माना गया । यह मेरी पीढ़ी का सौभाग्य है कि इस पीढ़ी में इस प्रकार का अभूतपूर्व सम्मेलन हो सका और हम अपनी आँखों से इस सम्मेलन को देख सके । वह मेरे पुण्यों का उदय था जिससे कि मैं उन विशिष्ट साधकों को देख सका जिनके तो दर्शन ही दुर्लभ हैं । यदि तत्र और मत्र इस देश में जीवित हैं तो केवल इस प्रकार के विशिष्ट साधकों के बल पर ही । ये साधक नहीं, मत्र-तत्र के मूर्तमत रूप हैं ।

जीवन के प्रारम्भ में मैं कानून का विद्यार्थी रहा था और मैंने उच्च श्रेणी में कानून की परीक्षा पास की थी, पर मेरे द्वारा एक बार एक गलत फैसला हो जाने के कारण एक निर्दोष को फाँसी की सजा मिल गई । यह मेरी गलती थी । उस गलती से मैं इतना अधिक दुखी रहा कि मैंने अपने पद से त्यागपत्र दे दिया, और हमेशा के लिये नौकरी छोड़ दी । इसके बाद पत्रकारिता के क्षेत्र में मैंने भाग लिया और अपनी पैनी दृष्टि तथा निर्मम लेखनी से मैं शीघ्र ही पत्रकारों के बीच लोकप्रिय हो गया और पत्रकार-सच का अध्यक्ष भी कई वर्षों तक रहा, अंग्रेजों का जमाना होने के कारण मुझ पर उनकी क्रुद्ध दृष्टि शुरू से ही थी, अतः उन्होंने मेरे चारों तरफ घेराबन्दी प्रारम्भ की । इस घेरावदी में मैं जकड़ा जाऊँ इससे पहले ही मैंने सत्तार छोड़ दिया, शादी मैंने की नहीं थी इसलिये घरबार की चिन्ता थी नहीं । निश्चय यही कर लिया था कि आगे का पूरा जीवन साधना में ही व्यतीत करना है, और अज्ञात रहस्यों की खोज में जीवन बिता देना है ।

प्रारम्भ से ही मैं कुतर्की रहा हूँ, सहज ही मैं किसी से प्रभावित होता नहीं, बातचीत में मेरी पत्रकारिता तुरन्त सामने आ जाती है और जिस व्यक्ति से बातचीत करता हूँ, अपने पैसे प्रश्नों से उसके व्यक्तित्व की चीरफाड़ इस प्रकार से कर लेता हूँ

सामने आ जाता है, और इस प्रकार मैं उसके व्यक्तित्व से प्रभावित होने की अपेक्षा वह मेरे व्यक्तित्व से प्रभावित हो जाता है ।

साधु जीवन धारण करने के बाद मैंने इस आदत के कारण कई शत्रु बना लिये । जो भी विशिष्ट साधु या तान्त्रिक होता उससे मिलता और दो चार घंटों में ही मैं उसकी कलाई खोल देता । उसके भीतर जो कमजोरी होती वह मैं उसके सामने ही उजागर कर देता और इस प्रकार मेरी पत्रकारिता मुझे सहज ही किसी पर विश्वास नहीं करने देती ।

आज भी मैं इस आदत को छोड़ नहीं पाया हूँ । कानून का विद्यार्थी और अधिकाारी होने के नाते बहुत अच्छी तरह से जिरह कर लेता हूँ और सामने वाले के अस्त्रों से ही उसको घायल कर लेता हूँ, साथ-ही-साथ मेरी पत्रकारिता सामने वाले को पूरी तरह से नगा करके रख देती है, इसलिये मैं अपने जीवन में बहुत ही कम लोगों से प्रभावित रहा हूँ और किसी के प्रति मेरे मुह से 'गुरु' शब्द तो निकल ही नहीं पाया है, क्योंकि जब तक अत्युच्च साधना से सम्पन्न व्यक्तित्व नहीं मिलता, तब तक मैं उसके सामने नतमस्तक हो ही नहीं सकता । पिछले बीस वर्षों में मैं सैकड़ों साधुओं, मांत्रिकों और तान्त्रिकों के सम्पर्क में आया और उनसे सीखने को मिला, परन्तु प्रभावित किसी से भी नहीं हो पाया । एक प्रकार से मुझे ये सभी खण्ड-खण्ड रूप में अवश्य मिले, उनका खण्डित व्यक्तित्व अवश्य देखने को मिला परन्तु पूर्ण व्यक्तित्व मेरे सामने कोई आया ही नहीं और इसीलिये मेरा सिर किसी के चरणों में पूरी तरह से झुक ही नहीं पाया । जब तक मेरा व्यक्तित्व प्रभावित नहीं होता तब तक मेरे होठ 'गुरु' कह ही नहीं पाते । एक प्रकार से देखा जाय तो मैं पिछले बीस वर्षों में 'गुरुहीन' ही रहा हूँ । यद्यपि इस अवधि में मैंने तत्र की कुछ क्रियाएँ अवश्य सीखी, कुछ लोगों के कार्यों से प्रभावित भी हुआ, कुछ विशिष्ट साधकों के सम्पर्क में भी आया, भूत बाबा से मैंने विशिष्ट तान्त्रिक साधना-तारा साधना-भी सीखी और उनके प्रति अपने मन में अनुकूल धारणायें भी बनाई, परन्तु हर बार मेरी पत्रकारिता बीच में आ जाती, और इस वजह से उनके खण्ड व्यक्तित्व से तो प्रभावित हो जाता, परन्तु अभी तक कोई ऐसा पूर्ण व्यक्तित्व नहीं मिला जो वास्तव में ही उच्च कोटि की क्रियाओं से सम्पन्न हो और मेरे लिये गुरु पद का अधिकारी हो ।

कुछ तान्त्रिक अवश्य मिले, वे वाम मार्गी थे पर उन्हें 'दक्षिण मार्ग' साधना का क ख ग भी ज्ञात नहीं था, कुछ ऐसे साधक भी मिले जो तत्र की दक्षिण मार्गी साधना में निष्णात थे, पर वाम मार्ग साधना में शून्य थे ।

कुछ हठ योगी भी मिले जिनके पास कुछ सिद्धियाँ थी पर वे सामान्य सिद्धियाँ थी । साधारण नागरिक उससे प्रभावित हो सकते हैं पर मेरे प्रभावित होने का तो प्रश्न ही नहीं था । कुछ मन्त्र शास्त्री मिले जो मन्त्रों के माध्यम से अलौकिक कार्य करने में सक्षम थे, परन्तु इसके अलावा उनके पास कुछ भी नहीं था ।

मेरे कहने का तात्पर्य यह है कि यह मेरे जीवन का दुर्भाग्य ही है कि इतना भटकने के बाद भी कोई पूर्ण साधक नहीं मिला, जिसे दक्षिण मार्ग और वाम मार्ग के तन्त्र का पूर्ण ज्ञान हो और जो इस क्षेत्र का अधिकारी माना जाता हो, साथ ही जिसे मन्त्र का भी उच्च फोर्टि का ज्ञान हो और अघोरी साधना या गौरक्ष साधना के बारे में विशेष जानकारी हो। एक ही व्यक्तित्व में जब तक इन सारे गुणों का समावेश नहीं होता तब तक वह पूर्ण सक्षम कहलाने में समर्थ नहीं हो सकता और जब तक ऐसा व्यक्तित्व मेरे सामने नहीं आता तब तक मेरा सिर किसी के चरणों में नहीं झुक सकता था।

ऐसी स्थिति में जब मैंने इस तांत्रिक सम्मेलन की चर्चा सुनी और यह ज्ञात हुआ कि इसमें विशिष्ट साधक भाग लेंगे तो मन में आशा का संचार हुआ कि शायद इनमें कोई ऐसा पूर्ण सक्षम व्यक्तित्व मिल सके, जिसके सामने मेरा सिर नमन हो या जो वास्तव में ही इन सारी क्रियाओं का जानकार हो।

मैं चाहता यह था कि ऐसे व्यक्तित्व को केवल 'ध्योरिटिकल' ज्ञान ही नहीं हो अपितु 'प्रेक्टिकल' ज्ञान भी हो, जिससे कि वह अपने ज्ञान का योगदान दूसरों को दे सके, समाज कल्याण में सहायक हो सके।

इन बीस वर्षों में मैंने यह भी अनुभव किया कि जिनके पास भी ऐसा ज्ञान होता है उनकी मनोवृत्तियाँ दूषित हो जाती हैं, या उनका स्वभाव पूरी तरह से अकबड किसम का हो जाता है, बात करने में उन्हें कुछ भी होश नहीं रहता, या तो वे नष्ट में चूर रहते हैं, जिससे अपने अलावा उनको दीन-दुखिया की भी खबर नहीं रहती या वे इतने एकान्तवासी हो जाते हैं कि दूसरों से बात करना भी हेठी समझते हैं। इसके अलावा ऐसे व्यक्ति क्रोधी और मन्त्रमूर्तों के मालिक होते हैं। ऐसे लोग किस समय क्या कर बैठेंगे इसको कल्पना ही नहीं की जा सकती। सीधे-सीधे बात करते-करते वे गालियाँ देने लग जाते हैं और कई लोगों को तो मैंने मारपीट करते हुए भी देखा है।

मेरी धारणा यह है कि ज्ञान ज्ञान होता है, चाहे वह किसी भी क्षेत्र का हो, ज्ञान के साथ नम्रता और व्यावहारिकता आवश्यक है, पर जो तांत्रिक अघोरी या मांत्रिक है उनका नम्रता से दूर का भी वास्ता नहीं रहता, वे अपने ही खयालों में मस्त, क्रोधी, अहंकारी, और अपने आपको सर्वोच्च समझते हैं, बिना नम्रता के पूर्ण व्यक्तित्व संभव नहीं है, नम्रता के साथ यदि साधना होती है, तो वह व्यक्तित्व अपने आप में ही विशिष्ट बन जाता है।

मुझे कहीं पढ़ी हुई घटना स्मरण आ रही है। एक बार सारे ऋषि-मुनियों की सभा हुई, और उसमें यह वाद-विवाद हुआ कि देवताओं में सर्वश्रेष्ठ देवता कौन है?

इसका भार भृगु ऋषि पर डाला और यह विचार हुआ कि ऋषियों में भृगु ऋषि श्रेष्ठ हैं अतः वे किसी भी प्रकार से किसी भी युक्ति से यह ज्ञात करे कि ब्राह्म, विष्णु, महेश इन श्रेष्ठतम देवताओं में से, सर्व श्रेष्ठ देवता कौन हैं, जिसने कि उनको सर्वोच्चता प्रदान की जा सके।

भृगु ऋषि सबसे पहले ब्रह्म लोक में गए। वहां ब्रह्मा जी सृष्टि रचना में सलग्न थे। वे वहां जाकर दो क्षण तो उनके कार्य को देखते रहे और जब ब्रह्मा ने ऋषि को प्रणाम किया तो किसी भी प्रकार का आशीर्वाद या उत्तर नहीं दिया, इसके विपरीत उन्होंने लातो के प्रहार से जो कुछ उन्होंने निर्माण किया था उसको तोड़-फोड़ दिया। यही नहीं अपितु इतना अधिक नुकसान कर दिया कि कई वर्षों की मेहनत बरबाद कर दी। ऐसा देखकर ब्रह्मा को क्रोध चढ़ आया और ऋषि को पीटने के लिए उद्यत हो गए।

ऋषि ने जब ब्रह्मा के क्रोध से तमतमाते हुए चेहरे को देखा और अनुभव किया कि किसी भी समय हाथापाई हो सकती है तो वे वहां से खिसक गए।

ब्रह्म लोक से निकल कर भृगु सीधे कैलाश पर्वत की ओर गए, जहां महादेव का निवास स्थान था। वहां पर महादेव तथा पार्वती दोनों बातचीत में सलग्न थे।

ऋषि ने आव देखा न ताव और सीधे पार्वती के कंधे पर चढ़ गए। पार्वती हड़बड़ाकर उठ खड़ी हुई तो ऋषि फिर उचक कर उनके कंधे पर बैठने की कोशिश करने लगे।

प्रलयकारी महादेव ने जब अपनी आंखों के सामने अपनी पत्नी के साथ इस प्रकार का अभद्र व्यवहार होते देखा तो उनके क्रोध का पारावार न रहा और तुरन्त त्रिशूल उठा कर भृगु को मारने के लिए उनकी तरफ झपटे।

क्रोध से उनकी आंखें लाल हो रही थीं और जितने वेग से उन्होंने त्रिशूल उठाया या वह आश्चर्यजनक था, भृगु की मृत्यु निश्चित थी, पर वे इससे पूर्व ही वहां से भाग खड़े हुए। कुछ दूरी तक तो महादेव ने पीछा किया, पर जितनी तेजी से भृगु भागे थे वह आश्चर्यजनक था।

वहां से भृगु सीधे क्षीरसागर पहुंचे, जहां शेषनाग की शैया पर भगवान विष्णु लेटे हुए थे और लक्ष्मी उनके चरण दवा रही थी।

भृगु ने जब ऐसा देखा तो तुरन्त जोरो की एक लात विष्णु के सीने में दे मारी। यह देखकर शेषनाग क्रोध से फुफकार उठा और उसके फनों से ज्वालाए-सी निकलने लगी, लक्ष्मी एक बार तो हतप्रभ हो गई, पर दूसरे ही क्षण उनका चेहरा क्रोध से लाल अगारे की तरह दहक उठा।

पर इधर ज्यों ही भृगु की लात विष्णु के सीने पर लगी, त्योंही विष्णु शांत चित्त से उठ बैठे और भृगु के चरणों को पकड़ कर दबाने लगे, बोले—आपके चरण अत्यन्त कोमल हैं, और मेरा सीना अत्यन्त कठोर, लात मारने से आपके चरणों को अवश्य ही चोट पहुंची होगी, इसका मुझे दुख है और इसके लिए क्षमा प्रार्थी हूँ, कहते-कहते उनकी आंखों में आसू छलछला आए।

भृगु उनकी नम्रता के सामने परास्त हो गए। उन्होंने कहा—“भ्रभु मैं आपकी परीक्षा ले रहा था, वास्तव में ही देवताओं में आप सर्वोपरि हैं।”

उत्तम चित्तवृत्ति सर्वोत्तम नहीं हो सकती जो विद्वान् या ज्यादा ज्ञातवान् हो।

अपितु वह व्यक्तित्व महान है जिसमें विद्वत्ता के साथ-साथ नम्रता भी हो।

मैंने इस प्रकार के व्यक्तित्व नहीं देखे, जिनमें विशिष्ट ज्ञान के साथ-साथ नम्रता भी हो। तांत्रिक और मांत्रिक क्षेत्र में मैंने विशिष्ट योगी और साधक तो अवश्य देखे, परन्तु उनमें नम्रता का सर्वथा अभाव था। उनमें अहं की प्रवृत्ति जरूरत से ज्यादा थी, वे प्रशसाप्रिय थे। उनको इससे आत्मतुष्टि मिलती थी। नम्रता और विद्वत्ता इन दोनों का संगम मुझे देखने को ही नहीं मिला, खास तौर से इस तांत्रिक क्षेत्र में।

अतः जब मैंने इस प्रकार के विशिष्ट तांत्रिक सम्मेलन की चर्चा सुनी और यह भी सुना कि इसमें सुदूर हिमालय स्थित साधक भी भाग लेंगे और इसमें केवल वे ही तांत्रिक या मांत्रिक भाग ले सकेंगे जिनमें विशिष्ट ज्ञान हो या विशिष्ट तांत्रिक क्षमता हो तो मन में आशा का संचार हुआ कि शायद इस बार मेरी इच्छा पूर्ण हो जाय। हो सकता है इस बार मुझे खण्ड-खण्ड व्यक्तित्व के स्थान पर पूर्ण व्यक्तित्व से मिलना हो जाय, यह भी हो सकता है कि कोई ऐसा व्यक्ति या व्यक्तित्व मिल जाय जिसके सामने मेरा सर्वांग नतमस्तक हो सके और जिसे मैं गुरु शब्द से सम्बोधित कर सकूँ।

यह तो मेरी धारणा थी ही कि मेरा गुरु वही हो सकेगा जिसमें सभी प्रकार की तांत्रिक और मांत्रिक क्रियाओं का समावेश हो या इस क्षेत्र में उच्चतम ज्ञान से सम्पन्न हो, साथ ही वह ऐसा व्यक्तित्व हो जिसमें ज्ञान के साथ-साथ नम्रता का समावेश हो, वह केवल अधोरी योगी, या तांत्रिक ही नहीं हो अपितु सही शब्दों में मानव भी हो। मैं ऐसे ही मानव की खोज में था जो कि पूर्ण हो, क्योंकि गुरु 'पूर्णता' का ही पर्याय होता है।

इन सब बातों से मैं रोमांचित था और इसीलिए मैंने इस सम्मेलन में भाग लेने का निश्चय किया था, परन्तु जब यह ज्ञात हुआ कि इसमें वही भाग ले सकता है जो उच्च साधना से सम्पन्न हो, अर्थात् तांत्रिक क्षेत्र में दस महाविद्याओं में से किसी एक विद्या को सिद्ध किया हो या वाम मार्गी साधना में 'श्यामा साधना' सफलतापूर्वक सम्पन्न की हो, या गोरक्ष साधना में अधोर तंत्र के साथ पीताम्बरी साधना सम्पन्न हो, या तांत्रिक क्षेत्र में सजीवनी विद्या में निष्णात हो, इस प्रकार के उन्होंने कुछ माप दण्ड, रख दिए थे और जो व्यक्ति इनमें से किसी एक माप दण्ड पर खरा उतरता उसी को इस सम्मेलन में भाग लेने का अधिकार दिया जाता।

मैंने भूत बाबा से तारा साधना सफलतापूर्वक सम्पन्न की थी और उसमें दक्षता भी थी, अतः मैंने क्रिया रूप में तारा साधना सम्पन्न करके दिखा दी तो आयोजकों ने मुझे प्रवेश पत्र दे दिया। यह प्रवेश पत्र पाना ही मेरे लिए सौभाग्य का सूचक रहा, क्योंकि इसकी वजह से मैं इस सम्मेलन में भाग ले सका, विशिष्ट तांत्रिकों के सम्पर्क में आ सका और जो मेरा लक्ष्य था, जीवन की जो इच्छा थी वह पूरी हो सकी, अर्थात् मुझे ऐसा गुरु प्राप्त हो सका जो मेरे मानस में अंकित था।

तात्रिक सम्मेलन के प्रारम्भ होने के एक दिन पहले मैं सयोजक स्वामी अभयानन्द जी से मिला। वे अत्यन्त व्यस्त थे और व्यस्तता से भी ज्यादा परेशान थे। उनकी परेशानी का मूल कारण यह था कि इतने बड़े आयोजन में किसी प्रकार की न्यूनता न रह जाय और उससे भी बड़ी चिन्ता की बात यह थी कि इसमें भाग लेने वाले सभी विशिष्ट साधक थे और उन सभी का स्वभाव अपने आप में अलग था। कुछ तत्रिकों के बारे में तो यह भी सुना था कि वे साक्षात् दुर्वासा के अवतार हैं, क्रोध तो उनकी नाक पर रहता है और थोड़ा-सा भी अनुचित या उनके मनोनुकूल न होने पर वे कुछ भी कर बैठते हैं, इस दृष्टि से सयोजक यदि परेशान थे तो इसमें कोई आश्चर्य की बात नहीं।

इस सम्मेलन के मूल में भूर्भुआ बाबा थे, जो कि मूलतः आध्यात्मिक सन्त हैं परन्तु इसके साथ-ही-साथ विशिष्ट तत्रिक भी है, उनकी ख्याति भारत में ही नहीं, पूरे विश्व में है। तत्र के क्षेत्र में और अध्यात्म के क्षेत्र में उनका नाम अत्यन्त श्रद्धा के साथ लिया जाता है। विशिष्ट व्यक्तियों को एक स्थान पर एकत्र करने में उनका सबसे बड़ा योगदान रहा है और इस सम्मेलन को सम्पन्न करने के मूल में उनकी ही प्रेरणा और परिश्रम रहा है।

मैं सम्मेलन के एक दिन पहले प्रयत्न करके भूर्भुआ बाबा से मिला तो वे शान्त चित्त थे, फिर भी उनका मस्तिष्क अत्यन्त क्रियाशील था। मैंने इस सम्मेलन के बारे में जब कुछ जानना चाहा तो उन्होंने कहा कि यह मेरे जीवन की कसौटी है। यदि यह दस दिन का सम्मेलन भली प्रकार से सम्पन्न हो गया तो मैं इसे अपने जीवन की श्रेष्ठ उपलब्धि ही मानूँगा।

भूर्भुआ बाबा के बारे में काफी कुछ सुना रखा था और उनके बारे में जो कुछ सुना था प्रत्यक्ष में देख कर सुखद अनुभूति ही हुई थी। मूलतः वे तत्रिक हैं परन्तु पिछले कई वर्षों से उन्होंने अपना जीवन अध्यात्म के क्षेत्र में विकसित किया है। इनकी आयु के बारे में काफी मतभेद है। कुछ तत्रिक इनकी आयु ६०० वर्षों से भी ज्यादा बताते हैं और उनके पास इसका प्रमाण भी है, परन्तु देखने पर वे ६०-७० वर्ष से ज्यादा आयु के नहीं लगते, शान्त और गम्भीर मुखमण्डल, पैनी दृष्टि, और तेजस्वी व्यक्तित्व। उनसे बातचीत करते समय सुखद अनुभूति ही होती है। वे जो भी बात करते हैं उसके पीछे उनका ठोस ज्ञान और दीर्घ अनुभव रहता है। वास्तव में ही वे अपने क्षेत्र के अत्यन्त तेजस्वी व्यक्तित्व हैं।

दूसरे दिन प्रातः १० बजे के लगभग सम्मेलन प्रारम्भ हुआ। सम्मेलन के चारों तरफ भूर्भुआ बाबा के शिष्य मुस्तैदी से चौकस थे, और उनको सख्त हिदायत थी कि केवल वे ही व्यक्ति इस सम्मेलन में प्रवेश करें जिनके पास अनुमति पत्र हो, जिस व्यक्तित्व के बारे में सन्देह हो उसे वही पर रोक लिया जाय, और नव तक अन्दर जाने की अनुमति न दी जाय, जब तक कि बाबा स्वयं जाच पड़ताल न कर लें। इस सबंध में सामने वाला व्यक्ति चाहे कितने ही उच्च कोटि का हो, चाहे कितना ही गरिमा-

पूर्ण हो, प्रयत्न यही किया गया था कि सभी के पास परिचय पत्र हो जो इसमें भाग लेने वाले थे। कई तांत्रिक तो प्रात ही आये थे, फिर भी व्यवस्था में किसी प्रकार की न्यूनता नहीं थी, और सभी को परिचय पत्र जाँच पड़ताल करके दे दिए गए थे।

सम्मेलन में लगभग ४०० तांत्रिक और मांत्रिक इकट्ठे थे और वास्तव में ही वे सभी एक दूसरे से बढ-चढकर थे, कोई किसी से अपने आपको न्यून नहीं समझ रहा था। सभी विशिष्ट साधनाओं से सम्पन्न थे और अपने क्षेत्र में दक्ष तथा लब्ध-प्रतिष्ठ व्यक्तित्व से सम्पन्न थे।

मैंने धार्मिक ग्रन्थों में ही शिवजी की वारात के बारे में पढ़ा था, परन्तु इस सम्मेलन को देख कर मैंने अनुमान लगा लिया कि शिवजी की वारात में किस प्रकार के व्यक्ति सम्मिलित हुए होंगे। सम्मेलन में ४०० से कुछ ज्यादा ही साधु, योगी, अचोरी, तांत्रिक आदि थे और सभी की वैषम्यता अपने आप में विचित्र थी।

अधिकांश लगेटी लगाए हुए थे और पूरे शरीर पर भभूत मली हुई थी। कुछ की जटाएँ इतनी लम्बी थी कि चलने पर पीछे जमीन पर घिसटती थी, कुछ ने तो लोहे की लगेट ही लगा रखी थी। सम्मेलन में सौ से ऊपर साधु ऐसे भी थे जो सर्वथा निर्वस्त्र थे। कुछ तांत्रिकों ने हड्डियों की माला पहन रखी थी। एक तांत्रिक ने तो गले में ११ नरमुण्डों की माला ही पहनी हुई थी। किसी-किसी तांत्रिक के गले में विचित्र मणियों की माला थी तो कुछ साधु इतने अधिक कपड़े पहने हुए थे कि उनका सारा शरीर उन कपड़ों में छिप गया था। एक साधु ने कमर पर नरमुण्डों की कर-धनी बांध रखी थी।

इसमें कुछ भैरविया भी थी, संभवतः उनकी संख्या १५ से २० के बीच में थी। इसमें कुछ तो पूर्णतः वृद्ध दिखाई दे रही थी पर एक दो भैरविया ऐसी भी थी जो अत्यन्त सुन्दर और तेजस्वी थी और उनकी आयु २० से २५ वर्ष के बीच होगी, भ्रुवें आश्चर्य था कि इस छोटी आयु में उन्होंने किस प्रकार से इतनी कठिन क्रियाओं को सम्पन्न कर लिया होगा, परन्तु तांत्रिकों की गति विचित्र है, हो सकता है उन्होंने कुछ क्रियाओं के माध्यम से अपनी आयु को बांध रखा हो और अपने जीवन को अक्षुण्ण बनाए रखा हो।

कुछ हठ योगी भी थे। एक हठ योगी का पाव इतना अधिक फूला हुआ था कि उसका घेरा छ फुट से ज्यादा ही होगा। कुछ हठ योगी विशालकाय थे, एक दो हठ योगी के हाथ लकड़ी की तरह ठूठ हो गए थे। इस सम्मेलन में काफी अचोरी भी थे जो कि पूर्णतः निर्वस्त्र थे और देखने में भीमकाय राक्षस की तरह अनुभव हो रहे थे, उनके शरीर पर जलरत से ज्यादा मल जमा हुआ था और जब वे पास से गुजरते तो दुर्गन्ध का एक भभका सा अनुभव होता, परन्तु वे इन सबसे देखकर थे और अपनी ही धुन में मस्त थे।

इनमें कुछ विशिष्ट वाम मार्गी तांत्रिक भी थे जिनको यदि सामान्य जन देखले, तो वेहोश हो जाय। उनका शरीर अपने आप में भयकर था, लाल आँखें, डरावना

चेहरा, और भीमकाय शरीर, ऐसा लग रहा था जैसे वे राक्षस हों। उनको देखकर मन में भय का सा संचार होता था और रोंगटे खड़े हो जाते थे।

स्वामी अभयानन्द जरूरत से ज्यादा व्यस्त थे और प्रत्येक को यथोचित स्वागत दे रहे थे, भूर्भुआ बाबा बराबर इस बात पर नजर रखे हुए थे कि किसी भी साधक के मन को ठेस न पहुंचे और वे उपयुक्त स्थान ग्रहण कर लें।

इसमें आशा से अधिक तांत्रिकों और मांत्रिकों ने भाग लिया और जिनके बारे में हम आश्चर्य के साथ सुनते रहते थे। उनको प्रत्यक्ष देखकर एक भयमिश्रित आश्चर्य हो रहा था। वास्तव में यह भूर्भुआ बाबा का ही कमाल था कि वे इस प्रकार के विशिष्ट साधकों को एक स्थान पर एकत्र कर पाए।

सम्मेलन में मा कृपाली भैरवी, आनन्दा भैरवी, पिशाच सिद्धियों की स्वामिनी देवुल भैरवी आदि के भाग लेने से सम्मेलन में विशेष प्रसन्नता अनुभव हो रही थी। इसके साथ-ही-साथ पगला बाबा, स्वामी देवहुर बाबा, कृपालुस्वामी, बाबा भैरवनाथ, खर्परानन्द भारती, स्वामी गिरजानन्द, अघोरी, विरघा स्वामी, त्रिजटा अघोरी, आदि ऐसी विभूतियां थी, जो कि अपने आप में अन्यतम थी, जिनका नाम विश्वविख्यात है और तांत्रिक लोगो के लिए ये व्यक्तित्व स्मरणीय है। इन्होंने इस क्षेत्र में अद्भुत सिद्धियां प्राप्त की हैं, हमारी पीढ़ी का यह सौभाग्य है कि हम लोगो के बीच इस प्रकार के विशिष्ट व्यक्तित्व हैं, जिन्होंने अपने ज्ञान से इस पीढ़ी को ऊंची उठाने में सहायता दी है, विशेष रूप से मैं रोमांचित था कि अपने जीवन में मैं इन सारी विभूतियों को एक स्थान पर देख सका अन्यथा यदि मेरा पूरा जीवन भी बीत जाता तब भी मैं इन सारी विभूतियों के दर्शन नहीं कर सकता था। मैं ही नहीं मेरे जैसे अधिकांश तांत्रिक रोमांचित थे, आह्लादित थे, आश्चर्यचकित थे।

सम्मेलन के प्रारम्भ में भूर्भुआ बाबा ने विशिष्ट वाणी में इस सम्मेलन के बारे में बताया और अत्यधिक प्रसन्नता अनुभव की कि उनके कहने से सभी साधक एक स्थान पर एकत्र हुए। उन्होंने बताया कि पिछले पांच हजार वर्षों में यह पहला अवसर है जबकि इस प्रकार का सम्मेलन हो सका है। कुछ साधक सिद्धाश्रम से भी आये हैं यह मेरे लिए अत्यन्त गौरवपूर्ण उपलब्धि है।

उन्होंने आगन्तुक तांत्रिकों, मांत्रिकों, योगियों, साधकों, हठयोगियों और अघोरियों से विनम्रतापूर्वक निवेदन किया कि वे शान्त चित्त से इस सम्मेलन को सफल बनाने में योगदान दें। सभी साधक अपने आप में अन्यतम हैं इसलिए परस्पर वादविवाद हो जाना स्वाभाविक है, पर इस प्रकार वादविवाद से व्यर्थ में समस्याएं पैदा होंगी, एक दूसरे पर तांत्रिक-प्रहार होंगे और व्यर्थ में ही शक्ति का अपव्यय होगा, अतः जहां तक हो सके वे अपने क्रोध को सीमित रखें और एक दूसरे को ज्ञान देने में उदारता बरतें।

उन्होंने देश की परिस्थिति पर भी संक्षिप्त प्रकाश डाला, साथ ही उन्होंने कुछ

प्रकट किया कि पिछले ३०० वर्षों का समय तंत्र के क्षेत्र में अन्धकार-युग ही कहा जाएगा, जबकि इस विद्या पर भीषण प्रहार हुए हैं और इस साधना को केवल मात्र मारक-विद्या मान ली गई है। तंत्र का नाम लेते ही जन साधारण भयभीत हो जाता है, उनके मानस में यह धारणा बन गई है कि तांत्रिक केवल किसी को मार सकता है या दुख पहुंचा सकता है। उनकी धारणा के अनुसार मोहन यथोक्ति, उच्चाटन आदि क्रियाएँ ही तंत्र हैं, जबकि तंत्र इससे कहीं ऊँचे स्थान पर स्थित है और इससे पूरे विश्व का कल्याण हो सकता है।

यह विद्या हमारे पूर्वजों की भांती है तथा इस क्षेत्र में पूरा विश्व भारत की तरफ ताक रहा है। उनको इस क्षेत्र में जब भी ज्ञान मिलेगा तो वह भारत की तरफ से ही मिल सकता है, पर धीरे-धीरे नकली तांत्रिक समाज में घुस गए हैं जिन्होंने धमत्कार दिखाने को ही तंत्र मान लिया है और इस प्रकार वे जहाँ तंत्र का अहित कर रहे हैं वहीं दूसरी ओर जन साधारण को गुमराह भी कर रहे हैं।

ऐसी स्थिति में तांत्रिक यदि अन्तर्मुखी बन कर रह जाता है तो यह बहुत बड़ी भूल है। वे देश के निर्माण में रचनात्मक योगदान दे सकते हैं, इस क्षेत्र की जो विशिष्ट क्रियाएँ हैं वे धीरे-धीरे लुप्त होती जा रही हैं, जल-गमन, वायु गमन, परकाय प्रवेश, आदि क्रियाएँ कुछ साधकों के पास ही रह गई हैं और वे साधक जनमानस से इतने दूर हो गए हैं कि उनसे ये विद्याएँ प्राप्त करना संभव ही नहीं रहा है, उनकी काया के साथ-ही-साथ इस प्रकार की विद्याएँ भी समाप्त हो जाएँगी और हमारा देश एक बहुत बड़ी निधि से वंचित हो जाएगा।

देश की सेवा केवल राजनीति के माध्यम से ही संभव नहीं है, अपितु कई ऐसे क्षेत्र भी हैं जिनके माध्यम से देश सेवा और जन सेवा हो सकती है, इस प्रकार के क्षेत्रों में तंत्र और मन्त्र सर्वोपरि है, जब तक इन विद्याओं के प्रति जो भ्रामक धारणाएँ जनमानस में फैली हुई हैं वे दूर नहीं होंगी तब तक इन साधनाओं के प्रति आस्था जनमानस में नहीं हो सकेगी।

उन्होंने तांत्रिकों, मानिकों और साधकों को आह्वान किया कि वे जनसाधारण से अपने आपको सम्पर्कित करें और अपने ज्ञान को इस प्रकार से समाज में वितरित करें जिससे कि सामान्य साधक भी लाभ उठा सकें।

भूमिवा बाबा के बारे में सभी लोग श्रद्धावान्त हैं क्योंकि उनका व्यक्तित्व अपने आप में विशिष्ट रहा है और उन्होंने अपने जीवन में इस क्षेत्र में अद्वितीय कार्य किया है। बाबा के भाषण को सभी लोग ध्यान चित्त से सुन रहे थे। एक-दो बघोरियो ने इसका प्रतिवाद भी किया और बीच में कुछ कहने के लिए व्यग्र भी दिखाई दिए, पर पास के साधकों द्वारा उनको जबरदस्ती विठा दिया गया जिससे वे और ज्यादा बिफर गये और भाषण में क्रोध प्रदर्शन हेतु खड़े रहे।

भाषण की समाप्ति के साथ बाबा ने कहा कि सम्मेलन के लिए सभापति चुना जाय और ऐसे व्यक्ति को सभापति बनाया जाय जो कि किसी एक ही क्षेत्र में

निष्णात न हो अपितु उसकी गति सभी प्रकार की विचारों में समान रूप से हो। तांत्रिक और मानिक समाज में वह बृद्ध नहीं कहलाता जो कि वायु से बृद्ध होता है अपितु वह बृद्ध कहलाता है जो कि ज्ञान बृद्ध होता है।

एक साधक ने भूर्भुवा बाबा से ही नियेदन किया कि आप अध्यात्म पद को सम्भाल लें पर अब तक जो दो अधोरी सम्मेलन में पड़े थे उन्होंने इसका दटकर विरोध किया। उन्होंने कहा कि भूर्भुवा केवल तांत्रिक हैं मानिक नहीं हैं, अतः मानिकों की जिज्ञासाओं का समाधान वह नहीं कर सके।

भूर्भुवा बाबा ने स्वयं इस बात का अनुमोदन किया और वे एक तरफ बैठ गए। स्वामी कृपाचार्य ने मा कृपालु भैरवी का नाम अध्यात्म पद के लिए रखा पर त्रिजटा अधोरी ने इसका विरोध किया, क्योंकि यह केवल भैरवी है और अन्य कर्तव्यों पर धरी नहीं उतर सकती, उन्होंने चैलेंज भी दिया कि यदि भैरवी मेरी साधना का सामना कर लें तो मैं उन्हें अध्यात्म मान सकता हूँ, पर मा भैरवी ने इस चैलेंज को स्वीकार नहीं किया।

कुछ साधकों ने पगला बाबा से नियेदन किया, पर उन्होंने स्वयं इस तथ्य को स्वीकार किया कि मैं तांत्रिक अवस्था हूँ पर वाममार्गी साधना का अभ्यास मैंने नहीं किया है अतः मैं अध्यात्म पद के लिए उपयुक्त नहीं हो सकता। इसके बाद कुछ अन्य नामों पर भी चर्चा हुई, पर अन्य लोगों ने उनका भी विरोध किया और सभी ने एक घंटे भर की इस बहस में कोई निर्णय नहीं हो सका कि कौन व्यक्ति इस सभा का संचालन करे।

कुछ अधोरियों ने हठ योगी स्वामी प्रेत बाबा का नाम सुझाया तो एक तांत्रिक ने धड़े होकर प्रेत बाबा को चुनौती दे दी कि यदि वह मेरी कृत्या का सामना कर लें तो मैं उनको सभापति स्वीकार कर सकता हूँ, साधन-ही-साधन उन्होंने यह भी बता दिया कि मैंने सहारिणी कृत्या सिद्ध कर रखी है।

कृत्या अपने आप में पूर्णतः मारक प्रयोग है और कहते हैं कि जब शकर ने दक्ष का यज्ञ विध्वंस किया था तो उन्होंने कृत्या का ही सहारा लिया था। ऊँचे-ऊँचे-ऊँचा तांत्रिक भी कृत्या के प्रयोग से घबराता है और उसका सामना नहीं करता, क्योंकि कृत्या प्रयोग के बाद सामने वाला साधक एक क्षण भी जीवित नहीं रह सकता। कृत्या स्वयं उस साधक को समाप्त कर देती है, दक्ष अपने आप में विशिष्ट ऋषि एवं अन्यतम तांत्रिक थे, परन्तु वे भी कृत्या का सामना नहीं कर पाये थे, यद्यपि उन्होंने यज्ञ को बचाने में अपनी सारी सिद्धियों का प्रयोग कर लिया था पर वे सिद्धियाँ कृत्या के सामने निरुपाय हो गई थी।

मैंने सुन रखा था कि सत्सार में कुछ तांत्रिक ही ऐसे जीवित हैं जो कृत्या सिद्ध करना जानते हैं या सिद्ध करके उसका प्रयोग कर सकते हैं। जब उन तांत्रिक ने कृत्या का नाम लिया तो मैं चौकन्ना हो गया। वास्तव में ही उस समय उनका चेहरा लाल भग्न हो रहा था और वे किसी भी समय प्रयोग करने में आमादा थे,

उनके चेहरे पर कठोरता और दृढ़ता स्पष्ट दिखाई दे रही थी ।

यदि कृत्या का प्रयोग होता तो सामने वाला व्यक्ति ही नहीं आसपास के लोग भी हताहत होते, फिर भले ही वे कितने ही बड़े तांत्रिक या साधक हो । भूमिबा बाबा ने इस खतरे को एक क्षण में भाप लिया और उन्होंने उस साधक से शान्त रहने की प्रार्थना की और कृत्या का प्रयोग न करने की याचना की ।

कृत्या प्रयोग में भी सहारिणी कृत्या सर्वाधिक उग्र और विनाशकारी होती है । इसके बारे में काफी कुछ पढ़ रखा था, परन्तु ऐसा व्यक्तित्व नहीं मिला था जो कि इस साधना को जानता हो । आज जब उन्हें देखा तो मन में सुखद आश्चर्य भी हुआ कि अभी तक विश्व में कृत्या प्रयोग करने वाले साधक जीवित हैं ।

कृत्या का समाधान कृत्या से ही सम्भव है । साधक यदि सहारिणी कृत्या का प्रयोग करे तो सामने वाले का बचाव तभी सम्भव है जबकि वह सहारिणी कृत्या का प्रयोग जानता हो और इस प्रयोग को खेचरी कृत्या के माध्यम से नष्ट कर सकता हो । जैसा कि मैंने सुन रखा था इस प्रकार के साधक बहुत कम रहे हैं ।

पगला बाबा ने क्षमा याचना की और उन्होंने अध्यक्ष प्रद स्वीकार करने में असमर्थता प्रकट की, साथ ही उन्होंने निवेदन भी किया कि कृत्या का प्रयोग इस सम्मेलन में न करें, अन्यथा काफी विध्वंस और सहार हो जाएगा । पगला बाबा ने कृत्या प्रयोग के बारे में अनभिज्ञता भी स्वीकार की ।

बाद में मुझे मालूम हुआ कि पगला बाबा को चैलेंज देने वाले धूर्जटा अघोरी थे । धूर्जटा अघोरी के बारे में बहुत कुछ सुन रखा था । यह भी सुन रखा था कि वे नई सृष्टि रचना विधि भी जानते हैं । पुराणों में पढ़ा था कि विश्वामित्र ने ब्रह्मा के कार्य से असन्तुष्ट होकर नई सृष्टि-रचना आरम्भ कर दी थी, इससे पूरे देव समाज में खलबली मच गई थी और जब देवताओं और ऋषियों ने विश्वामित्र से प्रार्थना की, तभी उन्होंने नवीन सृष्टि रचना कार्य बन्द किया था ।

मैंने धूर्जटा अघोरी के बारे में बहुत पहले सुन रखा था । तब मन में यह साध था कि शायद कभी इस विराटकाय व्यक्तित्व के दर्शन होंगे, पर आज जब मैंने उन को देखा तो आश्चर्यचकित रह गया । यद्यपि कृत्या के प्रयोग को जानने वाले उस सम्मेलन में और भी साधक थे जिनमें त्रिजटा अघोरी, देवदुर बाबा, आदि के नाम उल्लेखनीय हैं, पर वे शान्त रूप में बैठे रहे ।

कुछ-कुछ ऐसा अनुभव होने लगा था कि यह सम्मेलन शायद ही पार पड़े, जबकि इसके शीघ्रपण में ही वाघाए आ रही हैं । यह तो मेढकों को एक तराजू पर रखकर तोलना था । वास्तव में ही इन साधकों को और उनके अह को सन्तुष्ट करना अत्यन्त कठिन था । क्योंकि सभी साधक अपने आप में विशिष्ट व्यक्तित्व साधनाओं से सपन्न थे और प्रत्येक का अह अपने आप में प्रबल था । कोई भी किसी से दबने वाला नहीं था, कोई भी किसी को अपने से उच्च मानने के लिए तैयार नहीं था ।

इस हो-हल्ले में दो-तीन नाम और सुनाये गए, परन्तु कुछ लोगों ने उनका

प्रबल विरोध किया और चैलेंज भी दिया, फलस्वरूप उनके नामों पर पूरी तरह से विचार नहीं हो सका ।

एक राय यह भी बनी कि इस सम्मेलन में कोई भी सभापति न बने और सभी अपने आपको सभापति ही मानकर कार्य आगे बढ़ावें । परन्तु कुछ साधकों ने इसका प्रबल प्रतिरोध किया । उनका आग्रह था कि बिना सभापति के संचालन सही रूप में नहीं हो सकेगा और सभी अपने तरीके से बोलेंगे जिससे एक बात दूसरा नहीं सुन सकेगा और इस प्रकार उन पर सही प्रकार से नियंत्रण नहीं हो सकेगा ।

व्यवस्था और मर्यादा बनाये रखने के लिए यह आवश्यक है कि सभापति का



चुनाव हो। उनका तर्क यह भी था कि यदि हम सभापति के नाम पर एकमत नहीं हो सकते तो अन्य विषयों पर एकमत कैसे हो सकेंगे ?

इस सारे वाद-विवाद में दोपहर का एक बज गया तब मध्याह्न-साधना का समय अनुभव कर भूर्भुआ बाबा ने सुझाव रखा कि कुछ साधक नियमित रूप से मध्याह्न-साधना करते हैं, अतः यह बैठक इस समय स्थगित की जाती है और चार बजे जब हम सब एकत्र हो तब इस विषय पर पुनः विचार कर लें और सभापति का चयन हो जाय।

उन्होंने यह भी सुझाव दिया कि यदि सभापति के नाम पर सभी एकमत न हो सकें तो प्रतियोगिता हो जाय और जो अपने आपको सर्वश्रेष्ठ सिद्ध करे वह सामने आवे और अन्य साधकों के चैलेंज को स्वीकार कर अपनी श्रेष्ठता सिद्ध करे जिससे कि उसे सभापति पद दिया जा सके।

भूर्भुआ बाबा के इस सुझाव के साथ ही प्रातः कालीन बैठक हो-हल्ले के साथ स्थगित हो गई। मैं आश्चर्यचकित भी था और दुःखी भी था। आश्चर्यचकित इसलिए था कि इस सम्मेलन में विभिन्न साधनाओं से सम्पन्न साधक हैं, किसी एक ही विषय का सम्मेलन हो तो श्रेष्ठता ज्ञात की जा सकती है पर जब विभिन्न साधनाओं से सम्पन्न साधक हो तो सर्वोपरि व्यक्ति का चयन कठिन हो जाता है। क्योंकि जो तांत्रिक क्षेत्र में सर्वोपरि हो वह मन्त्र के क्षेत्र में भी श्रेष्ठ हो यह आवश्यक नहीं है, या यदि कोई व्यक्ति तन्त्र और मन्त्र के क्षेत्र में सर्वोपरि हो तो वह गोरक्ष साधना या अघोर साधना में भी निष्णात हो यह सम्भव नहीं है। ये सभी साधनाएँ एक-दूसरे से सर्वथा विपरीत हैं और अपने आप में कष्टकर हैं, अतः इन सभी क्षेत्रों में एक ही व्यक्ति निष्णात हो ऐसा कम देखने में आया है। यद्यपि इस पृथ्वी पर असम्भव नाम की कोई वस्तु नहीं है, फिर भी प्रातः कालीन बैठक में जिस प्रकार से चैलेंज दिये जा रहे थे और चैलेंज आते ही सामने वाला व्यक्ति जिस प्रकार से निस्तेज हो जाता था उसको देखते हुए सभी क्षेत्रों में निष्णात या विशिष्ट व्यक्तित्व सामने आ जाय ऐसा असम्भव नहीं तो कठिन अवश्य लग रहा था।

गोष्ठी के बाद भी सभी साधक उग्र थे और कुछ तांत्रिक और धाममार्गी साधक तो अत्यन्त ही क्रोध की मुद्रा में थे कि उनके रहते हुए अन्य साधना में निष्णात व्यक्ति सभापति बन जाय ऐसा कैसे सम्भव है ? उन्होंने यह भी मत स्पष्ट कर दिया कि यदि हम पर किसी व्यक्ति को सभापति के रूप में थोपा गया तो हम किसी भी प्रकार का प्रयोग उसके विरुद्ध करने में हिचकिचाएंगे नहीं, या तो वह उस प्रयोग से अपने आपको बचाए या समाप्त हो, दो में से एक ही रास्ता हो सकता है, इस प्रश्न पर काफी गरमागरमी थी और लोग काफी क्रोध की मुद्रा में थे।

इस मध्याह्न-विश्राम में मेरी पत्रकारिता प्रवृत्ति जाग गई थी और मैंने कुछ विशिष्ट साधकों से जिज्ञासा भी की थी कि क्या कोई ऐसा व्यक्तित्व सामने आ जाएगा जो कि निर्विवाद रूप से श्रेष्ठ हो तो मैंने पाया कि कोई भी अपने आप में स्पष्ट नहीं

था, परन्तु सभी इस भावना में अवश्य थे कि जो भी सभापति बनेगा उसे कठिन परीक्षा में से अवश्य ही गुजरना पड़ेगा। यह भी स्पष्ट था कि सभापति वही हो सकेगा जो सभी विषयों में श्रेष्ठ होगा और जिसकी सभी क्षेत्रों में गति होगी, इस वाद-विवाद में किसी की मृत्यु हो जाए ऐसा असम्भव नहीं था।

मैंने भूर्भुआ बाबा से भी यह जिज्ञासा रखी तो वे शान्तचित्त थे। उन्होंने कहा कि इस प्रकार के सम्मेलन में ऐसा सब कुछ होना स्वाभाविक है। सभी अपने-अपने क्षेत्रों में अद्वितीय हैं और वे किसी अन्य को अपने ऊपर सहज ही हावी नहीं होने देंगे, फिर भी मुझे विश्वास है कि सायकालीन बैठक में अवश्य ही सभापति की समस्या का समाधान हो सकेगा।

मैं इस अवसर को हाथ से नहीं जाने देना चाहता था, अतः अधिक-से-अधिक हठयोगियों और तांत्रिकों से मिलना चाहता था और उनसे जानना चाहता था। मैंने यह अनुभव किया कि वास्तव में सभी व्यक्तित्व अपने-अपने क्षेत्र में अद्वितीय थे और उनके पास साधनाओं का, क्रियाओं का और विशिष्ट ज्ञान का भण्डार था। उन्होंने अपना पूरा जीवन इस कार्य में लगा दिया था। जो भी व्यक्तित्व मेरे सामने आता वह अपने आपमें अप्रतिम अनुभव होता, कोई भी किसी से किसी प्रकार से न्यून नहीं था।

चार बजे सायकालीन बैठक प्रारम्भ हुई। सभी के चेहरे तनावपूर्ण थे, सभी के चेहरे पर उत्सुकता थी और सभी अपनी-अपनी कलाओं को, विद्याओं को, साधनाओं को व्यक्त करने के लिए उतावले थे।

सम्मेलन के प्रारम्भ में भूर्भुआ बाबा ने दुःख प्रकट किया कि हम प्रातः-कालीन बैठक में किसी एक नाम पर सहमत नहीं हो सके यह स्वाभाविक था, क्योंकि यह सम्मेलन केवल तांत्रिक सम्मेलन ही नहीं है, अपितु इसमें अन्य विद्याओं के भी श्रेष्ठतम जानकार हैं, अतः इस प्रकार के मतभेद स्वाभाविक हैं, फिर भी मैं आप सब लोगों से निवेदन करता हूँ कि वे किसी एक व्यक्ति के नाम पर सहमत हो और ऐसी प्रक्रिया अपनाई जाय जिससे कि सभापति का चयन सही रूप में हो सके।

उन्होंने एक प्रक्रिया का सुझाव भी दिया कि सम्मेलन में कोई विशिष्ट व्यक्ति कोई ऐसा नाम सुझावे जो सभी क्षेत्रों में निष्णात हो। यदि उनके ध्यान में ऐसा व्यक्तित्व हो तो उनका नाम सभा के सामने रखे और सभा उस पर विचार करे। इसके लिए सभी स्वतन्त्र हैं और वे अपने तरीके से चुनौती दे सकते हैं, परन्तु यदि सामने वाला व्यक्ति चुनौती स्वीकार न करे तो व्यर्थ में उस पर प्रयोग न करें, अन्यथा कुछ भी अघटित घटना घटित हो सकती है।

भूर्भुआ बाबा के बैठते ही कई लोग एक साथ उठ खड़े हुए और कई नामों की ध्वनि कानों में आई, परन्तु हो-हल्ला कुछ इतना अधिक हो रहा था कि कुछ भी सुनाई नहीं दे रहा था। इसी बीच त्रिजटा अघोरी अपने स्थान से उठ खड़े हुए और उन्होंने जोरों से सभी को शान्त रहने की हुकार दी।

उनकी आवाज़ अपने आप में भीषण थी और कुछ ऐसा अनुभव हुआ कि

जैसे बम फट गया हो। उस ध्वनि में बाकी पारी ध्वनिया दब गई और सभा में एक प्रकार से सन्नाटा-सा छा गया।

त्रिजटा अघोरी का व्यक्तित्व अपने आप में विशालकाय और अद्भुत था। लम्बा-चौड़ा डीलडौल, भयंकर और लाल मुख आँखें और सारे शरीर पर काले बाल इस प्रकार से आच्छादित थे कि उसको देखकर ही मन में भय का संचार होता था।

यो भी त्रिजटा अघोरी के बारे में काफी कुछ सुन रखा था कि तांत्रिक क्षेत्र में वे सर्वोपरि हैं। उनके पास कुछ ऐसी विशिष्ट सिद्धियाँ हैं जो कि दूसरे तांत्रिकों के लिए दुर्लभ हैं, 'मृत सजीवनी तंत्र' के वे एकमात्र साधक हैं और इसीलिए उनका नाम तंत्र के क्षेत्र में आदर के साथ लिया जाता है।

उनका व्यक्तित्व अपने आप में विशाल और भयानक था। ऐसा लग रहा था जैसे कोई भीमकाय व्यक्तित्व उठ खड़ा हुआ हो। बड़ा सिर, उद्दीप्त उन्नत ललाट, बड़ी-बड़ी विशाल रक्तिम आँखें, सिर पर लम्बे बाल और उन बालों की तीन श्रेणियाँ चोटी की तरह गुथी हुई थी, सम्भवतः इसीलिए उनका नाम त्रिजटा पड़ गया हो। ललाट पर सिन्दूर का बड़ा-सा गोल तिलक और शरीर पर वे व्याघ्रचर्म लपेटे हुए थे।

त्रिजटा को देखने का यह पहला ही अवसर था, परन्तु कई तांत्रिकों के द्वारा इनके बारे में सुन रखा था कि ये पूरे वक्रे को एक ही क्षण के में तोड़कर उसका सारा खून पी लेते हैं, यह भी सुना था कि विशालकाय जैसे को ये एक मुट्ठिका प्रहार में ही समाप्त कर देते हैं, यह भी सुना था कि ये अत्यन्त क्रोधी हैं और क्रोध में कुपः भी कर गुजरते हैं, एकान्त प्रिय हैं और किसी दुर्गम पहाड़ी पर भव्या एकान्तवास करते हैं। यह भी सुना था कि शैरव के ये श्रेष्ठ साधक हैं और तंत्र के क्षेत्र में इनका मुकाबला कोई अन्य नहीं कर सकता।

इसलिये जब उस सभा में खड़े होकर त्रिजटा ने हुकार भरी तो वह हुकार कुछ ऐसी थी जैसे शेर ने तृप्त हुकार ली हो। उनकी आवाज से सारे लोग चुप हो गए और केवल उनकी ही आवाज सभा में गूँजती रही।

उन्होंने कहा कि इस प्रकार समय व्यर्थ में जा रहा है और यदि समय का इसी प्रकार अपव्यय करना है तो फिर मैं पुनः अपने स्थान पर जाता हूँ, क्योंकि केवल वादविवाद से कुछ भी हल होना सम्भव नहीं है। भूमिवा वावा के इस कथन से मैं सहमत हूँ कि पृथ्वी में असम्भव नाम का कोई शब्द नहीं है इसलिए सभापति का चयन एक मत से हो जाय तो ज्यादा उचित रहेगा, और यह भी बात सही है कि इस सम्मेलन में सभी विद्याओं के साधक एकत्र हैं, अतः उसी व्यक्ति का चयन किया जाए जो इन सभी विद्याओं में निष्णात हो। जहाँ तक मैं समझता हूँ कि इस प्रकार के वादविवाद से समस्या का समाधान सहज ही सम्भव नहीं है, पर मेरे दिमाग में एक नाम है और उसके पीछे ठोस कारण है, मैं सभापति पद के लिए श्रीमाली का नाम प्रस्तुत करता हूँ, परन्तु मेरा प्रस्ताव थोड़ा हुआ नहीं है, इसके पीछे ठोस कारण है, मैंने इस व्यक्तित्व को परखा है। हमने तंत्र के क्षेत्र में भूत सजीवनी विद्या प्राप्त से भीनी है। वहाँ से मैंने भी लभ्ये

कई साधनाएँ प्राप्त की हैं, जो सामान्य रूप से अगम्य हैं, मेरी राय में इस सम्मेलन के सभापति के रूप में उनका चयन सर्वसम्मत होगा, इसमें कोई सन्देह नहीं।

त्रिजटा की आवाज समाप्त होते ही चारों तरफ से इतना अधिक कोलाहल मचा कि कुछ भी सुनाई देना संभव नहीं रहा। मैं स्वयं तब के क्षेत्र में २० साल से काम कर रहा था और नगर, गांव आदि के अलावा हिमालय के सुदूर स्थानों पर भी भटका था, पर श्रीमाली का नाम सुना ही नहीं था। त्रिजटा के मुँह से जब उनका नाम प्रस्तावित हुआ तो मैं स्वयं आश्चर्यचकित रह गया कि यह कौनसा व्यक्तित्व है जिसकी चर्चा अभी तक मेरे कानों में नहीं आई थी। यदि त्रिजटा ने किसी का नाम प्रस्तावित किया है तो वह व्यक्तित्व जरूर अपने आप में अन्यतम होगा।

मेरी तरह संभवतः और भी कई साधक आश्चर्यचकित थे और वे श्रीमाली को देखने के लिये उत्सुक थे कि यह कैसा नाम है जिसके पीछे न तो कोई स्वामी है और न कोई बाबा आदि का विशेषण।

भूर्भुआ बाबा ने भी इस प्रस्ताव का अनुमोदन किया। उन्होंने कहा मैं व्यक्तिगत रूप से श्रीमाली जी से परिचित हूँ, यद्यपि मेरा उनका साथ ज्यादा नहीं रहा है, फिर भी कुछ पर्व के अवसर पर मैंने जो कुछ देखा है उससे मेरी धारणा बलवती बनी है कि श्रीमाली जी इस पद के लिए सर्वथा योग्य हो सकते हैं।

भूर्भुआ बाबा के बैठते ही त्रिजटा अधोरी ने अपने पास बैठे हुए एक व्यक्ति को उसका हाथ पकड़कर सभा में खड़ा कर दिया। कई आँखें उनकी तरफ केन्द्रित हो गईं। मैं सहज ही विश्वास नहीं कर सका कि जो व्यक्ति खड़ा है वह इतना बड़ा साधक, तांत्रिक या मान्त्रिक हो सकता है। मुझे किसी भी कोने से यह व्यक्तित्व असाधारण नहीं लगा। न तो उसकी विचित्र वेशभूषा थी, न विशालकाय डील-डौल, और न कुछ ऐसा ही लग रहा था जिससे कि मेरी आत्मा इस तथ्य को संभव मान ले कि यह व्यक्तित्व असाधारण है।

लम्बा और ऊँचा कद, उन्नत ललाट, छोटी पर पंनी आँखें, और चेहरे पर पूर्ण आत्मविश्वास की झलक। शरीर पर धोती और कुर्ता तथा करीने से बाल सवारे हुए यह व्यक्तित्व जो त्रिजटा के पास खड़ा था वह तांत्रिक की अपेक्षा गृहस्थ ज्यादा लग था। पहली बार मैंने जब उन्हें देखा तो मैं आश्चर्यचकित था कि इस सम्मेलन में इस गृहस्थ को कैसे प्रवेश की स्वीकृति दे दी है, परन्तु जब इस व्यक्तित्व को भूर्भुआ बाबा के द्वारा अनुमोदित सुना तो कुछ विश्वास करनेवाला पड़ा कि यह व्यक्तित्व अपने आप में असाधारण हो सकता है।

परन्तु इस बीच तीन-चार अधोरी एक साथ उठ खड़े हुए और उन्होंने प्रवल प्रतिवाद किया। उनमें से एक अधोरी अत्यन्त ही विशालकाय और डरावनी मुख मुद्रा से युक्त था और उसके हाथ में खप्पर था जिसमें कुछ बोटियाँ भरी हुई थीं। वह बीच-बीच में उनको चवाता भी जाता था। बोलते समय उसके मुँह से थूक उछलता था और आँखें इतनी डरावनी थीं कि सहज ही उन आँखों से आँखें मिलाने की हिम्मत नहीं

हो रही थी। बाद में मुझे ज्ञात हुआ कि उसका नाम भैरुबा अघोरी था।

भैरुबा अघोरी ने जोरों से एक बात का प्रतिवाद किया और कहा कि मैंने श्रीमाली का नाम आज तक नहीं सुना। मुझे यह व्यक्ति कुछ भी अच्छा नहीं लग रहा है। सबसे पहले अघोर पन्थ की तरफ से मैं चैलेन्ज दे रहा हूँ और यदि यह मेरा चैलेन्ज स्वीकार कर आघात सहन कर लेगा तभी मैं इसको अपना सभापति स्वीकार करूँगा।

अभी भैरुबा अघोरी अपनी बात समाप्त कर ही नहीं पाया था कि सभा के पीछे की पक्ति से एक साधु उठ खड़ा हुआ जिसके पूरे शरीर पर भस्मत मली हुई थी और सिर की जटाएँ इतनी लम्बी थी कि चलने पर जमीन पर घिसटती थी, आखें भयंकर और चेहरे पर क्रूरता स्पष्ट रूप से झलक रही थी, उसने छूटते ही गालियों की बौछार शुरू कर दी और कहा कि मेरे जीते जी अन्य कोई सभापति बनने का अधिकारी नहीं हो सकता, मैंने कृत्या सिद्ध की है और मेरी कृत्या का जो समापन कर देगा वही सभापति बन सकेगा, अन्यथा मैं उसको खड़े-खड़े ही राख की ढेरी बना दूँगा। श्रीमाली क्या है? किस खेत की मूली है? यह अपने आपको समझता क्या है और इसके साथ-ही-साथ उसके मुँह से गालियों की बौछार इस भीषण वेग से हो रही थी कि सारी सभा में सन्नाटा छा गया।

मेरी आखें एक बार उस बाबा को देख रही थी और दूसरी बार श्रीमाली को परख रही थी, पर मैंने देखा कि उनके चेहरे पर किसी प्रकार की कोई शिकन या भय की रेखा तक नहीं थी, अपितु वहाँ पर एक आत्मविश्वास की झलक दिखाई दे रही थी। मैंने यह भी अनुभव किया कि इन दोनों व्यक्तियों के सामने किसी अन्य तांत्रिक को बोलने की हिम्मत नहीं हो रही थी, क्योंकि अभी-अभी जो बाबा उठ खड़े हुए थे वे कपाली बाबा थे और यह सुना था कि इन्होंने चौंसठ कृत्याएँ सिद्ध कर रखी हैं और उनका प्रयोग किसी भी क्षण करने में समर्थ हैं, अतः दूसरे तांत्रिक स्वभावतः ही कपाली बाबा से घबराते थे और यदि कुछ अन्य तांत्रिकों ने कृत्या प्रयोग सीखी भी होगी तो उन्होंने एक या दो कृत्या से ज्यादा सिद्ध नहीं की होगी।

त्रिजटा उठ खड़ा हुआ। क्रोध से उसका चेहरा तमतमाया हुआ था। उसने कपाली बाबा तथा भैरुबा अघोरी के चैलेन्ज को स्वीकार करते हुए कहा कि कपाली बाबा का चैलेन्ज मैं तो स्वीकार करने में समर्थ नहीं हूँ परन्तु श्रीमाली अवश्य ही चैलेन्ज को स्वीकार करेंगे और समुचित उत्तर देंगे। मुझे उन पर और उनके ज्ञान पर पूरा भरोसा है। मुझे यह भी ध्यान है कि उन्होंने मन्त्र के क्षेत्र में सर्वोच्चता प्राप्त की है और वे विश्वविख्यात योगीराज सच्चिदानन्द के प्रिय शिष्य हैं, साथ-ही-साथ निखिलेश्वरानन्द के रूप में उन्होंने सभी प्रकार की कृत्याएँ सिद्ध की हैं और इस नाम से सभी तांत्रिक समुदाय परिचित हैं, इन्होंने अपना नाम गृहस्थ में जाने पर बदला है।

भूर्मुबा बाबा ने भी इस समस्या का निराकरण जल्दी-से-जल्दी हल करने के लिए प्रार्थना की, और उन्होंने उपाय सुझाया कि मंच पर श्रीमाली जी खड़े हो जाते हैं और आप में से तीन या पाँच साधक उनको चैलेन्ज देकर उनकी परीक्षा ले सकते

हैं। ऐसा कहते-कहते भूर्भुआ बाबा ने श्रीमाली जी का हाथ पकड़कर उन्हें मंच पर लाकर खड़ा कर दिया।

इस बीच अधोरियो और तात्रिको के बीच काफी गहमा-गहमी चल रही थी, परन्तु जब उन्हें यह ज्ञात हुआ कि श्रीमाली जी का पूर्व नाम निखिलेश्वरानन्द ही था तो कई साधक शान्त हो गये, क्योंकि इस नाम से वे पूर्णतः परिचित थे और उनकी सिद्धियों के बारे में भी उन्होंने काफी कुछ सुन रखा था। मा कृपाली भैरवी यह कहते हुए सुनी गई कि इस सभा में अब इनसे बढकर और कोई साधक नहीं है, इनका सामना जो भी करेगा वह व्यर्थ में अपना अपमान ही कराएगा।

अधोरियो ने तथा तात्रिको ने खड़े होकर एक स्वर से कहा कि हमारी तरफ से कपाली बाबा नियत हैं और सभापति का चयन अब इन दोनों में से ही होना है। वे दोनों परस्पर अपनी सिद्धियों के माध्यम से निर्णय कर लें कि कौन सर्वश्रेष्ठ है? क्योंकि हमारी राय में कपाली बाबा के समान ऊँचा और श्रेष्ठ तात्रिक और कोई नहीं है।

भैरुआ अधोरी ने भी इसी तथ्य की पुष्टि की कि कपाली बाबा और श्रीमाली जी में परस्पर सघर्ष हो जाय और इन दोनों में जो जीत जाएगा वही इस सभा का सभापति बन सकेगा।

तब तक कपाली बाबा उठ खड़े हुए थे और वही खड़े-खड़े उन्होंने चैलेन्ज दिया कि यह वच्चा है, और मेरे पहले ही प्रहार से समाप्त हो जाएगा, इसलिये इसी को अधिकार देता हूँ कि यह पहले अपना प्रयोग मुझ पर करे, क्योंकि मेरे प्रयोग करने के बाद तो श्रीमाली नाम का अस्तित्व ही सत्सार से मिट जाएगा। ऐसा कहते-कहते वे जोरो से हस पड़े। ऐसा लग रहा था जैसे कई फटे हुए बास एक साथ खड़खड़ा उठे हो।

पहली बार श्रीमाली जी के मुह से ध्वनि निकली। मैंने देखा कि इतने उग्र वातावरण में भी उनका चेहरा शान्त और सरल था। चेहरे पर किसी प्रकार की उग्रता या क्रोध की मात्रा दिखाई नहीं दे रही थी। उन्होंने वही खड़े-खड़े कपाली बाबा की चुनौती स्वीकार करते हुए कहा कि कपाली बाबा मेरे लिए आदरणीय हैं, परन्तु उनमें जो व्यर्थ का घमण्ड है उसे यदि वे त्याग दें तो ज्यादा उचित रहेगा, क्योंकि उनको मात्र अपनी कृत्याओं पर भरोसा है, पर उनको यह भी ध्यान रखना चाहिए कि दूसरे भी चौसठ कृत्याओं से सम्पन्न हो सकते हैं।

श्रीमाली जी ने साथ-ही-साथ मुस्कराते हुए यह भी कहा कि कपाली बाबा भ्रम में न रहें। उनके प्रहार से या प्रयोग से मेरा कुछ भी नहीं बिगड़ेगा। अस्तित्व भिटने की बात तो अलग है, कपाली बाबा के अलावा भी मैं अन्य सभी अधोरियो और तात्रिको की चुनौती स्वीकार करने के लिए तैयार हूँ। मुझे सभापति पद की इच्छा नहीं है या इस इच्छा के वशीभूत होकर यह सब कुछ नहीं कह रहा हूँ पर व्यर्थ का जो 'अह' कपाली बाबा तथा अन्य तात्रिको और अधोरियो में है, उस अह की चुनौती स्वीकार करने के लिए मैं इस मंच पर उपस्थित हूँ।

इस बीच कई अधोरी उठ खड़े हुए और उन्होंने कहा कि हम में कपाली बाबा

सर्वश्रेष्ठ हैं और उनको परास्त करना हमें परास्त करना है। तांत्रिकों ने भी इसी मत को दोहराया और उन्होंने भी यही कहा कि हमारी तरफ से प्रतिस्पर्धी के रूप में कपाली बाबा हैं।

श्रीमाली जी ने मंच पर भूर्भुआ बाबा को एक स्थान पर बिठा दिया और मंच के बीच में खड़े हो गए। इधर सभा के मध्य में कपाली बाबा के रूप में विशाल और डरावना व्यक्तित्व खड़ा था। दोनों की आपस में कोई तुलना ही नहीं थी। मंच पर एक सीधा सरल सामान्य साधक दिखाई दे रहा था, जबकि सभा के मध्य में कपाली बाबा के रूप में विराटकाय डरावना अहं का मूर्तमय रूप।

मैं अभी तक यह निश्चय नहीं कर पा रहा था कि मंच पर जो व्यक्ति खड़ा है क्या वह कपाली बाबा का सामना कर सकेगा? यह सुना था कि सहारिणी कृत्या का प्रयोग यदि हिमालय पर भी कर दिया जाय तो वह भी रुई की तरह उड़ जाता है, तो फिर यदि कपाली बाबा ने इस प्रकार की कृत्या का प्रयोग इस व्यक्ति पर किया तो यह किस प्रकार से उसका सामना कर सकेगा। यह तो एक क्षण में ही समाप्त हो जाएगा और वास्तव में ही इसका अस्तित्व दिखाई नहीं देगा।

कई तांत्रिक मन-ही-मन प्रसन्न थे कि आज त्रिजटा अचोरी को नीचा देखना पड़ेगा, क्योंकि श्रीमाली का नाम उन्होंने ही प्रस्तावित किया था, अतः श्रीमाली की पराजय परोक्ष रूप से त्रिजटा की ही पराजय थी, उसके साथ-ही-साथ त्रिजटा ने यह भी स्वीकार कर लिया था कि वह सहारिणी कृत्या का प्रयोग नहीं जानता है अतः त्रिजटा की विद्या भी श्रीमाली के लिए सहायक नहीं हो सकेगी।

पूरी सभा का माहोल एक अजीब-सा हो गया था और सभी लोग आतंकित थे कि आज कुछ-न-कुछ होकर रहेगा। अधिकांश लोगों की राय यही थी कि त्रिजटा ने श्रीमाली को बलि का बकरा बना दिया है और कपाली बाबा इसे पहले ही प्रयोग में समाप्त कर देंगे, क्योंकि अधिकांश साधक कपाली बाबा, उनकी सिद्धियाँ और उनके श्रेष्ठ से परिचित थे। उनका सामना करने की हिम्मत किसी में नहीं थी।

तभी श्रीमाली जी ने कपाली बाबा को चैलेन्ज दिया कि आपको जो अहं है कि आपके पहले ही प्रयोग से मैं समाप्त हो जाऊंगा, यह आपका भ्रम है, आप वृद्ध हैं अतः पहला प्रयोग आप ही मुझ पर करें और यह भी मैं आपको स्पष्ट रूप से कह दूँ कि आपके पास ऊँचे-से-ऊँचा जो सहारक अस्त्र हो उसका प्रयोग कर दें जिससे कि आपके मन में मलाल न रहे।

इतना सुनना था कि कपाली बाबा श्रेष्ठ से लाल अगारे की तरह दहक उठे, और गालियों की चौछार के बीच कहा कि तेरी यह हिम्मत कि मुझे ही चैलेन्ज दे, अगर ऐसी ही बात है तो फिर तू सभल।

श्रीमाली जी मंच पर खड़े थे। सारी सभा में सन्नाह-सा छाया हुआ था। उस समय यदि सभा में सुई भी गिरती तो उसकी आवाज भी स्पष्ट सुनाई देती।

कपाली बाबा ने अपना दाहिना हाथ हवा में सहाराया। कुछ समय के बाद

हवा में से ही प्राप्त किये और मुट्ठी बंदकर मंत्र पढ़ना शुरू किया। मैंने अपने पास बैठे एक अधोरी से पूछा कि कपाली बाबा कौन-सा प्रयोग कर रहे हैं तो उसने कापते हुए कहा कि कपाली बाबा 'सहारिणी कृत्या' का प्रयोग कर रहे हैं, और कुछ ही क्षणों के बाद यह कृत्या श्रीमाली को और उसके मंच को निश्चय ही जला देगी। इसका सामना करना ऊँचे-से-ऊँचे तांत्रिक और साधक के लिये भी संभव नहीं है।

तभी जोरों से हुकार की ध्वनि सुनाई दी और ऐसा लगा जैसे भयंकर गर्जना हुई हो। वह गर्जना इतनी भीषण थी कि कानों के पर्दे फटने के लिये आतुर थे। मैंने दोनों कानों में उगलिया डाल दी और देखा कि कपाली बाबा क्रोध से लाल हो रहे थे, उनके मुँह से मंत्र ध्वनि आ रही थी और उनका सारा शरीर लाल सुर्ख हो गया था, तभी उन्होंने अपनी मुट्ठी में बंद सरसों के दाने श्रीमाली की तरफ फेंके और कहा ले, अपनी करनी का फल भुगत।

सैंकड़ों आखें एक बारगी ही मंच पर एकत्र हो गईं। मैंने देखा कि श्रीमाली जी कुछ डगमगाये, वे जिस स्थान पर खड़े थे उससे तीन-चार कदम लड़खड़ाकर पीछे हटे, परन्तु दूसरे ही क्षण वे सहज हो गये और वापस चार कदम भरकर उसी स्थान पर आकर खड़े हो गये जहाँ पहले खड़े थे।

मैंने कपाली बाबा के चेहरे पर देखा तो उनका चेहरा आश्चर्य के साथ कुछ बुझ-सा गया था। उनको यह उम्मीद नहीं थी कि यह साधारण-सा व्यक्ति सहारिणी कृत्या का सामना कर लेगा। शायद श्रीमाली जी के पास इस कृत्या को नष्ट करने की विधि है और उसी की वजह से इसने कृत्या को समाप्त कर दिया है, उनकी आखों में किञ्चित् भय उतर आया था।

श्रीमाली जी शान्त बने रहे। उन्होंने फिर कपाली बाबा को चैलेन्ज दिया और कहा कि मैं आपकी उन्न को देखते हुए आपका सम्मान करता हूँ, परन्तु सिद्धि और साधना के क्षेत्र में अभी आप काफी कमजोर हैं, यद्यपि आपने जिस भीषण वेग से कृत्या का प्रयोग किया था, वह अपने आप में असाधारण था और सहज ही इसके प्रहार को झेलना संभव नहीं था, फिर भी मैं आपके सामने उपस्थित हूँ, अतः आपको फिर अवसर देता हूँ कि आप अपने मन में किसी प्रकार की इच्छा न रखें, और यदि इससे भी बड़ी कोई शक्ति आपके पास हो तो आप उसका भी प्रयोग कर दें।

मा कपाली और श्रीमाली बीच में उठ खड़ी हुई, उन्होंने कहा कि न्याय तो हो गया है अब दूसरी बार कपाली बाबा को अवसर देने की क्या आवश्यकता है। उन्होंने जो कुछ प्रयोग किया है वह मानवता से हटकर है। इस कृत्या का प्रयोग पाँच हजार मील के वेग से एक हजार मन के पत्थर का जो आघात होता है उससे भी कई गुना ज्यादा गहरा आघात इस कृत्या के प्रयोग से सामने वाले पर होता है फिर भी श्रीमाली जी की सौजन्यता है कि वे एक अवसर और दे रहे हैं।

मैं इसमें इतना और जोड़ रही हूँ कि यदि कपाली बाबा हार जायेंगे तो उन्हें श्रीमाली जी का शिष्य होना पड़ेगा और यदि श्रीमाली जी हार गये तो उन्हें कपाली

बाबा का शिष्य होना पड़ेगा। इसके बाद गुरु जो भी आज्ञा देगा वह उस शिष्य को मानने के लिये बाध्य होना पड़ेगा, क्योंकि इस साधना-परम्परा का निर्णय इसी प्रकार से ही होता है।

अधिकांश तांत्रिकों ने मा कृपाली भैरवी के कथन का अनुमोदन किया और उन्होंने कहा कि जो हारेगा उसे शिष्य बनना ही होगा।

इससे कपाली बाबा कुछ विचलित होते हुए नजर आये, परन्तु फिर भी उनके पास संभवतः कई सिद्धियाँ थीं और उनके भरोसे वे कुछ निश्चित भी लग रहे थे।

श्रीमाली जी ने कहा कि सभा ने आपको मेरे विरोधी के रूप में उपस्थित किया है। न्याय तो यही है कि आपके प्रयोग के बाद मैं अपने प्रयोग को अपनाऊँ, परन्तु मैं एक बार फिर आपको अवसर देता हूँ जिससे कि आप भीषणतम शक्ति या साधना का प्रयोग भुझ पर कर सकें। इसके बाद आपको अवसर नहीं मिलेगा, फिर तो मैं केवल एक बार आप पर प्रयोग करूँगा और उसी से हार जीत का निर्णय हो जायगा।

कपाली बाबा ने अपने पास बैठे एक तांत्रिक से कुछ कहा, परन्तु सुनाई नहीं दिया। कपाली बाबा तन कर खड़े हो गये और अपनी जाँघ के पास से भास उधेड़ कर उसमें से छोटी-सी गोली निकाली और उसे दाहिने हाथ की हथेली पर रख कर कहा श्रीमाली! यह तुम्हारे लिये अन्तिम अवसर है, तुमने मुझे क्रोध दिलाकर उचित नहीं किया है। इस बार तेरी मृत्यु निश्चित है।

श्रीमाली जी अविचलित भाव से मंत्र पर खड़े थे और उनके दोनों हाथों की मुट्ठियाँ बंधी हुई थीं। संभवतः वे होठों में ही कुछ मंत्र बुदबुदा रहे थे।

कपाली बाबा ने अपने दाहिने हाथ की हथेली मुँह के सामने रखी। हथेली पर एक सफेद गोली रखी हुई थी और उस गोली को लक्ष्य कर कपाली बाबा मंत्र पढ़ रहे थे। ऐसा लग रहा था जैसे उन्होंने इस बार अपनी सारी शक्ति लगा दी हो। उनका सारा शरीर तन कर ठूठ की तरह हो गया था और रक्त का प्रवाह हथेली की तरफ तेजी से होने लगा था। थोड़े ही समय बाद हथेली के बीचों-बीच से रक्त की बूँदें टपकने लगीं, फिर भी कपाली बाबा का मंत्र जप चालू था और अचानक उन्होंने जोरो से मुट्ठी को कसी और वह गोली श्रीमाली जी की तरफ फेंक दी।

मैंने अपने पास बैठे तांत्रिक से प्रश्न किया कि इस बार कपाली बाबा ने कौनसा प्रयोग किया है तो भय से उसका चेहरा पीला पड़ गया। उसने कहा कि यह 'विष्वस' प्रयोग है और इसके पीछे वाचन भैरव शक्ति प्रयोग कार्य करता है, इसके साथ-ही-साथ इस प्रयोग में चौसठ योगिनियों का भी प्रभाव कार्य करता है, यह प्रयोग सर्वाधिक सहारक और विष्वसक होता है।

मेरी दृष्टि स्वभावतः ही श्रीमाली जी के चेहरे पर जम गई। ऐसा लगा कि जैसे वे लड़खड़ा गये हों। अचानक उन्हें एक सेकण्ड के लिये मंत्र पर बैठते हुए भी देखा, पर दूसरे ही क्षण वे उठकर खड़े हो गये और उन्होंने अपनी आँखें खोल दीं।

परी सभा में दर्शकों की लहर दौड़ गई और त्रिजना अश्वोनी ने दौड़ कर श्रीमाली

जी को अपने कंधे पर उठा लिया। हर्ष में उन्होंने किलकारी की और पुनः मच पड़े उन्हें खड़ा कर अपने स्थान पर जा खड़ा हुआ।

सारी सभा हतप्रभ थी कि यह साधारण-सा दिखने वाला व्यक्तित्व क्या इतना असाधारण हो सकता है? निश्चय ही श्रीमाली जी उच्च कोटि के ज्ञाता हैं जो कपाली बाबा से सामना ले सकता है उसकी सिद्धियों की याह संभव नहीं है।

इधर कपाली बाबा थक से गये थे। उनका चेहरा सफेद पड़ गया था और आँखों में क्रोध की जगह याचना झलकने लगी थी। उनके सहयोगी जो अघोरी थे वे अपने आप में कमजोरी अनुभव करने लगे थे, और एक प्रकार से परास्त से प्रतीत हो रहे थे।

श्रीमाली जी ने कहा, कपाली बाबा क्या आपके मन में कुछ और है, इस विध्वंसक प्रयोग को झेलने से श्रीमाली जी के चेहरे पर क्रोध की मात्रा ज़रूरत से ज्यादा आ गई थी, आँखों में ललाई-सी दिखाई दे रही थी और पूरा शरीर अगारे की तरह लाल अनुभव हो रहा था।

श्रीमाली जी ने कहा कपाली बाबा ! प्रत्येक साधना के कुछ नियम होते हैं, कोई भी साधक अपने नियमों से आगे नहीं जाता। भीषण-से-भीषण शत्रु भी इस प्रकार का योग सामने वाले पर नहीं करता, क्योंकि इस प्रकार का प्रयोग तांत्रिक मान्यताओं के विपरीत है, साथ-ही-साथ मानवता के भी विरुद्ध है, आपने मानवता को भी स्पर्श नहीं किया और जिस प्रकार का प्रयोग मुझ पर किया है, यदि ऐसा ही प्रयोग किसी पहाड़ पर भी करते तो उसका अस्तित्व भी समाप्त हो जाता, यह ज्ञात ही नहीं रहता कि वहाँ किसी समय पहाड़ था भी।

कपाली बाबा ! अब मैं तुमको छोड़ूँगा भी नहीं, पर मानवता के साथ। तुमने दो प्रयोग मुझ पर किए हैं अब मैं एक प्रयोग तुम पर करता हूँ, यदि इस प्रयोग से तुम बच गए या इस प्रयोग को झेल लिया तो मैं अपने आपको परास्त मान लूँगा, चाहता तो मैं यह था तुम्हें समाप्त कर दूँ परन्तु अभी तक मैंने मानवता छोड़ी नहीं है।

मैं सावधान कर रहा हूँ कि तीन मिनट के भीतर-भीतर प्रयोग करूँगा और तुम्हें सभलना है तो सभल जाना—और कहते-कहते श्रीमाली जी की मुख मुद्रा कठोर हो गई, उनका चेहरा लाल सुर्ख हो गया, आँखों से ज्वाला-सी निकलने लगी और उनका हाथ हवा में लहराया। दूसरे ही क्षण नीचे आया और फिर तन कर सामने की तरफ मुट्ठी खुली, जैसी कि कोई वस्तु सामने की तरफ उछाली हो।

एक ही क्षण में घडाम से कपाली बाबा नीचे गिर गए, और उनके मुँह से खून निकलने लगा, आँखों में भय छा गया और उन्हें एक ही क्षण में ऐसा लगने लगा था जैसे मृत्यु बहुत दूर नहीं रह गई हो।

कई तांत्रिक एक साथ उठ खड़े हुए और कपाली बाबा के चारों तरफ घेरा डाल दिया, उनकी आँखें बुझने लगीं, उनका चेहरा सफेद पड़ रहा था, उनके मुँह से खून निकल रहा था और ऐसा लग रहा था कि यदि तीन-चार मिनट कोई उपाय नहीं किया

गया या खून निकलना बंद नहीं हुआ तो कपाली बाबा जीवित नहीं बच सकेंगे।

तभी श्रीमाली जी की आवाज गूजी कि सभी बीच में से हट जाय, अन्यथा उनको भी इसी प्रकार के प्रयोग का सामना करना पड़ेगा। यदि कपाली बाबा क्षमा माग लेते हैं तो मैं उन्हें दया करके जीवन दान दे सकता हूँ।

आवाज के साथ ही सभी तांत्रिक और अधोरी अपने-अपने स्थान पर बैठ गए, कपाली बाबा के मुह से अभी तक खून निकल रहा था और वह वह कर पास की जमीन को लाल कर रहा था, फिर भी उनमें चेतना बाकी थी, उनके दोनों हाथ परस्पर जुड़े—यह इस बात की साक्ष्य थे कि वे अपने आपको परास्त अनुभव करते हैं।

श्रीमाली जी और भूर्भुवा बाबा मंच से उनके निकट आये और श्रीमाली जी ने हवा में से लहरा कर कोई वस्तु अपने हाथ में ली और उस वारीक-सी वस्तु को कपाली बाबा पर डाल दिया। दूसरे ही क्षण उनके मुह से खून निकलना बन्द हो गया।

श्रीमाली जी ने बाबा के हाथ को पकड़ कर उठाया और उन्हें उसी स्थान पर बिठाया जहाँ पर वे बैठे हुए थे, दो क्षणों के बाद वे चेतन्य हुए और उन्होंने उठ कर अपना सिर श्रीमाली जी के चरणों में रख दिया।

मा कपाली भैरवी ने कहा कि मेरी बात रखी जाए। इसका निर्णय हो ही चुका है, अतः कपाली बाबा शिष्यत्व स्वीकार करें।

भूर्भुवा बाबा कपाली बाबा को अपने साथ लेकर मंच पर आए, पास में ही श्रीमाली जी खड़े हुए थे। सारी सभा हतप्रभ और स्तब्ध थी। उनकी आँखों में आश्चर्य-मिश्रित भय विद्यमान था।

क्षीण स्वर में कपाली बाबा ने अपनी पराजय स्वीकार की और कहा मैं हार गया हूँ। मेरी सारी सिद्धियाँ और कृत्याएँ आपके प्रयोग के सामने निष्फल सिद्ध हुई हैं अतः मैं शिष्यत्व स्वीकार करता हूँ।

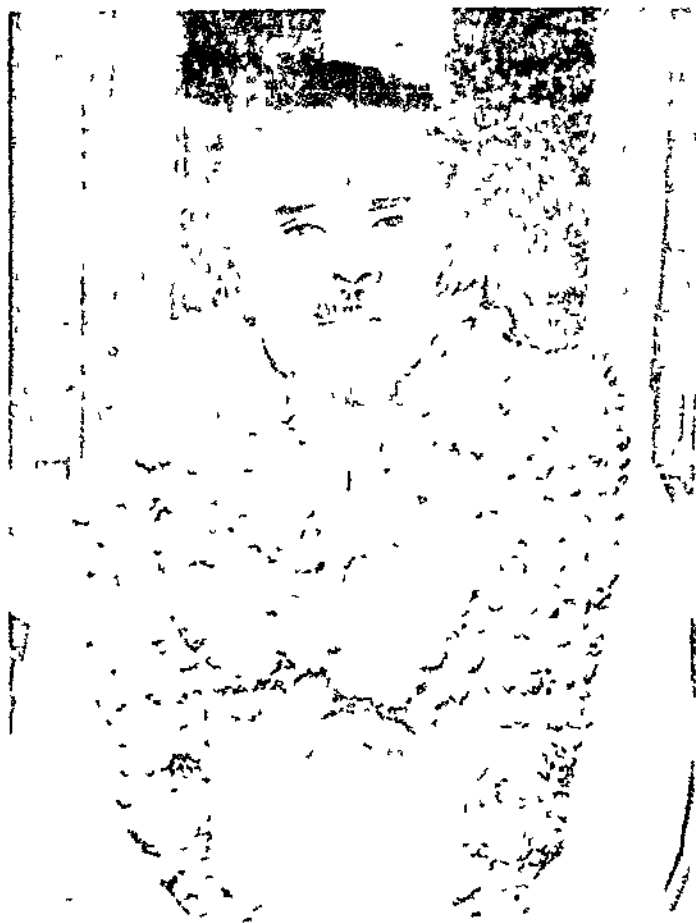
श्रीमाली जी ने कहा, कपाली बाबा आयु में मुझसे बड़े हैं और वयोवृद्ध होने के कारण मैं उनका सम्मान करता हूँ। फिर भी वे पराजित हैं और उन्होंने शिष्यत्व स्वीकार करने की प्रार्थना की है, मैं इस प्रकार के कार्यों में विश्वास नहीं रखता, फिर भी मैं मा कपाली भैरवी की आज्ञा का उल्लंघन भी करना नहीं चाहूँगा, अतः मैं कपाली बाबा को शिष्य के रूप में स्वीकार करता हूँ और कहते-कहते प्रतीक रूप में श्रीमाली जी ने कपाली बाबा के सिर के सामने वाले कुछ बाल उखाड़ लिए।

सारी सभा प्रसन्नता और हर्ष से गूँज उठी, सभी अपने-अपने स्थान से उठ खड़े हुए, उनकी आँखों में एक आश्चर्यमिश्रित प्रसन्नता लहरा रही थी और उन्होंने श्रीमाली जी के चारों तरफ घेरा ना डाल दिया। भूर्भुवा बाबा ने वृद्ध होते हुए भी श्रीमाली जी को अपनी बाहों में भर लिया, उनकी आँखों में प्रसन्नता के कण छलछला आये थे। सारी सभा एक स्वर से प्रसन्नता व्यक्त कर रही थी।

पन्द्रह मिनट तक लगभग इसी प्रकार की प्रसन्नता मिश्रित ध्वनियाँ गूँजती रही। सभी ने एक स्वर से यह स्वीकार किया कि नि सन्देह सिद्धियों के क्षेत्र में श्रीमाली

जी सर्वोपरि हैं और उनके पास जो अक्षय भण्डार है वह अपने आप में अद्वितीय है।

भूर्भुजा बाबा के बार-बार के अनुरोध से सभा शान्त हुई, और सभी अपने-अपने स्थान पर बैठे, सभा के वयोवृद्ध देवदुर बाबा अपने स्थान से उठे और अपने दाहिने हाथ के अंगूठे को चीर कर रक्त से श्रीमाली जी का सभापति के रूप में अभिनन्दन किया।



तांत्रिक सम्मेलन के अध्यक्ष डॉ० श्रीमाली

भूर्भुजा बाबा ने सभा को सम्बोधित करते हुए कहा कि मैं आज अत्यन्त प्रसन्न हूँ, क्योंकि हमने एक जटिल समस्या का समाधान ढूँढ़ निकाला है। मैं श्रीमाली जी से और उनकी साधनाओं से परिचित रहा हूँ, तन्त्र-मन्त्र और अन्य सभी प्रकार की

साधनाको मे वे निष्णात हैं, निष्णात ही नहीं उन्होंने सर्वोपरि सिद्धियों को हस्तगत किया हैं, इसका प्रमाण अभी आप देख चुके हैं ।

मेरी ही नहीं पूरी सभा की आखें श्रीमाली जी के चेहरे टिकी हुई थी । कुछ क्षण पूर्व उनके चेहरे पर क्रोध की जो लालिमा थी वह समाप्त हो गई थी और उनका चेहरा पुन सामान्य-सा दिखाई देने लग गया था, पूरी सभा के हर्ष और प्रसन्नता का उन पर कोई प्रभाव दिखाई नहीं दे रहा था । इस अद्भुत और श्रेष्ठतम तांत्रिक सम्मेलन के सभापति पद को प्राप्त करके भी उनके चेहरे पर किसी भी प्रकार की अहं की रेखा दिखाई नहीं दे रही थी, इसके स्थान पर मुझे उनकी आखों में स्नेह और करुणा का मिला-जुला रूप दिखाई दे रहा था ।

श्रीमाली जी ने प्रारम्भिक भाषण में अपने गुरु श्री स्वामी सच्चिदानन्द जी का स्मरण करते हुए आगन्तुक सभी साधकों और तांत्रिकों की अभ्यर्थना की और बताया कि युग परिवर्तन के साथ-साथ व्यक्ति को भी परिवर्तन के लिए तैयार रहना चाहिए । हम पूरे विश्व में तत्र-मत्र के क्षेत्र में सर्वोपरि हैं और विश्व की आदिम सभ्यता से अब तक इस भारत को विश्व के अन्य देश चैलेन्ज नहीं दे सके हैं, इस क्षेत्र में हम अब भी अग्रगण्य और सर्वोपरि हैं, परन्तु धीरे-धीरे हम में सकुचितता आ रही है । हम अपने ज्ञान को अपनी ही वपीती समझ बैठे हैं और दूसरों को देने में कृपणता बरत रहे हैं, यह हमारी स्वार्थ प्रवृत्ति है जो हमारे स्वयं के लिए और इस विद्या के विकास के लिए पूर्णतः घातक है ।

समाज में हम अपना सम्मान उस रूप में कायम नहीं रख सके हैं, जिस रूप में रहना चाहिए, क्योंकि हमने तन्त्र का प्रयोग केवल मारक कार्यों के लिए ही किया है, तन्त्र का तो सबसे बड़ा उपयोग रचनात्मक कार्यों में है । यदि हम इस तन्त्र का रचनात्मक कार्यों में उपयोग लें तो निश्चय ही सीमित समय में इस देश का काया पलट कर सकते हैं । हम इस क्षेत्र में सर्वोपरि होते हुए भी नगण्य हैं, क्योंकि हमने इस विद्या का प्रयोग या तो चमत्कार प्रदर्शन के लिए या व्यक्तिगत स्वार्थ के लिए ही किया । समाज के रचनात्मक उपयोग के लिए भी इस विद्या का उपयोग हो सकता है, ऐसा हमने मोचना ही छोड़ दिया ।

हमने तन्त्र को एक अजीब रूप दे दिया है, विचित्र वेष्टभूषा को इसका प्रतीक बना दिया है, यह एक घातक प्रवृत्ति है । हमें चाहिए कि हम इस सकुचितता से बाहर आए और अपने ज्ञान को पुस्तकों के माध्यम से, प्रयोगों के माध्यम से तथा समाज के रचनात्मक कार्यों के माध्यम से व्यक्त करें, जिससे कि यह विद्या जीवित रह सके, अन्यथा एक समय ऐसा भी आ सकता है जब यह विद्या हमेशा-हमेशा के लिए समाप्त हो जाएगी ।

आज 'परदेह प्रवेश' या 'परकाया प्रवेश' विद्या को जानने वाले कितने बचे हैं ? 'आकाश गमन' और 'मनोनुकूल गमन' साधना इन्ने-गिने लोगों के पास रह गई है, यदि हम इस विद्या को भावी पीढ़ियों के लिए सुरक्षित नहीं रख सके तो यह विद्या

इस विश्व से हमेशा-हमेशा के लिए लोप हो जाएगी ।

यह सम्मेलन एक आश्चर्यजनक और ऐतिहासिक सम्मेलन है । जिसकी गरिमा और महत्ता को हमें अनुभव करना चाहिए । इस सम्मेलन में आपसी वाद-विवाद या अपनी अहम्मन्यता को ही बढ़ावा नहीं देना है अपितु मिल-जुल कर एक-दूसरे की भावनाओं से, एक-दूसरे की कलाओं से और एक-दूसरे की साधनाओं से परिचित होना है, जिससे कि हम आने वाली पीढ़ियों के लिए निश्चित रूपरेखा बना सकें और धरो-हर के रूप में उनको कुछ दे सकें ।

श्रीमाली जी का भाषण नया-तुला सयत और स्पष्ट था । उनके भाषण में लुप्त हो रही विद्या को जीवित रखने की ओर संकेत था, इसके साथ-ही-साथ उनकी यह चेतावनी भी थी कि यह विद्या केवल एक ही स्थान पर केन्द्रित होकर समाप्त न हो जाए, वल्कि इसे समाज के आधुनिक परिवेश में स्थान देना होगा और समाज के मन-मस्तिष्क से जो इसके प्रति भ्रान्त धारणाएँ हैं उसे दूर करना होगा ।

मैं श्रीमाली जी के भाषण से भी ज्यादा उनकी सादगी और विनम्रता से प्रभावित हो रहा था । मैं देख रहा था कि उन्होंने प्रायोगिक रूप से अपनी सर्वश्रेष्ठता सिद्ध की है फिर भी उनके मन में किसी भी प्रकार का अहं नहीं है, दूसरों के प्रति आदर, सम्मान और स्नेह में किसी प्रकार की न्यूनता नहीं है, जितना ही मैं उनको देख रहा था उतना ही ज्यादा उनके प्रति एक अजीब-सा अपनत्व महसूस कर रहा था । अपने आपको उनके व्यक्तित्व के प्रति सम्मोहित-सा अनुभव कर रहा था । मैंने यह निश्चय कर लिया कि इस अज्ञात व्यक्तित्व के बारे में ज्यादा-से-ज्यादा जानकारी प्राप्त करनी है जिससे कि मैं इनसे लाभ उठा सकूँ ।

मैं उठ कर त्रिजटा अधोरी के पास जाकर बैठ गया और अपना परिचय देते हुए श्रीमाली जी के बारे में चर्चा छेड़ी तो मैंने देखा कि उनके चेहरे पर एक अपूर्व-सी चमक आ गई थी । उन्होंने बताया कि तंत्र के क्षेत्र में यह व्यक्ति सागर के समान है, जिसकी थाह पाना सम्भव नहीं है । मैं अपने आपको तंत्र के क्षेत्र में बहुत कुछ मानता था और श्रीमाली जी मेरे साथ कुछ समय तक पहाड़ी पर रहे भी थे और मुझसे दो-चार विद्याएँ सीखी भी थी परन्तु हकीकत यह है कि मैंने जितनी विद्याएँ उन्हें सिखाई हैं उससे ज्यादा उनसे सीखी हैं । मैंने यह देखा कि यह व्यक्ति जितना दक्षिण मार्गों साधना में निष्णात है उससे भी ज्यादा वाम मार्गों साधना में सम्पन्न है । हमारे लिए यह गौरव की बात है कि यह व्यक्तित्व सिद्धाश्रम के सर्वोपरि योगीराज श्री सच्चिदानन्द जी का परम प्रिय शिष्य है, जो कि अपने आप में एक विशिष्ट गौरव है । योगीराज जी से बहुत कुछ प्राप्त किया है, मंत्र साधना के क्षेत्र में योगीराज विश्ववन्द्य हैं और उनका शिष्य होना ही अपने आप में विशिष्ट गौरव माना जाता है, अलाभ्य दुर्लभ और आश्चर्यजनक साधनाएँ उनके द्वारा श्रीमाली जी ने प्राप्त की है, इसके अलावा यह व्यक्ति कई वर्षों तक अधोरियो के साथ रहा है, गौरक्ष साधना में आज के युग में यह सर्वोपरि है, ऐसा कहने में मुझे कोई संकोच नहीं ।

त्रिजटा अपने आप में एक प्रामाणिक व्यक्तित्व है। सभा में उपस्थित कई श्रेष्ठ तांत्रिक किसी-न-किसी रूप में त्रिजटा के शिष्य रहे हैं, अतः त्रिजटा के शब्द अपने आप में प्रामाणिक हैं, इसमें सन्देह करने की कोई गुंजाइश ही नहीं थी, जहाँ त्रिजटा ने श्रीमाली जी के बारे में इस प्रकार के शब्दों का प्रयोग किया है तो निश्चय ही श्रीमाली जी तन्त्र के और मन्त्र के क्षेत्र में सर्वोपरि होंगे।

मेरे कान त्रिजटा के शब्द सुन रहे थे और मेरी आँखें श्रीमाली जी के व्यक्तित्व पर अटकी हुई थीं। मैं आश्चर्यचकित था कि इतना श्रेष्ठ साधक किस प्रकार से बिना हो हल्ले के, बिना प्रचार प्रसार के, अपने कार्य में रत है, इससे भी बड़ी बात मैंने यह देखी कि यह व्यक्ति बहुत अधिक उदार और नम्र है, यदि इसके स्थान पर कोई दूसरा होता और इस प्रकार मृत्यु के संघर्ष में विजयी होकर समापति बनता तो उसका अहंकार इस समय आसमान को छू रहा होता, इसकी अपेक्षा यह अपने आप में सकोच शील है और मृत्यु का फाग खेलने पर भी अपने प्रबल शत्रु कपाली बाबा को आदर-पूर्वक अपने पास बिठा रखा है।

मैंने निश्चय किया कि आज की सभा समाप्त होने पर मैं श्रीमाली जी से अलग से मिलूँगा और उनके विचारों को जानने का प्रयत्न करूँगा।

अगले दिन की, और आगे के सम्मेलन समाप्त तक की रूप रेखा और कार्य-प्रणाली स्पष्ट करने के बाद आज सायंकालीन सभा समाप्त हो गई, क्योंकि कई साधक सूर्यास्त के समय की जाने वाली साधना में भाग लेने के इच्छुक थे, अतः सूर्यास्त से कुछ पूर्व ही सभा समाप्त कर दी गई।

सभा समाप्त होते ही अधिकांश तांत्रिकों और मान्त्रिकों ने श्रीमाली जी को चारों तरफ से घेर लिया। सभी अपना-अपना परिचय देने की उतावली कर रहे थे, सभी तांत्रिक उनकी नजरों में आना चाहते थे और सभी साधक इस बात के लिए प्रयत्नशील थे कि उनकी कृपा का प्रसाद प्राप्त हो सके जिससे कि वे अपनी अपूर्णता को पूर्णता में परिवर्तित कर सकें।

सभी अपने-अपने स्थान पर चले गये, जहाँ पर कि सभी को ठहराने की व्यवस्था की गई थी और जाते ही अधिकांश साधक अपनी साधनाओं में व्यस्त हो गए। मेरा मन अन्य किसी कार्य में नहीं लग रहा था। एक ही इच्छा हो रही थी कि किसी प्रकार श्रीमाली जी से समय प्राप्त कर सकूँ जिससे कि मैं अपनी बात को उनके सामने रख सकूँ और उनके विचारों को जान सकूँ।

पर उनके एक पुराने तांत्रिक शिष्य से ज्ञात हुआ कि रात्रि में उनसे मिलना संभव नहीं हो सकेगा, क्योंकि एक बार अपनी साधना में जाने के बाद सूर्योदय से कुछ पूर्व ही वे साधना पूर्ण कर बाहर आते हैं, अतः इस समय मिलना संभव नहीं हो सकेगा, यह शिष्य किसी समय श्रीमाली जी के साथ रहा था और उनसे काफी कुछ प्राप्त किया था। आज भी जब वह अपने होठों से श्रीमाली जी का नाम उच्चारित करता तो उसके चेहरे पर एक अपूर्व चमक आ जाती थी और प्रसन्नता से सीना फूल जाता

था। वह इस बात में गौरव अनुभव कर रहा, कि वह किसी समय श्रीमाली जी का शिष्य रहा है और आज भी उस पर उनकी पूर्ण कृपा है।

उससे मुझे श्रीमाली जी के बारे में काफी कुछ सुनने को मिला। मुझे ज्ञात हुआ कि लगभग २० वर्षों तक श्रीमाली जी घर गृहस्थी छोड़कर केवल तत्र और मत्र की पूर्णता को जानने के लिए जंगलों में भटकते फिरते थे, और इस अवधि में उन्होंने जो कुछ कष्ट उठाया उसकी अपने आप में एक अलग कहानी है।

भारत के ऊँचे-से-ऊँचे साधकों के सम्पर्क में रहने का उन्हें अवसर मिला है और स्वामी सच्चिदानन्द जी के वे परमप्रिय शिष्य हैं और योगीराज ने इनको ही अपना उत्तराधिकारी माना है, इसके अलावा अत्यन्त दुर्लभ सिद्धाश्रम के वे सदस्य हैं और 'आकाश गमन' साधना के माध्यम से वे यदा-कदा सिद्धाश्रम आते जाते रहते हैं।

उन्होंने अपने जीवन में जहाँ तत्र की सर्वोच्चता प्राप्त की है, वही दूसरी ओर मत्र के क्षेत्र में भी सर्वोपरिता प्राप्त करने में सफल हो सके हैं, वाम मार्गी साधना के वे सर्वश्रेष्ठ साधक हैं, चौसठ कृत्याओं को उन्होंने पूर्णतः सिद्ध किया है, और उन्होंने ऐसी कई साधनाएँ सिद्ध की हैं जो दूसरों के लिए इष्या की वस्तु हो सकती हैं, अघोर साधना के क्षेत्र में उनकी अप्रगण्यता आज भी सभी लोग मानते हैं।

परन्तु इतना होते हुए भी वे जरूरत से ज्यादा नम्र हैं और कभी भी चमत्कार प्रदर्शन या अपने अहं का प्रदर्शन करने में विश्वास नहीं रखते, उनका पूरा जीवन सरल, सात्विक और गौरवपूर्ण रहा है।

इससे भी आश्चर्यजनक बात मुझे यह सुनने को मिली कि श्रीमाली जी इन विद्याओं में सर्वश्रेष्ठ होने के साथ-साथ एक सफल गृहस्थी भी हैं, पूर्णतः भारतीय वातावरण में ढली हुई उनकी पत्नी है, पुत्र है, पुत्रिया हैं और अपने गृहस्थ को ठीक उसी प्रकार से निभाते हैं जिस प्रकार से साधारण गृहस्थ अपने गृहस्थ जीवन को निभाता है।

इतना होने पर भी उनकी साधना पर कभी भी गृहस्थ हावी नहीं हो सका है और न गृहस्थ पर उनकी साधना हावी रहती है। दोनों में उचित समन्वय उनके जीवन की विशेषता है और दोनों ही क्षेत्रों में उन्होंने पूर्णता प्राप्त की है।

जिस समय वे अपनी साधना में रत होते हैं तो उनका रूप ही बदल जाता है, उस समय वे पूर्णतः साधक दिखाई देते हैं, गृहस्थ का किसी भी प्रकार से कोई प्रभाव उस समय उन पर नहीं रहता। इसके विपरीत जब हम उनको गृहस्थ रूप में देखते हैं तो यह विश्वास ही नहीं होता कि यह व्यक्ति साधक है या इस व्यक्ति ने साधना के क्षेत्र में सर्वोच्चता प्राप्त की है।

जितना ही मैं श्रीमाली जी के बारे में सुनता जा रहा था उतनी ही ज्यादा मेरी उत्सुकता उनसे मिलने की हो रही थी। ऐसा अवसर मुझे सम्मेलन प्रारम्भ होने के पाँचवे दिन मिला जबकि वे दोपहर में विश्राम कर रहे थे। उस शिष्य के माध्यम से मैंने श्रीमाली जी से निवेदन किया था कि मैं एक साधारण साधक हूँ और इस क्षेत्र

मे पिछले १५ वर्षों से भटक रहा हूँ, यद्यपि मुझे कुछ प्राप्त हुआ है परन्तु वह समुद्र मे बूद के समान है। मैं पिछले चार दिनों से आपसे मिलने के लिये प्रयत्न कर रहा हूँ परन्तु चौबीसो घंटे आप इस प्रकार से व्यस्त हैं कि मैं एक क्षण भी आपका ले नहीं पाया हूँ। मैं कुछ क्षण आपसे लेना चाहता हूँ, जिससे कि मैं आपसे कुछ मार्ग दर्शन पा सकूँ और अपने जीवन की साध को सफल बना सकूँ।

तब दोपहर के विश्राम के समय श्रीमाली जी ने कुछ समय मुझे एकान्त भेंट के लिए दिया। यह भेंट मेरे लिए आज भी स्मरणीय है जबकि मैं पहली बार इस महा-पुरुष के सामने बैठकर अपनी बात को उनके सामने रख सका था और मार्गदर्शन पा सका था।

मैंने यह पाया कि निश्चय ही श्रीमाली जी अपने क्षेत्र में सार्वोपर हैं और उनके पास जो सिद्धियाँ हैं वे अपने आप में अन्यतम हैं, उनको चुनौती देने वाला या उनसे स्पर्धा करने वाला आज कोई भी अन्य नहीं है, फिर भी यह व्यक्ति अत्यधिक नम्र है और अपनी प्रशंसा सुन कर इसको जरूरत से ज्यादा सकोच अनुभव होता है, ज्योंही प्रशंसा की चर्चा छिड़ती है, तो वे विषय को बदल देते हैं, उनके मन में सभी तांत्रिक, मांत्रिक, भैरवियो, अधोरियो आदि के बारे में स्नेह है, और सभी को वे मार्गदर्शन देने में सफल हैं।

मैंने उनसे बातचीत में निवेदन किया कि मैं जीवन में कानून का सफल विद्यार्थी और न्यायपालिका का श्रेष्ठ सदस्य रहा हूँ, इसके बाद मैंने पत्रकारिता के क्षेत्र में पूर्णता प्राप्त की थी, परन्तु इस क्षेत्र में मेरी रुचि नहीं रही और मैंने अपने शेष जीवन को तांत्रिक साधना सीखने में ही व्यतीत करने का निश्चय किया है।

मैं पिछले पन्द्रह वर्षों से इस क्षेत्र में सीखने का प्रयत्न कर रहा हूँ, पर इस सम्मेलन में आने के बाद मुझे ज्ञात हुआ है कि मेरा अस्तित्व तो नहीं के बराबर है। यदि मैं सौ वर्ष भी जीवित रह जाऊँ फिर भी मैं कुछ भी प्राप्त नहीं कर पाऊँगा जितना कि चारो तरफ ज्ञान फैला हुआ है।

मैंने उनसे तंत्र के बारे में मंत्र और वाम मार्गी साधना के बारे में कई प्रश्न किये और उन्होंने जितने स्नेह और प्रामाणिकता के साथ मुझे समझाया वह आज भी स्मरणीय है, जितना मैं सुन रहा था उतना ही ज्यादा मुझे उनकी गहराई का एहसास हो रहा था। मैं देख रहा था कि यह व्यक्ति अपने आप में कितना महान है, परन्तु साथ-ही-साथ कितना नम्र भी। ऐसा ही व्यक्ति आने वाली पीढ़ियों के लिए मार्गदर्शक बन सकता है।

मेरी आत्मा मुझे कह रही थी कि तू जिस मजिल को पाना चाहता है जो गुरु की धारणा तेरे मन में स्तिष्क में है, वह सामने है, तेरी जिज्ञासाओं का समाधान इसी व्यक्ति से हो सकता है, क्योंकि इस व्यक्ति में देने की क्षमता जरूरत से ज्यादा है।

डरते-डरते मैंने इच्छा प्रकट की कि मैं कुछ समय आपके साथ रहना चाहता हूँ और यदि मुझ में पात्रता हो और आप उचित समझें तो मैं शिष्य रूप में आपके चरणों

मे जीवन बिताना चाहता हूँ ।

श्रीमाली जी ने उत्तर दिया कि इतनी जल्दी शिष्य बनना संभव नहीं है क्योंकि केवल होठों से ही गुरु या शिष्य शब्द उच्चारित करना ही सब कुछ नहीं है, जब तक पूर्ण मानसिक और हार्दिक रूप से समर्पण की भावना उजागर नहीं होती तब तक शिष्यत्व की पूर्ण भावना जागृत नहीं हो पाती, और जब तक ऐसी भावना जागृत नहीं होती तब तक शिष्य बनना व्यर्थ है, क्योंकि 'गुरु' शब्द एक सामान्य शब्द नहीं है इसके पीछे बहुत बड़ी जिम्मेदारी है, बहुत बड़ा उत्तरदायित्व है, और जब तक वह गुरु उस शिष्य के प्रति पूर्ण क्षमता के साथ उत्तरदायित्व का निर्वाह नहीं कर सके तब तक उसका गुरु बनना या गुरु बनने की प्रक्रिया अपनाना व्यर्थ है ।

मैं गुरुवाद में विश्वास नहीं करता । मैं नहीं चाहता कि मेरे पीछे शिष्यों की लम्बी कतार या उनकी फौज हो । मैं तो जीवन में सकृत्तता इस रूप में चाहता हूँ कि चाहे कम ही शिष्य हो परन्तु वे अपने आप में पूर्ण हो । मुझे शिष्य रूप में तुम्हें स्वीकार करने में कोई आपत्ति नहीं है, पर तुम्हारे होठों की अपेक्षा जब तुम्हारा हृदय इस बात की याचना करेगा तो मैं तुम्हें अवश्य शिष्य बना लूँगा ।

होठों के शब्दों की अपेक्षा हृदय से जो शब्द उच्चारित होते हैं वे ज्यादा सही, प्रामाणिक और पवित्र होते हैं । मैं होठों से निकले हुए शब्दों की अपेक्षा हृदय से निकलने वाले शब्दों पर ज्यादा विश्वास करता हूँ । जब भी तुम्हारी ऐसी स्थिति हो जाय तब मेरा द्वार तुम्हें खुला मिलेगा और तुम मेरे पास आ सकोगे ।

उनकी बात अपने स्थान पर सही थी, अभी तक मैं अपने आप को पूर्ण क्षमता के साथ शिष्य का रूप नहीं दे सका था, शिष्य का मूल समर्पण होता है और जब तक व्यक्ति में समर्पण की पूर्ण भावना स्पष्ट नहीं होती, तब तक 'शिष्य' शब्द सार्थक नहीं हो पाता । मैं अपने आपको पूर्णता के साथ शिष्य स्पष्ट करना चाहता था, और मैंने उसी क्षण निश्चय कर लिया था कि मैं एक दिन अवश्य ही श्रीमाली जी का शिष्य बनने का गौरव प्राप्त कर सकूँगा ।

मैंने उनसे याचना की कि निश्चय ही मैं अभी आपका शिष्य बनने के योग्य नहीं हूँ । अभी मुझ में उस पात्रता का अभाव है जो आपका शिष्य बनने के लिये आवश्यक है, परन्तु फिर भी इस सम्मेलन के बाद कुछ समय आपके साथ रहना चाहता हूँ, और मुझे विश्वास है, आप मेरे इस अनुरोध को ठुकरायेंगे नहीं, अपितु स्वीकृति देंगे जिससे कि मैं अपने आपको धन्य समझूँगा ।

श्रीमाली जी ने तीक्ष्ण दृष्टि से मेरी आँखों में झाँका और एक ही क्षण में उन्होंने मुझे अपनी कसौटी पर तोल लिया । मुझे कुछ ऐसा लगा जैसे कि वे मेरे पूर्ण अन्तर को देख चुके हैं और मेरे अन्तर में गहराई के साथ प्रवेश कर वह सब-कुछ जान चुके हैं, जिनको मैं गोपनीय रख रहा था । एक क्षण के लिये मैं पीपल के पत्तों की तरह कांप गया । वह क्षण आशंका और प्रतिशंका के बीच इसलिये झूल रहा था कि श्रीमाली जी स्वीकृति देंगे या नहीं । यदि उन्होंने मना कर दिया तो आगे के सारे

रास्ते मेरे लिये अवरुद्ध हो जायेंगे। यदि उनकी स्वीकृति मिल गई तो मैं कुछ दिन उनके साथ रह सकूंगा और उसके जीवन की सुवास से अपने आपको सुवासित कर सकूंगा, और अपने कार्यों से यह स्थापित करने का सफल-असफल प्रयास कर सकूंगा कि मैं शिष्य बनने की योग्यता रखता हूँ, और आने वाले समय में मैं इस कसौटी पर खरा उतर सकूंगा।

श्रीमाली जी मेरे चेहरे पर नजर डालते हुए मुस्कराये और कुछ दिन साथ रहने की स्वीकृति दे दी। यह स्वीकृति मेरे लिये किसी श्रेष्ठ साधना की सफलता से कम नहीं थी। मुझे कुछ ऐसा लगा जैसे मैं कुछ-कुछ पा गया हूँ, मुझे अपनी मजिल मिल गई हो, मुझे कुछ ऐसा अनुभव हुआ कि जिस कार्य के लिये मैं भटक रहा था उस की पूर्णता अब निकट भविष्य में हो सकेगी, हो सकता है मैं अपने जीवन में पूर्णता पा सकूँ। मैंने अपने मन में जो लक्ष्य निश्चित किया था वह लक्ष्य अब मुझे निकट आता अनुभव हो रहा था।

सम्मेलन में जाने का समय हो गया था। मैं उनसे विदा लेकर बाहर आया। उस समय मैं अपने आपको ससार का सबसे अधिक सौभाग्यशाली अनुभव कर रहा था, मेरा हृदय प्रसन्नता के कारण जोरो से धड़क रहा था। खुशी के मारे मेरे पाव जमीन पर नहीं पड़ रहे थे, पूरा शरीर रोमांचित हो गया था, और मेरी आँखों में प्रसन्नता के आसू छलछला रहे थे।

आज पहली बार मैंने अनुभव किया था कि सिद्धि पुरुष के समीप बैठने से ही कितना कुछ लाभ हो जाता है। उनके शरीर से निसृत गंध से जो भावक वातावरण बनता है वह कितना अनुपम होता है।

सम्मेलन के दस दिन हगामापूर्ण ही रहे, परन्तु ये दस दिन अपने आप में अन्यतम थे, क्योंकि इन दस दिनों में श्रेष्ठतम साधकों ने श्रेष्ठतम प्रक्रिया से अपनी साधनाओं को स्पष्ट किया और उन साधनाओं में नवीनतम रहस्यों की ओज की भी सबके सामने स्पष्ट किया।

अभी तक 'श्यामा-साधना' अपने आप में अत्यन्त जटिल और कठोर समझी जाती थी, परन्तु वैचाक्षी बाबा ने इस प्रक्रिया को एक नवीन पद्धति से सिद्ध किया और उन्होंने उसके परिणाम भी सबके सामने रखे। इसी प्रकार ऊर्ध्वगमन प्रक्रिया की सरलतम विधि भी जिज्ञासुओं के सामने स्पष्ट हुई, त्रिजटा अधोरी ने व्यावहारिक रूप में 'सजीवनी-विद्या' को सबके सामने स्पष्ट किया। रामायण में मैंने पढ़ा था कि जब राम-रावण का युद्ध समाप्त हुआ तो राम ने इन्द्र से प्रार्थना की कि आप मेरी सेना के जितने भी मृत वानर हैं या इस युद्ध में मारे गए हैं उन्हें आप सजीवनी विद्या से जीवित कर दें, इन्द्र ने प्रसन्न होकर उन सभी वानरों को पुनः जीवित कर दिया था, साथ ही वे रोग मुक्त भी हो गये थे।

इन्द्र ने यह विद्या बृहस्पति से सीखी थी और मैंने यह पढ़ा था कि बृहस्पति और शुक दोनों ही इस विद्या के पारंगत ऋषि थे। मैंने इसको पढ़कर केवल अनुमान

लगाया था कि किसी समय हमारे देश में यह विद्या जीवित रही होगी, परन्तु काल-व्यवधान के कारण यह विद्या इस देश में लुप्त हो गई होगी, परन्तु त्रिजटा ने सबके सामने इस प्रक्रिया को सिद्ध करके दिखाया। उन्होंने मृत व्यक्ति को जोकि पास के गाव में एक दिन पहले ही मरा था उसे प्राप्त कर सम्मेलन में सबके सामने उसे जीवित कर दिखाया, यह मेरे लिए और अन्य साधकों के लिये आश्चर्यजनक था, परन्तु जो कुछ था हमारे सामने था और प्रत्यक्ष था। वास्तव में अभी तक भारत इस प्रकार की विद्याओं से सम्पन्न है। त्रिजटा ने वाम मार्गी साधना से 'सजीवनी प्रक्रिया' सम्पन्न की थी, बाद में मुझे ज्ञात हुआ कि इसकी एक और विधि मात्रिक भी है और उसके माध्यम से भी यह त्रिया सम्पन्न की जाती है। त्रिजटा से ही मुझे ज्ञात हुआ कि श्रीमाली जी को दोनों ही प्रकार की विधियाँ ज्ञात हैं और उन्होंने इसका प्रयोग कई बार किया भी है।

'आकाश-गमन-प्रक्रिया' भी मैंने पहली बार इस सम्मेलन में देखी, जबकि माधक इस प्रक्रिया के माध्यम से हवा से भी हल्का होकर आकाश में विचरण कर सकता है और एक स्थान से दूसरे स्थान पर सहज में ही आ जा सकता है। भूर्भुवा बाबा ने इस प्रक्रिया को सबके सामने करके बताया और उन्होंने उन प्रश्नों के उत्तर भी दिये जो कि इस प्रक्रिया के पेचीदा अंग हैं। इस साधना के माध्यम से साधक हवा में पक्षी की तरह उड़ सकता है और उसका वेग वायुयान से भी कई गुना तेज होता है। एक स्थान से दूसरे स्थान पर जाने के लिये और अगम्य पर्वतों को पार करने के लिये यह विधि सर्वाधिक उपयुक्त है।

पुराणों में नारद के बारे में विख्यात है, कि वे निरन्तर घूमते रहते थे और कुछ ही क्षणों में एक स्थान से दूसरे स्थान पर गमन कर सकते थे। उन्हें यही विधि ज्ञात थी, जिसके माध्यम से वे ब्रह्माण्ड के किसी भी स्थान पर सशरीर कुछ ही क्षणों में पहुँच जाते थे। यह मात्रिक प्रक्रिया है और इसकी एक वाम मार्गी तांत्रिक प्रक्रिया भी है जिसे मच्छिन्द्रनाथ ने विकसित किया था, वे सशरीर एक स्थान से दूसरे स्थान पर जाने में सक्षम थे, भूर्भुवा बाबा ने मात्रिक प्रक्रिया को सबके सामने स्पष्ट किया और प्राणायाम प्रक्रिया से अपने शरीर को वायु से भी हल्का कर पृथ्वी से १० फीट तक ऊपर उठ कर सब को बताया, साथ ही उन्होंने आकाश में विचरण करके भी इस प्रक्रिया को स्पष्ट किया। मा कृपाली भैरवी इस प्रक्रिया के वाम मार्गी साधना की निष्णात साधिका हैं, उन्होंने भी कृपा कर इसकी तांत्रिक प्रक्रिया को सबके सामने स्पष्ट किया और सशरीर उन्होंने भूर्भुवा बाबा के समक्ष वायु और आकाश में विचरण कर सबको आश्चर्यचकित कर दिया। उन्होंने इस प्रक्रिया को प्रत्यक्ष रूप से समझा करके भी स्पष्ट किया। मूलतः श्मशान साधना है और इसके माध्यम से यह तुरन्त सिद्ध होती है। मा कृपाली भैरवी को मनोनुकूल विचरण प्रक्रिया भी ज्ञात है और उन्होंने इस प्रकार की प्रक्रिया को सबके सामने स्पष्ट करके भी दिखाया था।

शाम को मैं मा कृपाली भैरवी के साथ काफी समय तक रहा और उन्हें इन

रहस्यो को जानने के लिये साधुवाद दिया। बातचीत में उन्होंने बताया कि वे वचन से ही सन्यासी हो गई थी और तांत्रिक क्षेत्र में उन्होंने अपने जीवन को व्यतीत करने की भावना मन में धारण कर ली थी। कुछ समय तक वे हिमालय के 'सिद्धाश्रम' में भी रही थी जो कि अपने आप में श्रेष्ठतम उपलब्धि मानी जाती है।

बातचीत में मुझे यह भी ज्ञात हुआ कि जब श्रीमाली जी निखलेश्वरानन्द जी के रूप में हिमालय स्थित थे तब मा कृपाली भैरवी उनके साथ काफी समय तक रही थी और इस प्रकार की साधनाएं उनसे ही प्राप्त की थी। आज भी जब वे गुरु का नाम लेती हैं तो उनकी आँखें छलछला आती हैं। मा कृपाली भैरवी से ही मैंने अनुभव किया कि शिष्य का मुख्य गुण समर्पण होता है और उसके रोम-रोम से गुरु की ही ध्वनि निकलती है।

इस सम्मेलन की एक और उपलब्धि 'परकाय-प्रवेश' का दिग्दर्शन था। मैंने इस अवसर पर कई स्थानों पर पड़ा था कि साधक अपने शरीर को छोड़कर दूसरे मृत शरीर में प्रवेश कर लेता है और उस दूसरे शरीर से भी जीवन के क्रिया-कलाप सम्पन्न कर लेता है, यह साधना भारत की सर्वश्रेष्ठ साधनाओं में से एक रही है, कुछ समय पूर्व शंकराचार्य इस विद्या के निष्णात साधक थे।

जब मण्डन मिश्र और शंकराचार्य का शास्त्रार्थ हुआ तो निश्चय यह हुआ कि इन दोनों में से जो हारेगा वह जीते हुए व्यक्ति का शिष्य बन जायेगा। मण्डन मिश्र भारत के विख्यात विद्वान् और गृहस्थ थे। उनकी विदुषी पत्नी सरस्वती भी साक्षात् सरस्वती का अवतार थी और दोनों पति-पत्नी भारत के श्रेष्ठतम विद्वान् थे।

शंकराचार्य मूलतः सन्यासी थे और उन्होंने शास्त्रार्थ के माध्यम से भारत विजय करने के उद्देश्य से यात्राएँ की थीं। मगर वे सर्वश्रेष्ठ तभी माने जा सकते थे जबकि वे मण्डन मिश्र को शास्त्रार्थ में पराजित कर सकते।

इन दोनों के शास्त्रार्थ का निर्णय कौन करे यह एक पेचीदा प्रश्न था, क्योंकि कोई सामान्य विद्वान् तो निर्णय करने में सक्षम था नहीं, अतः शंकराचार्य जी के अनुरोध से इस शास्त्रार्थ के निर्णायक के रूप में मण्डन मिश्र की पत्नी का चयन किया गया। शास्त्रार्थ इक्कीस दिन चला और आखिर में मण्डन मिश्र शंकराचार्य से हार गये। यह देखकर मण्डन मिश्र की पत्नी ने निर्णय दिया कि मण्डन मिश्र हार गये हैं, अतः वे शंकराचार्य का शिष्यत्व स्वीकार करें और सन्यास दीक्षा लें।

यह कहकर वह विदुषी पत्नी निर्णायक पद से नीचे उतरती, और शंकराचार्य से कहा कि मैं मण्डन मिश्र की अर्द्धांगिनी हूँ अतः अभी तक आधा अंग ही पराजित हुआ है, जब आप मुझे भी पराजित करेंगे तभी मण्डन मिश्र पराजित माने जायेंगे, युक्ति के अनुसार बात सही थी। मण्डन मिश्र निर्णायक बने और सरस्वती तथा शंकराचार्य में शास्त्रार्थ प्रारम्भ हुआ।

इक्कीस वें दिन जब मण्डन मिश्र की पत्नी ने यह भली भाँति अनुभव कर लिया कि मेरा पराजित होना निश्चित है तब उसने शंकराचार्य से कहा कि मैं एक

अन्तिम प्रश्न पूछती हूँ, और यदि इस प्रश्न का भी उत्तर आपने भली प्रकार से दे दिया तो हम दोनों अपने आपको पराजित अनुभव करेंगे और आपका शिष्यत्व स्वीकार कर लेंगे ।

शकराचार्य की स्वीकृति प्राप्त होने पर सरस्वती ने प्रश्न किया कि सम्भोग क्या है ? यह कैसे किया जाता है ? और इससे सन्तान का निर्माण किस प्रकार से हो जाता है ?

प्रश्न सुनते ही उसकी गहराई शकराचार्य समझ गये । यदि वे इसका उत्तर देते हैं तो उनका सन्यास धर्म खण्डित होता है, क्योंकि सन्यासी को सम्भोग का ज्ञान सभव ही नहीं है और जिसका ज्ञान व्यावहारिक रूप में ज्ञात नहीं है, उसका उत्तर देना कैसे सभव है ? अतः सन्यास धर्म की रक्षा के लिए उत्तर देना सभव नहीं था और यदि उत्तर नहीं देते हैं तो पराजित माने जाते हैं, दोनों ही दृष्टियों से वे पराजित होते हैं ।

शकराचार्य ने प्रश्न किया कि क्या इस प्रश्न का उत्तर पढ़े हुए ज्ञान के आधार पर दे सकता हूँ या इसका उत्तर तभी आप प्रामाणिक मानेंगी जबकि उत्तर-कर्त्ता इस प्रक्रिया से गुजर चुका हो ।

सरस्वती ने उत्तर दिया कि व्यावहारिक ज्ञान ही वास्तविक ज्ञान होता है, यदि आपने इसका व्यावहारिक ज्ञान प्राप्त किया है तो आप उत्तर देने में स्वतन्त्र हैं ।

शकराचार्य जन्म से ही सन्यासी रहे थे अतः उनके जीवन में सम्भोग का व्यावहारिक ज्ञान धर्म और सन्यास के सर्वथा विपरीत था, अतः उन्होंने पराजय स्वीकार करते हुए कहा कि मैं इसका उत्तर छ महीने बाद दूँगा ।

इसके बाद शकराचार्य किसी अज्ञात स्थान पर चले गये । संयोगवश उस शहर के राजा की मृत्यु हो गई, तब शकराचार्य अपने शरीर को छोड़ राजा के शरीर में प्रवेश कर गये, फलस्वरूप राजा कुछ समय बाद ही पुनः जीवित हो गया, सबधियों ने राजा को पुनः जीवित देख कर हर्ष ध्वनि की । राजा के माध्यम से रानियों के साथ जो सम्भोग हुआ, उसका व्यावहारिक ज्ञान शकराचार्य लेकर पुनः अपनी काया में प्रवेश कर गये, इस प्रकार व्यावहारिक ज्ञान भी प्राप्त कर लिया और जिस शरीर से सन्यास धर्म स्वीकार किया था उसको भी खण्डित नहीं होने दिया ।

इसके बाद वे पुनः मण्डन मिश्र की पत्नी को उसके प्रश्न का व्यावहारिक ज्ञान देकर विजय प्राप्त की और उन दोनों पति-पत्नी को शिष्यता प्रदान की, इस प्रकार उन्होंने अपने आपको भारत का शास्त्रार्थ विजेता सिद्ध किया ।

मेरे कहने का तात्पर्य यह था कि यह विद्या हमारे भारत में शकराचार्य के समय तक रही है पर उसके बाद यह विद्या धीरे-धीरे लुप्त होती गई । मेरे जैसे अधिकांश साधकों को यह विश्वास था कि इस साधना पर भी सम्मेलन में चर्चा होगी और सभवतः इस साधना को व्यावहारिक रूप में देख सकेंगे ।

सम्मेलन के आठवें दिन श्रीमाली जी ने इस साधना को सबके सामने व्याव-

हारिक रूप में करके दिखाया। मुझे यह भी ज्ञात हुआ कि इस समय भारत में मात्र चार या छ साधकों को ही इस विधि का ज्ञान है, और इनमें से भी अधिकांश सिद्धा-श्रम के स्थायी साधक हैं जो कि वहाँ से नीचे आते ही नहीं, सैकड़ों साधकों के प्रबल अनुरोध और आग्रह को रखने के उद्देश्य से बड़ी ही अनिच्छा से श्रीमाली जी ने इस साधना को सबके सामने व्यावहारिक रूप में करके दिखाया। यह अनुभव मेरे लिये आश्चर्यजनक था, सुखदायक था और मन सतुष्टिदायक था।

सम्मेलन में इसके अलावा कई साधनाएँ सबके सामने स्पष्ट की गईं। इन साधनाओं में जो बाधाएँ आती हैं उनको भी सबके सामने रखा गया, साथ ही इन बाधाओं का निराकरण किस प्रकार से हो सकता है या क्या कोई अन्य सरल विधि है जिसके माध्यम से इस प्रकार की विधियाँ प्राप्त की जाएँ, इस पर भी विचार-विमर्श हुआ।

सम्मेलन के अन्त में भूमूआ बाबा के अनुरोध से श्रीमाली जी ने 'कात्यायनी-प्रयोग' करके बताया। यह प्रयोग अत्यधिक जटिल और कठिन माना जाता है। इसके द्वारा एक ही क्षण में कई व्यक्तियों से अलग-अलग रूपों में एक साथ मिलना हो सकता है, अर्थात् जो साधक इस साधना में निष्णात होता है, वह किसी एक निश्चित समय में दस अलग-अलग स्थानों में दस अलग-अलग व्यक्तियों से सशरीर भेंट कर सकता है अर्थात् वह अपने शरीर के कई शरीर बना सकता है। मैंने सुना था कि स्वामी विशुद्धानन्दजी और उडिया बाबा को यह साधना ज्ञात थी, जो भी व्यक्ति उनके सम्पर्क में रहे हैं उन्होंने इसका अनुभव भी किया है।

यह विद्या पूर्णतः 'लौप-विद्या' मानी जाती थी और सभी का लगभग ऐसा अनुमान था कि यह विद्या भारत से अब लुप्त हो चुकी है क्योंकि पिछले १०० वर्षों में इस प्रकार की विद्या जानने वाले के बारे में ज्ञात नहीं हो सका था, परन्तु जब इस सम्मेलन में सभापति के द्वारा इस प्रकार की साधना को सफलतापूर्वक सम्पन्न करके दिखाया गया तो पूरी सभा में आश्चर्यमिश्रित हर्ष ध्वनि की गई।

दस दिन का यह सम्मेलन अपने आप में अन्यतम था। जहाँ तक मेरी धारणा है पिछले पांच हजार वर्षों में भी इस प्रकार का सम्मेलन नहीं हो सका था।

यह सभापति की प्रवृत्तता का एक ज्वलन्त उदाहरण था कि उन्होंने अपने ज्ञान से, अपनी प्रतिभा से, और अपने व्यक्तित्व से इन सभी साधकों को बाधे रखा, अन्यथा विभिन्न साधनाओं से सम्पन्न साधक एक स्थान पर एकत्र हो और परस्पर मतभेद और समस्याएँ पैदा न हो यह आश्चर्यजनक बात थी, इसकी ध्वनि भूमूआ बाबा के समापन भाषण में भी सुनाई दी, उन्होंने कहा कि मैं अत्यधिक परेशान था कि यह सम्मेलन किस प्रकार से सम्पन्न हो सकेगा जब कि सभी साधक एक दूसरे से बड़ चढ़ कर हैं और सभी साधक एक दूसरे पर हावी होने की प्रक्रिया में रत हैं। इसलिये भी चिन्तित था कि कहीं कोई किसी पर मारक प्रयोग न कर दे और समस्या पैदा न हो जाय, पर इस सम्मेलन का पूर्ण श्रेय साधक श्रीमाली जी की प्रवृत्तता

को है जिनके प्रबन्ध से यह सम्मेलन सफलतापूर्वक सम्पन्न हो सका ।

इस सम्मेलन की सबसे बड़ी उपलब्धि यह रही है कि हम एक-दूसरे के सम्पर्क में आ सके हैं, एक-दूसरे के बारे में भली प्रकार से जान सके हैं और एक-दूसरे के विचारों से, उनकी साधनाओं से उनके ज्ञान और उनकी भावनाओं से परिचित हो सके हैं, यह आदान-प्रदान इस सम्मेलन के द्वारा ही सम्भव हो सका, जो कि अपने आप में अन्यतम उपलब्धि है ।

इसके साथ-ही-साथ हम उन सर्वश्रेष्ठ साधनाओं के सम्पर्क में आ सके हैं, जो लुप्त साधनाएँ कही जाती हैं, उन साधनाओं का हमने व्यावहारिक पक्ष इस मंत्र पर देखा और आज हम यह कहने में समर्थ हैं कि हमारी प्राचीन धरोहर आज भी योग्य साधकों के हाथों में सुरक्षित है, आज भी हम उतने ही सम्पन्न हैं जितने कि प्राचीन समय में थे, हम कई वर्षों तक विश्व को ज्ञान देने में समर्थ हैं, हम इस क्षेत्र में अग्रगण्य हैं और हमारे पास जो कुछ भी पूर्वजों का ज्ञान है, वह आज भी सुरक्षित रूप में है ।

श्रीमाली जी ने समापन भाषण में सभी साधकों के प्रति आभार प्रकट किया, जिनकी वजह से यह सम्मेलन पूर्णतः सफल हो सका, विशेष रूप से सिद्धाश्रम में आने वाले साधकों के प्रति उन्होंने विशेष आभार प्रकट किया ।

उन्होंने भाषण के अन्त में चेतावनी भी दी कि हम अपने ही घेरे में आवद्ध न रहे, हमारे पास जो ज्ञान है उस पर सभी का अधिकार है इस ज्ञान को ज्यादा-से-ज्यादा वितरित किया जाए तभी हमारे जीवन की सार्थकता है ।

उन्होंने साधकों का आह्वान किया कि उन्हें अपना जीवन साधना में समर्पित भाव से लगा देना चाहिए, उनको चाहिए कि वे योग्य शिष्यों की खोज करें और उन्हें अपना सम्पूर्ण ज्ञान साधना दें, जिससे कि यह विद्या आगे के जीवन में बनी रह सके और गतिशील बनी रहे ।

उन्होंने उच्चतम साधकों से भी प्रार्थना की कि समय गतिशील है और यदि इसी गति के साथ अपने आपको परिवर्तित नहीं कर सके तो हम सामाजिक धारा से कट जाएंगे और हमारी सारी साधना एक प्रकार में निष्फल हो जाएगी ।

उन्होंने बताया कि प्राचीन काल में जंगलों में जो गुरुकुल होते थे उनके मचालक जंगलों में रहते हुए भी समाज से पूरी तरह सवधित रहते थे, अतः उनके ज्ञान की गंगा समाज में प्रवाहशील रहती थी, परन्तु धीरे-धीरे साधकों ने अपने आपको समाज से परे कर दिया और जंगलों में रहने को ही साधना की पूर्णता मान ली, जबकि यह अनुचित है, क्योंकि इससे हम समाज से कट गए हैं, समाज विश्वाम नहीं करता कि साधना अपने आप में इतनी उच्च होती है जो कि आज के इस वैज्ञानिक युग में भी अपनी श्रेष्ठता और उच्चता सिद्ध कर सकती है । जिन स्थानों पर विज्ञान निष्फल है निरुपाय है, पतञ्जलि है घटा पर नाश्रता मफनता दे मकनी है, हमीलिए विज्ञान में कई गुना ज्यादा बढ़ चढ़ कर यह साधना का महत्त्व है ।

हमको चाहिए कि हम इस प्रकार के साधक तैयार करें जो समाज से जुड़े हुए हों। उन साधकों को हम अपने ज्ञान की गंगा से आप्लावित करें जिससे कि उसकी सुखद फुहार से जनमानस आनन्द प्राप्त कर सकें। यदि रामकृष्ण अपने शिष्य विवेकानन्द को तैयार नहीं करता तो ससार एक बहुत बड़े ज्ञान से वंचित रह जाता, अतः आज इस प्रकार के कई विवेकानन्दों की जरूरत है, जो अपने आपको समाज से जोड़ सकें।

अन्त में उन्होंने कहा, मेरी यह धारणा है कि आपमें से अधिकांश मेरी भावनाओं को समझेंगे और आपके पास जो साधनाएँ हैं जो सिद्धियाँ हैं, उन्हें जनमानस से जोड़ेंगे, जिससे कि समाज इससे लाभ उठा सके।

श्रीमाली जी ने कहा कि मेरा द्वार प्रत्येक साधक के लिए खुला है फिर वह चाहे सन्यासी हो, या गृहस्थी, मेरा प्रत्येक क्षण उनके लिए समर्पित है। वे जिस रूप में भी भृक्षसे साधना का ज्ञान जानना चाहे, मैं उनके लिए तैयार हूँ। मैं चाहता हूँ कि इस प्रकार जीवट वाले युवक आगे आये, जिनके हृदय में कुछ सीखने की प्रवृत्ति हो, जिनकी आँखों में लपट हो, जिनके हृदय में कुछ कर गुजरने की क्षमता हो, जो विपरीत परिस्थितियों में भी अपने आपको सन्तुलित और समर्पित रख सकें, उनका स्वागत है। उनके लिए मेरा प्रत्येक क्षण और यह जीवन समर्पित है।

समापन दिवस अपने आप में ऐतिहासिक था, जबकि प्रत्येक साधक एक-दूसरे से मिल रहा था, एक-दूसरे को ज्ञान का आदान-प्रदान कर रहा था। पहले दिन जो फूट या अहं का दिग्दर्शन हुआ था वह समाप्त हो गया था और इन १० दिनों में सभी साधक एक-दूसरे के अत्यन्त निकट आ चुके थे। प्रत्येक की आँखों में आसू छलछला रहे थे, प्रत्येक की आँखें नम थीं और प्रत्येक विछुड़ते समय ऐसा अनुभव कर रहा था जैसे उनके शरीर से प्राण विछुड़ रहे हों।

इन दस दिनों में श्रीमाली जी ने जितना अथक श्रम किया, वह मेरे लिए आश्चर्यचकित था। मैंने उन्हें एक क्षण भी सोते हुए नहीं देखा, चौबीसों घण्टे निरन्तर कार्य में व्यस्त होते हुए भी उनके चेहरे पर थकावट की कोई रेखा नहीं देखी, उनका चेहरा प्रत्येक क्षण प्रफुल्लित था, उनकी आँखें हर क्षण मार्ग दर्शन देती थी, उनके मन में ऐसा कोई अहं नहीं था कि छोटे साधक से बातचीत न की जाए या व्यस्तता का लबादा ओढ़े रहे, जो भी उनसे मिलता वह अपने आपको धन्य समझता और अपने मन में पूर्णतः तुष्टि अनुभव करता।

अन्तिम दिन सभी साधक, योगी, तान्त्रिक, हठ योगी, अघोरी, मान्त्रिक, और भैरवी—साधिकाएँ श्रीमाली जी से मिलने के लिए व्यग्र थीं। सभी उनसे मिल रहे थे और सभी उनसे विदा लेते समय सिसक रहे थे, ऐसा लग रहा था जैसे वे अपने प्राणों को छोड़ रहे हों। सबसे ज्यादा आसू कपाली बाबा की आँखों में थे, पश्चात्ताप से उनका सारा शरीर घरघरा रहा था और जब श्रीमाली जी विदा हुए तो वह दृढ़-साधक भीड़ को चीरता हुआ आकर श्रीमाली जी के चरणों में गिर पड़ा, उसकी आँखों से

आसू की अजश्रु धारा वह रही थी और सारा शरीर थरथरा रहा था। श्रीमाली जी ने उसे उठाकर अपने गीने से लगाया, उनकी आँखों में भी आसू छलछला आये थे।

यह सारा दृश्य अपने आप में अद्भुत था, इस प्रकार के दृश्य को शब्दों में कैद किया ही नहीं जा सकता। वास्तव में ही एक ऐसा वातावरण बन गया था कि कोई आँख बिना भीगे न रही थी। कोई भी चेहरा बिना गमगीन हुए नहीं रहा था, सभी अश्रुपूरित थे, सभी मितक रहे थे, सभी के चेहरे उदाम थे और सभी ऐसा अनुभव कर रहे थे जैसे वे अपने प्राणों को देह से जाते हुए देख रहे हों।

यह मेरा सौभाग्य था कि श्रीमाली जी ने मुझे साथ चलने की स्वीकृति दे दी थी, हम उन विलपते हुए साधकों से आगे बढ़े परन्तु जितना ही हम आगे बढ़ते उतने ही साधक आ-आकर वापिस घेर लेते। आगे बढ़ना दुष्कर-सा हो गया था।

मैं सोच रहा था साधकों के बारे में तो यह प्रचलित है कि वे बड़े निर्मम होते हैं, असामाजिक होते हैं, उनके हृदय पर कोई प्रभाव ही नहीं होता, उनका हृदय भास-पिण्ड न रह कर पत्थर हो जाता है, परन्तु आज मेरी धारणा खण्डित हो रही थी। मैं उन साधकों को सिसकते हुए, विलपते हुए, रोते हुए और सिसकारियाँ भरते हुए देख रहा था।

राक्षस की तरह विशालकाय त्रिजटा अधोर्नी वृक्षों की तरह फूट-फूटकर रो रहा था, भूर्भुआ बाबा की आँखों में आसू छलछला रहे थे, देवदुर बाबा आसुओं के वेग को रोक नहीं पा रहे थे और पूरा वातावरण ऐसा हो गया था कि सभी श्रीमाली जी से बिछुड़ते हुए अपने आपको निरुपाय अनुभव कर रहे थे।

मैंने पहली बार श्रीमाली जी की आँखों में आसू देखे। वे स्वयं गमगीन थे, परन्तु फिर भी उनकी आँखों में सान्त्वना थी, स्नेह था, अपनत्व और प्रेम था, और इसी भीगे हुए वातावरण से श्रीमाली जी आगे बढ़ गए।

श्रीमाली जी के साथ दो शिष्य और थे जो सम्मेलन से ही उनके साथ हो गए थे। ये दोनों ही शिष्य उच्च कोटि की साधना से सम्पन्न थे और किसी समय श्रीमाली जी के चरणों में बैठकर उन्होंने उच्च मात्रिक और तांत्रिक साधनाएँ सम्पन्न की थी, उनके साथ तीसरा मैं था जिन्हें कुछ दिन साथ रहने की स्वीकृति मिली थी। इस यात्रा में मैंने अनुभव किया कि महापुरुष के साथ यात्रा करने में यात्रा का अर्थ ही बदल जाता है, जो यात्रा हमें नीरस और निष्फल लगती है वही यात्रा किसी साधक के सान्निध्य में प्राणवन्त और जीवन्त हो जाती है, यह यात्रा मेरे लिए अन्यतम थी, अद्भुत थी।

मार्ग में कई स्थानों पर श्रीमाली जी रुके थे और सम्भवतः ग्यारहवें रोज वे जोधपुर पहुँचे थे।

जोधपुर में उनके साथ मुझे लगभग तीन महीने रहने का सौभाग्य मिला। जोधपुर आकर मैंने उनके एक अलग रूप में ही दर्शन किए। यहाँ आकर वे पुनः एक सामान्य गृहस्थ व्यक्ति बन गए थे और ऐसा प्रतीत ही नहीं हो रहा था कि यह

वही व्यक्तित्व है जिसने विश्व के सर्वश्रेष्ठ साधकों के सम्मेलन का सभापतित्व किया था ।

जिन्होंने श्रीमाली जी का वह रूप देखा है, उन्हें इस रूप में श्रीमालीजी को देख कर विश्वास ही नहीं होगा कि यह व्यक्ति साधना के क्षेत्र में सर्वोपरि है, विशिष्ट सिद्धियों का स्वामी है । जिसने श्रीमाली जी के गृहस्थ रूप को देखा है, वह उस रूप की कल्पना ही नहीं कर सकता, इन दोनों ही रूपों में जमीन आसमान का अन्तर है और दोनों ही रूप अपने आप में सर्वथा अलग हैं ।

गृहस्थ रूप में श्रीमाली जी पूर्णतः सामान्य गृहस्थ के रूप में मुझे दिखाई दिए जो प्रसन्नता की बात सुनकर खिलखिला पड़ते हैं, किसी के कष्ट और दुःख की बात सुनकर उदास हो जाते हैं, वे सामान्य आगन्तुक को भी उतना ही महत्त्व देते हैं जितना एक विशिष्ट व्यक्ति को दिया जाता है । उनके साथ बिना किसी औपचारिकता के बैठ जाते हैं, उनकी बात को ध्यानपूर्वक सुनते हैं, उनकी समस्याओं का समाधान करते हैं और वे इस प्रकार व्यवहार करते हैं जैसे पूर्णतः सामान्य गृहस्थ व्यक्ति हो ।

मैं उनके इस रूप को देख कर आश्चर्यचकित रह गया था और आज भी आश्चर्यचकित हूँ कि अगर इतनी सिद्धियों की अपेक्षा एक आध सिद्धि भी किसी के पास होती तो वह जमीन पर पाव तक नहीं रखता, घमण्ड से वह साधारण जन की ओर देखता तक नहीं और अपने अहं में चौबीसों घण्टे डूबा रहता, जबकि इसके सर्वथा विपरीत श्रीमाली जी अत्यन्त साधारण रूप में सबके सामने प्रस्तुत होते हैं, उनसे बातचीत करते हैं और जहाँ तक हो सकता है, अपने विचारों से उन्हें सन्तुष्ट करते हैं । मेरा ऐसा अनुभव है कि उनके द्वार से कभी कोई खाली नहीं लौटता, जो भी व्यक्ति जिस भावना से आता है, उसी भावना से सन्तुष्ट होकर लौटता है ।

मैंने श्रीमाली जी के कई रूप देखे हैं, उनका ज्योतिष रूप अलग है, साठ से ज्यादा ग्रन्थों के वे रचयिता हैं और पूरे भारत में ज्योतिष को लोकप्रिय और जन-साधारण के लिए उपलब्ध बनाने में उनका सार्वधिक योगदान रहा है । आज भी वे निरन्तर ज्योतिष से संबंधित शोध करते रहते हैं और अपने ज्ञान को पुस्तकों के माध्यम से समाज को भेंट करते रहते हैं ।

मुझे लगभग तीन महीने श्रीमाली जी के साथ रहने का सौभाग्य प्राप्त हुआ, मैं तो अपना पूरा जीवन उनके चरणों में बिता देना चाहता था । यह मेरे जीवन का सौभाग्य ही होता कि मेरा आगे का पूरा जीवन उनके चरणों में बीतता परन्तु कुछ विशेष कारणों से और उनकी आज्ञा से मुझे नए कार्य क्षेत्र को सम्मालना पड़ा । पर आज भी मैं मानसिक रूप से श्रीमाली जी से अपने आपको जुड़ा हुआ अनुभव करता हूँ ।

मैं उन तीन महीनों का जब स्मरण करता हूँ तो कई घटनाएँ मेरी आँखों के सामने घूम जाती हैं, एक प्रकार से देखा जाए तो उनके साथ रह कर जो व्यावहारिक ज्ञान प्राप्त होता है, वह अन्यत्र दुर्लभ है ।

मैंने उन्हें निरन्तर श्रम करते हुए देखा है । यदि इस आयु का कोई दूसरा

व्यक्ति होता तो निश्चय ही वह थक कर चूर हो जाता। परन्तु मैंने उन्हें बीस-बीस घण्टे निरन्तर श्रम करते हुए देखा है, और जब तक मैं वहाँ रहा हूँ उनको इसी रूप में काम करते देखा है।

प्रातः चार बजे ही उनका श्रम-स्थान हो जाता है और लगभग पाँच बजे वे पूजा कक्ष में चले जाते हैं, सात बजे से ग्यारह बजे तक वे आगन्तुको से घिरे रहते हैं, इन आगन्तुको में साधारण जन से लेकर उच्च कोटि के नेता और अभिनेता होते हैं, वे न तो किसी से प्रभावित होते हैं और न किसी के प्रति उनके मन में दुर्भावना होती है, सभी को समान रूप से आतिथ्य देना और उनकी समस्याओं का समाधान करना उन्होंने अपना कर्तव्य समझ रखा है, जहाँ तक मैं समझता हूँ उनके द्वार से आज तक कोई खाली हाथ नहीं लौटा। लोग अपनी समस्याओं से ग्रस्त होकर उनके पास जाते हैं और प्रसन्नता के साथ हँसते हुए वापिस लौटते हैं, उस समय उनके चेहरे पर सन्तोष की पूर्ण छाप होती है, क्योंकि उनको जो समाधान मिलता है वह अपने आप में पूर्ण होता है।

ग्यारह बजे से दो बजे तक वे भारतीय ज्योतिष अध्ययन अनुसंधान केन्द्र का कार्य देखते हैं, इस सबब में निर्देश देते हैं तथा व्यक्तिगत पत्रों के जवाब भिजवाते हैं, इसके बाद उनकी मध्याह्न-संध्या होती है फिर भोजन होता है, इस समय उनके घर में जो मेहमान होते हैं उनसे बातचीत होती है और उनकी समस्या का समाधान इसी समय होता है।

इसके बाद वे मध्याह्न साधना के लिए भूगर्भ गृह में चले जाते हैं, शाम को पाँच बजे से आठ बजे तक पुनः आगन्तुको से भेंट करते हैं और उनकी इच्छाओं की पूर्ति इसी समय होती है, संध्या में अधिकतर बाहर से आने वाले उनके शिष्य, सन्यासी साधु और साधक होते हैं, जो उनसे प्रेरणा ग्रहण करने आते हैं या उनसे मार्गदर्शन प्राप्त करते हैं। इस प्रकार यह पूरा समय उनका प्रेरणा रूप ही रहता है, उनके द्वार प्रत्येक साधक, साधु और सन्यासी के लिए खुले हैं, बिना हिचकिचाहट के साधक अपनी जिज्ञासा उनके सामने रखते हैं और बिना हिचकिचाहट के उनको समाधान मिलता है, इस समय उनका गुरु का रूप न होकर एक मित्र का सा रूप बन जाता है।

आठ बजे से ग्यारह बजे तक वे दिन भर की डाक देखते हैं जो कि उनकी व्यक्तिगत डाक होती है, यों तो केन्द्र में नित्य सैकड़ों पत्र आते हैं परन्तु नीति संबंधी पत्र या उनके व्यक्तिगत पत्र इसी समय वे पढ़ते हैं और सचिव को निर्देश देते रहते हैं।

साढ़े ग्यारह बजे के लगभग पुनः भोजन होता है और इस समय घर के सारे सदस्य और आगन्तुक मेहमान एक स्थान पर बैठ कर भोजन करते हैं, इस समय किसी प्रकार का भेदभाव नहीं रहता है, वास्तव में ही इस समय का वातावरण और माहौल एक अलग-सा हो जाता है, क्योंकि इस समय घर के सदस्य होते हैं और भोजन में केवल वे आगन्तुक मेहमान होते हैं जो कि उनके परिवार से संबंधित होते हैं या उनके

अन्यतम है, यह सौभाग्य बहुत ही कम लोगों को प्राप्त होता है और जिसने भी इस वातावरण में इनके साथ भोजन किया होगा वह कभी भी उन क्षणों को भुला नहीं पायेगा ।

भोजन के बाद वे सीधे साधना कक्ष में चले जाते हैं और अपनी साधना में रत हो जाते हैं, सुबह चार बजे उनके मुह से निःसृत वेद ध्वनि पुनः सुनाई देती है जब वे उठ जाते हैं, इस अवधि में अर्थात् साढ़े ग्यारह से चार बजे तक उन्हें साधना कक्ष में ही देखा जा सकता है, पना नहीं वे कब सोते हैं, कब नीद लेते हैं, कब वापस उठ जाते हैं इसके बारे में कुछ भी नहीं कहा जा सकता, वास्तव में ही योगियों की माया योगी ही जान सकते हैं ।

परन्तु इतने श्रेष्ठ योगी होते हुए भी वे घर में अत्यन्त सामान्य गृहस्थ दिखाई देते हैं, धोती और कुरता उनका परिधान है, वे हर क्षण व्यस्त रहते हैं दिन भर सैकड़ों लोगों से मिलना, उनका आतिथ्य सत्कार करना, उनका मार्गदर्शन करना, ज्योतिष से संबंधित कार्य करना, अपनी साधना में और पूजा में रत रहना, तथा शिष्यों को बराबर मार्गदर्शन देते रहना आदि कार्यों के साथ वे अपने गृहस्थ स्वरूप को भी बराबर बनाए रखते हैं । उनको गृहस्थ रूप में देखकर विश्वास ही नहीं किया जा सकता कि यह व्यक्ति तप और मंत्र के क्षेत्र में अद्वितीय है इस व्यक्तित्व के पाम जो सिद्धियाँ हैं वे अन्यतम हैं या यह भारत के श्रेष्ठतम मानिकों और तानिकों में से एक है ।

उनकी वाणी में पूर्णतः नम्रता रहती है । मैंने तीन महीने की अवधि में एक बार भी उन्हें उदास या चिन्तित नहीं देखा, हर समय उनका चेहरा प्रफुल्लित रहता है और सामने वाले व्यक्ति को भी अपने आनन्द में भागीदार बनाए रखता है, सामने वाला व्यक्ति अपनी परेशानियों को बड़ा-बड़ा कर कहता है पर श्रीमाली जी उन्हें नहीं, अपितु धैर्यपूर्वक उसकी बात सुनते हैं, सुनने के बाद वे अपनी मामूली से कुछ भी सहायता कर सकते हैं करते हैं, साथ ही उसे मार्गदर्शन भी देते हैं कि उनकी समस्या का निराकरण हो सके और वह अपने जीवन में सफल हो सके ।

इसके अतिरिक्त मैंने उन्हें इन तीन महीनों में एक क्षण के लिए भी क्रोध करते हुए नहीं देखा । हर समय वे अपने रचनात्मक कार्यों में व्यस्त हैं और जीवन के प्रत्येक क्षण का महत्त्व है और वे उस महत्त्व को सही ढंग से उपयोग करते हैं ।

मैंने सुना था कि उनके गुरु स्वामी सच्चिदानन्द जी का जीवन में भेजा तो उन्होंने आग्रह किया कि मैं पुनः गुरुजी से नहीं हूँ, मेरा विवाह हो चुका है पर मैं अपनी धर्मिक जिम्मेदारियों को नहीं छोड़ूँगी और वह भी मेरी ही तरह साधना पथ अपना रहेगी । मैंने सुना था कि कोई लाभ नहीं है, मैं आपके ही चरणों में दौड़ूँगी । मैंने सुना था कि चाहता हूँ जो कि अगम्य और अप्रत्यक्ष है ।

परन्तु सच्चिदानन्द जी के सामने मैंने जो बातें कही हैं वे सब सच हैं ।

कि इस साधना को और ज्योतिष को पुन विश्व में स्थापित करना है और भारत की खोई हुई इस सम्पदा से पुन भारतीय जनजीवन को अवगत कराना है। अत इसी कार्य की पूर्णता के लिए उनका आग्रह वापिस उन्हें गृहस्थ जीवन में भेजना था।

परन्तु उन्होंने एक अवधि दे दी थी कि इस अवधि तक ही तुम्हें गृहस्थ जीवन में रहना है और तब तक जो कार्य तुम्हें सौंपा गया है, उसे पूर्णता प्रदान करना है, इसके बाद तुम्हें पुन गृहस्थ जीवन छोड़कर सन्यास जीवन धारण कर लेना है और शेष जीवन 'सिद्धाश्रम' में ही व्यतीत करना है।

सिद्धाश्रम एक अगम्य और दुर्गम स्थान है जो कि हिमालय में कहीं अत्यन्त ऊँचे स्थान पर स्थित है जहाँ पर सामान्य मानव का पहुँचना सम्भव नहीं है, सिद्धाश्रम के बारे में कई भारतीय योगियों ने विवरण दिया है और अंग्रेज लेखकों ने भी इस बारे में काफी कुछ लिखा है, तिब्बत के लामा ग्रन्थों में भी इस बारे में काफी कुछ पढ़ने को मिलता है।

कहा जाता है कि साधना की उच्चतम स्थिति आने के बाद ही वह साधक सिद्धाश्रम में जाने के लिये योग्य माना जाता है जिसका सहस्रार कमल खुल चुका होता है और जो तन्त्र या मन्त्र अथवा अध्यात्म के क्षेत्र में सर्वोच्च स्थिति को पहुँच चुका होता है, इसके साथ ही कुण्डलिनी जागरण का वह पूर्ण अभ्येता होता है, इसके बाद उसके सबंध में ज्ञात किया जाता है और फिर उसे सिद्धाश्रम में प्रवेश की अनुमति मिलती है। बहुत ही कम साधक ऐसे होते हैं जो सिद्धाश्रम में जाने के बाद पुन जनजीवन में आ पाते हैं।

सिद्धाश्रम में अत्यन्त उच्चकोटि के योगी और साधक अपनी साधना में रत हैं और यह सुना गया है कि कुछ योगी तो २००० वर्षों से निरन्तर साधना में रत हैं, कुछ योगियों की उम्र ५००० वर्ष से भी ज्यादा बताई जाती है।

उन योगियों के लिये भूत, भविष्य कुछ भी अगम्य नहीं, वे आकाश गमन प्रक्रिया के सिद्धहस्त साधक होते हैं और मन के वेग से वे किसी भी स्थान पर आ-जा सकते हैं, उच्च कोटि की साधना उनके जीवन का अभिष्ट होती है, परन्तु इस सिद्धाश्रम में प्रवेश की कसौटी अत्यन्त कठोर और कठिन होती है। वह साधक निश्चय ही ससार के सौभाग्यशाली साधकों में गिना जाता है, जिनको सिद्धाश्रम में प्रवेश की अनुमति मिल जाती है।

ऐसे तो बिरले ही साधक होते हैं जिन्हें सिद्धाश्रम में जाकर पुन जनजीवन में आने की अनुमति मिलती है। त्रिजटा अघोरी और भूर्भुवा दादा से मुझे ज्ञात हुआ था कि श्रीमाली कई बार वहाँ जा चुके हैं और अब भी रात्रिकालीन साधना में वे वहाँ जाते रहते हैं।

मैंने जब यह जिज्ञासा श्रीमाली जी के सामने रखी तो वे हँसकर टाल गये। उनकी यह प्रवृत्ति है कि जिस प्रश्न का उत्तर नहीं देना चाहते उस प्रश्न को सुनकर सहज में ही टाल देते हैं और बातचीत को किसी और मोड़ पर बदल देते हैं, पर

जिन्होंने श्रीमाली जी के प्रातःकालीन दर्शन किये हो तो वह उस समय उनके चेहरे की दिव्यता देखकर प्रभावित हो जाते हैं और मन यह मानने के लिये बाध्य होता है कि निश्चय ही श्रीमाली जी रात्रि साधना में किसी ऐसे स्थान पर सशरीर रूप से अवस्थित जाते हैं जो कि दिव्य होता है और उसी दिव्यता की छाप उनके प्रातःकालीन क्षणों में देखी जा सकती है।

एक बार मैंने उनसे यह प्रश्न किया था कि आप अद्वितीय साधनाओं के सफल साधक हैं फिर भी आप अत्यन्त सामान्य तरीके से रहते हैं, साधारण गृहस्थी के रूप में आचरण और व्यवहार प्रदर्शित करते हैं। आपके इस रूप को देखकर आभास ही नहीं होता कि आप इतनी सिद्धियों के स्वामी हैं, इससे कई बार साधारण आगन्तुक भ्रम में पड़ जाता है वह पुस्तकों के माध्यम में आपके बारे में जब पढ़ता है तो उनके मानस में एक अलग ही विम्ब उभरता है, वह विम्ब एक असाधारण व्यक्ति का होता है—लम्बा चौड़ा शरीर, गौर वर्ण, लम्बी सफेद दाढ़ी, उम्र लगभग ८०-९० के आस-पास, और एक अद्वितीय व्यक्तित्व, इस विम्ब को लेकर साधारण मानव आपसे मिलने के लिये इतनी दूर भी यात्रा करके आता है तो वह मन-ही-मन आशंकित रहता है कि श्रीमालीजी के दर्शन होंगे भी या नहीं? उनसे मिलना संभव हो सकेगा या नहीं? वे बातचीत करेंगे भी या नहीं? या कई दिनों तक प्रतीक्षा करती पड़ेगी तब जाकर उनके दर्शन हो सकेंगे? आदि कई कल्पनाएँ उनके मानस में इस प्रकार की रहती हैं।

परन्तु जब वह आपके द्वार पर आता है, तो उसे भीड़-भाड़ दिखाई नहीं देती, आडम्बर और छल अनुभव नहीं होता, कोई नीकर द्वार नहीं खोलता, दरवाजे पर कोई पहरेदार नहीं मिलता और सीधे आपसे ही भेंट हो जाती है, द्वार आप स्वयं खोलते हैं और आपका व्यक्तित्व एक सामान्य गृहस्थ व्यक्ति के समान दिखाई देता है, तब वह आगन्तुक हृत्प्रभ हो जाता है, उसका विम्ब खण्ड-खण्ड हो जाता है, वह सहज ही विश्वास नहीं कर पाता कि जो कल्पना श्रीमाली जी के बारे में उसके मानस में थी उसके स्थान पर जो साधारण व्यक्ति उसके सामने खड़ा है, वही आज के युग का सर्वश्रेष्ठ साधक और ज्योतिषिद श्रीमाली है।

प्रश्न सुनकर श्रीमाली जी जोरों से हस पड़े, उन्होंने कहा तो क्या मैं आडम्बर से रहना प्रारम्भ कर दूँ? अपने चारों ओर एक ऐसी दीवार खड़ी कर दूँ जो कि मेरे और जनमानस के बीच में हो। मैं ऐसा नहीं कर सकता, लोगों का विम्ब यदि खण्डित होता है तो होने दिया जाय, मेरे स्वरूप या मेरी आकृति से व्यक्ति प्रभावित होता है या नहीं इसकी मुझे चिन्ता नहीं है, जो व्यक्ति मेरे कपड़ों और मेरे शरीर को देखने के लिये आयेगा उसको अवश्य ही निराशा मिल सकती है परन्तु जो मूल रूप से श्रीमाली जी से मिलने के लिये आयेगा वह मेरे कपड़ों की तरफ नहीं झाँकेगा अपितु वह मेरे मानस से साक्षात्कार करेगा। तब अवश्य ही उसको वह सब कुछ प्राप्त हो सकेगा जिसके लिये वह आया है।

एक अन्य चर्चा के दौरान उन्होंने बताया कि मैं बमत्कार में विश्वास नहीं

करता। चमत्कार वे बताते हैं जो अन्दर से छोजले होते हैं जो समाज में अपना उल्लू सीधा करना चाहते हैं जो इस प्रकार का चमत्कार दिखाकर धनवान बनना चाहते हैं या अपना सम्मान चाहते हैं क्योंकि उनके पास चमत्कार के अलावा ठोस रूप में और कुछ नहीं होता, जो घड़ा भरा हुआ होता है, वह छलकता नहीं, वही घड़ा छलकता है, जो पूरी तरह से भरा हुआ नहीं होता।

मुझे न तो सम्मान की भूख है, और न मैं अपना सम्मान चाहता हूँ, मैं मानव हूँ और केवल मानव बना रहना चाहता हूँ। न मुझे धन सम्पदा की लालसा है, और न मैं धनवान कहलाना चाहता हूँ, इसलिये न तो मैं चमत्कार दिखाता हूँ और न चमत्कार दिखाना पसन्द करता हूँ।

यह अवश्य है कि लोग जब मेरे सामने आते हैं तो उनके दिमाग में कल्पना सृजित कुछ और विम्व रहता होगा और उसकी हार्दिक इच्छा यही रहती होगी कि श्रीमाली जी के सामने जाते ही कुछ अद्भुत अलौकिक चमत्कार देखने को मिलेगा, परन्तु बातचीत के दौरान जब उन्हें ऐसा कुछ भी चमत्कार देखने को नहीं मिलता तो वे अवश्य ही निराश हो जाते होंगे। इतना होने पर भी मैं अपने असूलों से हटना नहीं चाहता। मेरे जीवन का यह निश्चित ध्येय है कि मुझे न तो चमत्कार दिखाना है और न मैं इस प्रकार के कार्य को पसन्द करता हूँ फिर भले ही सामने वाला व्यक्ति मुझमें आस्था रखे या न रखे, मुझ पर विश्वास करे या न करे, मैं इस बात की कतई चिन्ता नहीं करता।

उनका जीवन दर्शन अपने आप में विशिष्ट है, और मैं समझता हूँ कि इसी विशिष्टता के कारण वे आज उस स्तर तक पहुँच सके हैं जो कि अपने आप में अन्यतम है, यदि वे प्रारम्भ से ही चमत्कार दिखाने के फेर में पड़ जाते तो उनका अधिकांश समय इसी प्रकार के कार्यों में व्यतीत हो जाता और जो कुछ वे ठोस रूप में कार्य कर सके हैं वे नहीं कर पाते, आज उन्होंने साधना के क्षेत्र में जो उपलब्धियाँ प्राप्त की हैं, वे तभी संभव हो सकी हैं जब उन्होंने सस्ती लोकप्रियता नहीं चाही और अपने जीवन के प्रत्येक क्षण को ठोस कार्य में परिणत करने में विश्वास रखा।

यह अवश्य है कि यदि वे चमत्कार दिखाते तो आज बहुत अधिक सम्पन्न और धनी हो सकते थे, उनके पीछे हजारों शिष्यों की फौज हो सकती थी और अखबारों के माध्यम से विज्ञापित कर अपने आपको दूसरा भगवान सिद्ध कर सकते थे, परन्तु यह उनके जीवन की मान्यता नहीं है। वे इस प्रकार की धारणा के सर्वथा विपरीत हैं, उनका जीवन दर्शन मानव बने रहना है और मानवता को ही उन्होंने अपने जीवन में सबसे अधिक स्थान दिया है।

सामान्यतः, सहजता, सुगमता, सरलता आदि मानवता के गुण हैं और इन गुणों से श्रीमाली जी पूर्ण हैं, उनके द्वार पर कोई भी व्यक्ति किसी भी समय आ सकता है और अपनी जिज्ञासा को शान्त कर सकता है, उनके मन में न तो किसी के प्रति प्रशंसा का भाव है, और न नफरत, वे विरोधी को भी उतने ही प्रेम के साथ अपने

साथ बिठाकर बात करते हैं, जितनी अपने परम प्रिय शिष्य से करते हैं, यह उनकी महानता है, और मैं जितना ही गहराई में जाता हूँ उतना ही उनके प्रति मेरा सिर नमन हो जाता है।

उनके सामिध्य में कई शिष्य साधना रत हैं, सुना है कि जोधपुर के पास किसी पहाड़ी में कई गुफाएँ बनी हुई हैं जो कि श्रीमाली जी की व्यक्तिगत हैं और उन गुफाओं में साधक, साधना रत हैं, उन साधकों में कुछ साधक तो अत्यन्त उच्च साधना से भी सम्पन्न हो सके हैं और आज उनका नाम श्रेष्ठ साधकों में गिना जाने लगा है, मैंने एक दो बार उन गुफाओं को खोजने का प्रयत्न भी किया था, परन्तु मैं उसमें सफल नहीं हो सका, साथ ही मैं यह काम चोरी से कर रहा था क्योंकि श्रीमाली जी से यदि मैं इस प्रकार की अनुमति लेता भी, तो वे सभवतः अनुमति नहीं देते, उन गुफाओं में वही साधक प्रवेश करने का अधिकारी होता है जो श्रीमाली जी का शिष्य होता है और शिष्यता के मापदण्ड पर खरा उतरता है।

जहाँ तक शिष्यता का प्रश्न है, श्रीमाली जी इस मामले में अत्यन्त कठोर हैं, वे तो स्पष्ट कहते हैं कि मुझे शिष्यों की फौज खड़ी नहीं करनी है, मैं चुनकर शिष्य बनाता हूँ और शिष्य बनाने से पूर्व उनकी कड़ी परीक्षा लेता हूँ। हल्का-फुल्का व्यक्ति सहज में ही उड़ जाता है, आधे मन का व्यक्ति महीने दो महीने में भाग खड़ा होता है, कुछ ही ऐसे सौभाग्यशाली होते हैं जो उनकी कसौटी पर खरे उतरते हैं, और जो शिष्य उनकी कसौटी पर खरा उतर जाता है वह अपने आप में अद्वितीय हो जाता है क्योंकि उसके आगे के सारे रास्ते खुल जाते हैं और वह अपने पथ पर तीव्रता से बढ़ने में सक्षम हो जाता है।

मैंने इन तीन महीनों में देखा कि बाहर से जितने व्यक्ति मिलने के लिए आते हैं उनमें से कई व्यक्ति या नवयुवक उनके शिष्य बनने के लिए आते हैं, उनके मन में एक ही भाव होता है कि उसे श्रीमाली जी तुरन्त शिष्य बना लेंगे और कुछ ही दिनों में वह सिद्धियों का स्वामी हो सकेगा। आते ही उनके मुह से यही भाव निकलता है कि मैं तो पिछले पांच या सात या दस वर्षों से मन-ही-मन आपका शिष्य रहा हूँ और एकलव्य की तरह आपको गुरु मानकर साधना के लिए प्रयत्न करता हूँ, परन्तु मुझे सफलता नहीं मिल पाई है इसीलिए आपके चरणों में उपस्थित हुआ हूँ।

श्रीमाली जी उसकी बात सुनकर हस पड़ते हैं और साधना के बारे में कुछ ऐसा डरावना माहौल उसके सामने उपस्थित करते हैं कि वह अज्ञात भय से घबरा जाता है, साधना का जो भूत उसके सिर पर होता है, वह उतर जाता है और अपने घर के लिए प्रस्थान कर लेता है। इस प्रकार के नवयुवकों को वे एक ही नजर में परख लेते हैं कि यह युवक ज्यादा समय तक सघर्ष नहीं कर पायेगा, यह केवल दिवा-स्वप्न लेकर आया है, अतः उसे समझा-बुझाकर वापस घर भेज देते हैं और उसे यही सलाह दी जाती है कि तुम दो या तीन वर्ष बाद वापस आना। यदि उस समय भी

तुम्हारे मन में साधना की आग सुलगती हुई देखी तो मैं अवश्य ही तुम्हें इस पथ पर बढ़ा दूंगा।

कुछ ही नवयुवक या साधक जीवट वाले होते हैं जो हर प्रकार की परीक्षा और कठिनाई झेलने के लिए तैयार होते हैं। उनकी भाषों में एक विशेष प्रकार की चमक होती है, उनके हृदय में एक कठोर और दृढ़ निश्चय होता है और वे किसी भी प्रकार की बाधाओं का सामना करने के लिए तैयार दिखाई देते हैं। ऐसे साधकों को देखते ही श्रीमाली जी पहचान लेते हैं कि यह हीरा बन सकता है अभी उस पर काफी गर्द जमी हुई है, यदि यह गर्द दूर की गई और पालिश की गई तो आगे चलकर यह अभूत्य हीरा बन सकता है।

पर इतना होते ही उसको शिष्य नहीं बना लिया जाता, अपितु उसे घर के काम-काज के लिए रखा लिया जाता है, यदि वह युवक होता है, तो उसे यह आज्ञा होती है कि वह अपने माता-पिता की स्वीकृति लेकर आवे।

इसके बाद उसे आज्ञा होती है कि तुम यहीं पर कहीं ठहरने का प्रवन्ध करो और कुछ ऐसा भी प्रवन्ध करो जिससे कि तुम्हारे भोजन का निर्वाह हो सके, इसके बाद जो समय बचे वह समय मेरे साथ व्यतीत कर सकते हो, यदि तुम बिना किसी से याचना किए इस शहर में रहने और अपने भोजन की व्यवस्था कर लोगे तो आगे रास्ता तुम्हें मिल जाएगा।

बहुत ही कम ऐसे सौभाग्यशाली होते हैं जिनको श्रीमाली जी के घर में रहने का सौभाग्य मिलता है, पर उसे पहले ही दिन काफी बढ़ा-चढ़ा कर परेशानियों और कष्टों का जिक्र किया जाता है कि यदि तुम मेरे घर में रहना है तो घर का बहुत सा काम करना होगा और कभी-कभी तो बीस-बीस घण्टे भी काम करना पड़ेगा, इस प्रकार के कामों में घर का फूस निकालने से लेकर वायरूम साफ करने तक का काम भी हो सकता है, इस प्रकार के कामों में थकावट या निराशा मैं नहीं देखना चाहूंगा। सालभर तक न तो मैं तुम्हें किसी प्रकार की साधना सिखाऊंगा और न किसी प्रकार की धनराशि काम के बदले में दे सकूंगा।

पर, जो जीवट के धनी होते हैं, वे इस प्रकार की शर्तों से घबराने नहीं हैं अपितु सहर्ष इस प्रकार की चुनौती स्वीकार कर लेते हैं, जान-बूझकर पण्डितजी उनकी परीक्षा लेने के लिए प्रारम्भ में जरूरत से ज्यादा काम सौंप देते हैं या जान-बूझकर बातचीत नहीं करते या जान-बूझकर जरूरत से ज्यादा उसे फटकार देते हैं जिससे कि वह यदि कमजोर होता है, तो भाग खड़ा होता है। परन्तु मैंने देखा कि जो एक बार उनके घर में प्रवेश पा लेता है, वह न घबराने वाला है, न परेशान होता है और न किसी प्रकार की तकलीफ उसके सामने आती है।

क्योंकि उस घर में मात्र पण्डित जी ही नहीं हैं, अपितु एक वात्सल्यमयी मा भी है, जो कि पण्डितजी की पत्नी हैं, उनका स्वरूप पूर्ण गृहस्थ रूप है। सुबह चार बजे से रात बारह बजे तक वे निरन्तर घर के कार्यों में लगी रहती हैं, घर में मेह-

मानों का ताता लगा ही रहता है, उन सबका स्वागत-सत्कार करना, उनके लिए भोजन-शय आदि की व्यवस्था करना आदि सारा कार्य उनके जिम्मे रहता है और किसी को भी आज तक किसी प्रकार की शिकायत करने का मौका नहीं मिला पाया है।

उनका स्नेह-अमृत-वर्षण बराबर गिर्यों पर बना रहता है, उनकी छयच्छाया में न तो किसी प्रकार का अभाव महसूस होता है और न किसी प्रकार की कठिनाई आती है, वे स्वयं अधिक काम होने पर गिर्य में काम न लेकर बुद कर लेती हैं, समय पर उनके भोजन की व्यवस्था करती हैं और ठीक उसी प्रकार से भोजन करती हैं जिस प्रकार वे एक मा अपने श्रवण बच्चे को करती हैं, जबदस्ता में प्रादा भोजन कराना या उसे मौन्य दिनाकर ज्यादा ही खाने के लिए प्रेरित करना उनका स्वभाव है। उनको यह आशय बराबर बनी रहती है कि कहीं यह बच्चा मकोच के सारे भूखा न रह जाए या किसी प्रकार की हमलो नज़ीफ न हो जाए।

शोदीन्ती भी लापरवाही श्रीमाली जी को नहीं होने दी और यदि कभी लापरवाही बरतने पर किसी को डाट मिला जाती है तो तुरन्त हमने ही क्षण उसको मा या स्नेह मिला जाता है, वह उसको पुनःकरती है और उसके लिए खुद श्रीमाली जी की उपायस्य दे देती हैं, कि हम बापक पर इतना कुछ करना कहा न उचित है।

उनके घर में जो गिर्य रहते हैं वे उस वास्तव्यमयी मा का स्नेह निरन्तर प्राप्त करते रहते हैं और उन्हें कुछ ऐसा अनुभव होता है जैसे वे स्वर्ग में हों और जीवन के मधुरतम क्षण वही पर उनको प्राप्त होते हैं।

जैसे हम समनामयी मा का स्नेह देखा है, उनके प्रेम में मैं आप्लावित रहा हूँ और आज जब मैं उनसे काफी दूर हूँ फिर भी जब उस मा का स्मरण होता है तो मेरी आँखों में आँसू छनछन आते हैं। ज्ञान ! मुझे एक बार फिर उनके घर में रहने का अवसर मिले और मैं उस मा का स्नेह प्राप्त कर सकूँ। ज्ञान ! मैं उस मा को कोष में पैदा हुआ होता।

श्रीमाली जी का एक गृहस्थ रूप भी है जिसे बहुत ही कम लोगो ने देखा होगा, वे अपने आप में पूर्ण गृहस्थ हैं और ज्ञानियों में मद्गृहस्थ की ओ व्याख्या है उस कपोती पर वे खरे उतरते हैं। लोगो ने उनके योगी रूप या योगिणी का रूप देखा होगा परन्तु जिस किसी ने भी उनके गृहस्थ रूप को देखा है वह आश्चर्यचकित रह जाता है क्योंकि इस रूप में वे उन सारी समस्याओं को और कठिनाइयों को ध्यान पूर्वक मुनने हैं जिस प्रकार वे एक गृहस्थ अपनी पारिवारिक समस्याओं को मुनता है।

छोटे बच्चों के साथ बात करने समय ऐसा लगता ही नहीं कि यह व्यक्ति प्रौढ़ है या इसने जिनगी के बहुत अधिक उतार चढ़ाव देखे हैं। उस समय उनका स्वभाव मित्रु छोटें शिशु की तरह ही जाता है, उनके साथ वे खेलते हैं और खेल-खेल में स्वयं हार जाते हैं। ऐसा बातवचन बन जाता है कि बच्चे उनको एक क्षण के लिए भी छोड़ना पसन्द नहीं करते, पर पूरे चौबीस घण्टों में ऐसा समय आधा घंटा

ही होता होगा जब वे उन बालको के बीच खो जाते हैं, मैंने उन्हें इस रूप में देखा है और मैं सोचता हूँ कि यह कितना सरल और सात्विक हृदय है जो बच्चों के बीच ठीक उसी प्रकार से बच्चा बन जाता है जैसे कि कोई अन्य बालक हो। उस समय उनके पास पौत्र आकर अपनी माँ की शिकायत करता है, बड़े भाई की शिकायत की जाती है और वे उन सारी शिकायतों को ध्यानपूर्वक सुनते हैं और उसी समय सम्बन्धित व्यक्ति को बुलाकर फटकार भी दे दी जाती है और ऐसा होते समय उस बालक का मीना फूल जाता है कि मैंने बाबा से फटकार दिला दी है, बालको की सुप्रीम अदालत यही है और यहाँ पर वे पूर्णतः सन्तुष्ट होते हैं, दिनभर का जो कुछ गुबार होता है वह इस समय निकलता है और वे हमेशा बालको का ही पक्ष लेते हैं।

ज्योतिष के क्षेत्र में इस अकेले व्यक्तित्व ने इतना अधिक कार्य किया है जितना एक पूरी सस्था भी नहीं कर पाती। जिस समय इन्होंने निश्चय किया था उस समय भारत में ज्योतिष मात्र पण्डितों की धरोहर बन गई थी और वे जो कुछ भी उलटा-सीधा कह देते थे वही आखिरी मूढ़कर मान लिया जाता था, परन्तु उन पण्डितों की ज्योतिष में गहराई न होने के कारण फलादेश अप्रामाणिक होता था, फलस्वरूप लोगों की आस्था ज्योतिष से हटने लग गई थी, एक प्रकार से ज्योतिष जन-समाज से कट गई थी, ऐसी स्थिति में श्रीमाली जी ने ज्योतिष को जन-साधारण में सुलभ करने के लिए अल्पमोली पुस्तकें लिखी और समाज में वितरित की, कम मूल्य की होने के कारण आम आदमी इस प्रकार की पुस्तकों में रुचि ले सका, पुस्तकों की भाषा इतनी सरल है कि वे ज्योतिष में कुछ ज्ञान प्राप्त कर सकें, इस वजह से देश में पुनः ज्योतिष की धारणा और इसके प्रति चेतना बनी और आज भारत में जिस प्रकार से ज्योतिष पुनः लोकप्रिय हो रही है, उसका बहुत बड़ा श्रेय इस व्यक्तित्व को जाता है।

छोटी-छोटी पुस्तकों के अलावा इन्होंने ग्रन्थों की भी रचना की है और उसमें ज्योतिष के मूल सिद्धान्तों को स्पष्ट किया है उन खोई हुई कड़ियों को पुनः इन पुस्तकों के माध्यम से पण्डितों को सुलभ किया है जिससे कि ज्योतिष अपने आप में पूर्णतः प्रामाणिक बन सके, आज पूरे भारत में ज्योतिष को पुनः वही स्थान प्राप्त हो सका है जो कि प्राचीन समय में था।

ज्योतिषियों और विद्वानों ने श्रीमाली जी को आधुनिक 'वराह मिहिर' की सजा से विभूषित किया है, वास्तव में ही आधुनिक ज्योतिष—जो जिस प्रकार से इन्होंने लोकप्रिय बनाया है, और ज्योतिष के लुप्त रहस्यों को उजागर किया है, उस दृष्टि से यदि इन्हें 'वराह मिहिर' कहा जाता है तो वह उचित ही है।

पण्डितजी को मैंने कई रूपों में देखा है और प्रत्येक रूप अपने आप में बढ-चटकर है। ज्योतिष के क्षेत्र में उन्होंने अद्वितीय कार्य किया है और जो कुछ ठोस कार्य हुआ है, उससे आने वाली पीढ़ियाँ मार्गदर्शन प्राप्त कर सकेंगी, इसके अलावा ज्योतिष के गणित और फलित विषयों में समन्वय स्थापित किया है, पंचांगों में जो विविधता और त्रुटियाँ थीं उन्हें सशोधित कर सही ग्रह पथ को स्पष्ट किया है, तांत्रिक क्षेत्र में

यह व्यक्तित्व अद्वितीय है, मन्त्र शास्त्र के क्षेत्र में इन्होंने उसकी मूल ध्वनि को स्पष्ट किया है क्योंकि मन्त्र का मुख्य आधार उसकी ध्वनि और सवधित आरोह-अवरोह है, जब तक मन्त्र के इस मूल रहस्य को प्राप्त नहीं किया जाता तब तक मन्त्र का प्रभाव नहीं हो पाता। इन्होंने मन्त्र की मूल आत्मा, उसका कीलन, उत्कीलन तथा उसकी मूल ध्वनि को स्पष्ट किया है, जिससे कि मन्त्र मूल रूप से पुनः साधको को प्राप्त हो सके। मन्त्र के क्षेत्र में जो कुछ योगदान श्रीमाली जी का रहा है, वह अपने आप में अद्वितीय है और इसका मूल्यांकन मन्त्र शास्त्री तथा तन्त्र मर्मज्ञ ही कर सकते हैं। आज भी मन्त्र अध्येता श्रीमालीजी को मन्त्र के सबध में पूर्णता मानते हैं और उनकी राय में श्रीमालीजी का कथन अन्तिम निर्णित होता है।

वाम मार्गी साधना अत्यन्त दुष्कर और कठिन होती है, क्योंकि इसका अधिकांश भाग 'श्मशान-साधना' से प्रभावित होता है, इस साधना में भी इन्होंने सर्वोच्चता प्राप्त की है जो कि बहुत ही कम साधक प्राप्त कर सकते हैं। 'अधोर-सिद्धान्त' में जो उन्होंने नवीनता दी है वह अपने आप में अन्यतम है क्योंकि इसके माध्यम से यह साधना सहज और सुगम हो सकी है।

पण्डितजी का एक और रूप मैंने आयुर्वेद विज्ञान में देखा है, बहुत ही कम लोगो को यह ज्ञात होगा कि आयुर्वेद के क्षेत्र में भी इन्होंने बहुत कुछ प्राप्त किया है जो कि अन्यतम है। किन्हीं पुस्तक में मैंने पढ़ा था कि सीताराम स्वामी जो कि आयुर्वेद के क्षेत्र में पूरे विश्व में सम्मान के साथ स्मरण किये जाते हैं, उनसे इन्होंने आयुर्वेद का ज्ञान प्राप्त किया था और कुछ विशेष बीमारियों की चिकित्सा में तो ये सिद्धहस्त माने जाते हैं। दमा, क्षय, आदि रोग और उनकी चिकित्सा के बारे में इन्हें अन्यतम ज्ञान है, कई साधुओं, सन्यासियों, नागाओं और अधोरियों के साथ रहने और उनके साथ काफी समय व्यतीत करने के कारण उनसे इस सबध में जो कुछ भी ज्ञान प्राप्त हो सका वह अद्भुत और आश्चर्यचकित है, क्योंकि कई जड़ी बूटियाँ ऐसी हैं जिनका प्रभाव तुरन्त और निश्चित होता है, इन जड़ी बूटियों का श्रीमाली जी को पूर्ण ज्ञान है, और इनके माध्यम से इन्होंने कई दुष्कर रोगों का निदान किया है तथा उसमें उन्हें आश्चर्यजनक सफलता प्राप्त हुई है।

परन्तु इन्होंने अपने आयुर्वेद रूप को कभी भी ज्यादा प्रकट नहीं किया, जिन लोगो को ज्ञात है वे जानते हैं कि ऐसे कई रोगी निरन्तर आते रहते हैं जो सभी वैद्यों और डाक्टरों से थक जाते हैं। इस प्रकार के रोगियों को स्वस्थ करने में इन्हें विशेष आनन्द प्राप्त होता है, इतना होने पर भी उनसे किसी भी प्रकार का व्यय नहीं लिया जाता है, अपितु कई बार तो अपने पास से व्यय करके भी उन्हें स्वस्थ होता देख आनन्द अनुभव करते हैं।

मैंने श्रीमाली जी के बारे में जो कुछ लिखा है, वह किसी भावना के बशीभूत होकर नहीं लिखा है, अपितु जो कुछ मैंने देखा है, जो कुछ मैंने अनुभव किया है, उसे ही कागजों पर उतारा है, मैं मूलतः पत्रकार हूँ और आलोचना मेरा प्रथम धर्म है,

थोड़ी-सी भी त्रुटि या कमजोरी को बढ़ा-चढ़ाकर उजागर करने का प्रवृत्ति पत्रकार में सबसे पहले होती है, मैंने श्रीमाली जी के व्यक्तित्व को आलोचक की दृष्टि से देखा है उसमें न्यूनता और कमजोरी ढूढ़ने का प्रयत्न किया है, परन्तु मैंने जो कुछ देखा है वह अपने आप में पूर्ण रूप में अनुभव हुआ है, उसमें कहीं पर भी छिद्र या न्यूनता दिखाई नहीं दी।

इतना होने पर भी श्रीमाली जी में आज के युग को देखते हुए कई कमियाँ हैं—वे भावुक प्रकृति के हैं और किसी के भी दुःख को देख कर वे तुरन्त दयार्द्र हो जाते हैं और प्रत्येक प्रकार से उनकी सहायता करने के लिये तैयार हो जाते हैं, इस भावुकता के कारण कई लोग अपना झूठा दुःख व्यक्त करके माग कर धन आदि ले जाते हैं और वापस उनसे प्राप्त होने का तो प्रश्न ही नहीं है। आज के इस स्वार्थमय युग में उनकी इस प्रवृत्ति से कुछ कुटिल लोग लाभ उठा लेते हैं, झूठी सहानुभूति प्राप्त कर अपना उल्लू सीधा कर लेते हैं और उनको दुःखमय देखकर श्रीमाली जी प्रत्येक प्रकार से प्रत्येक समय सहायता करने के लिये तैयार हो जाते हैं।

माताजी ने एक दो बार सकेत भी किया कि इस प्रकार लोग झूठी बातें कह कर के या काल्पनिक दुःख की कहानी सुनाकर आपसे लाभ उठा ले जाते हैं, यह तो आपके साथ एक प्रकार से धोखा ही है तो श्रीमाली जी सुनकर मुस्करा दिये और कहा, वह झूठ बोलता है तो मैं सब कुछ समझ जाता हूँ परन्तु फिर भी मैं सोचता हूँ कि यह जो कुछ कर रहा है, इसका फल यह भविष्य में भुगतेंगा ही, मैं अपनी मानवता क्यों छोड़ूँ ? और इस प्रकार यदि वह मुझ से कुछ प्राप्त कर लेता है उसके मन को शान्ति मिलती है तो अच्छी बात है।

श्रीमाली जी में दूसरी कमी यह है कि वे सहज ही दूसरों पर विश्वास कर लेते हैं। इसके कारण कई बार उनके साथ विश्वासघात भी होता है, वे ठगे भी जाते हैं परन्तु ठगे जाने पर भी वे प्रसन्न होते हैं, जब उनको यह बताया जाता है कि उसने आपके साथ विश्वासघात किया है तो वह कहते हैं कि यह उसकी धारणा है वह जिस प्रकृति का होगा वैसा ही तो वह आचरण करेगा, पर उसकी वजह से मैं अपने आचरण को क्यों बदल दूँ ? एक बार मेरे द्वारा इस प्रकार का प्रश्न करने पर उन्होंने एक लघु घटना सुनाई थी।

एक साधु नदी में स्नान कर रहा था, उसने देखा कि एक बिच्छू डूब रहा है। उस साधु ने उस बिच्छू को हाथ में ले लिया जिससे कि वह डूबने से बच जाये, परन्तु बिच्छू ज्यों ही हथेली पर आया उसने डक मार दिया, जोरों से वेदना होते ही साधु के हाथ से बिच्छू छिटक कर पुनः पानी में गिर गया, उसे पुनः डूबते देखकर साधु को फिर दया आ गई और उसे फिर अपनी हथेली में ले लिया, बिच्छू ने दूसरी बार भी हथेली में डक मार दिया, इस प्रकार पाँच-छ बार साधु ने बिच्छू को डूबने से बचाने का प्रयत्न किया और हर बार बिच्छू डक मारता रहा।

पास खड़े उनके शिष्य ने कहा स्वामीजी ! इससे तो आपके शरीर में जहर

फैल जायेगा, आप यह क्या कर रहे हैं ? साधु ने हसते हुए उत्तर दिया कि वह अपने धर्म का और मैं अपने धर्म का पालन कर रहा हूँ । उसका धर्म डक मारना है, और मेरा धर्म उसे डूबने से बचाना है, उसकी दुर्जनता से अपने धर्म को मैं क्यों छोड़ दूँ ।

घटना का तात्पर्य यह, कि सामने वाला विश्वासघात करता है, झूठ बोलता है या धोखा देने का प्रयास करता है, तो यह उसका धर्म होगा, पर उसकी वजह से अपना धर्म या मानवता क्यों छोड़ दूँ ?

श्रीमाली जी की तीसरी कमी उनकी उदारता है, उनके शरीर पर कीमती शाल होगी और यदि उन्होंने किसी साधु को ठिठुरते हुए देख लिया तो वह शाल उसे ओढ़ा देंगे और स्वयं खाली हाथ घर लौट आयेंगे, इस प्रकार उनके द्वारा कई बार आवश्यक वस्तुएं दे दी जाती हैं और ऐसा करके उन्हें प्रसन्नता ही अनुभव होती है ।

आज के छल-प्रपचमय युग में इतना सरल और सात्विक होना भी अपने आप में कठिन है और इतना सघर्ष होने के बावजूद भी इन्होंने अपने मानवीय मूल्यों को नहीं छोड़ा है, क्योंकि दुखी आदमी का दुख वही पहचान सकता है जिसने अपने जीवन में कष्ट उठाये हों ।

उनका एक कठोर रूप गुरु रूप है, मैं समझता हूँ अन्य रूपों में वे कितने ही उदार और नम्र हों, अपने शिष्यों के प्रति वे उतने ही निर्मम और कठोर भी हैं, थोड़ी-थोड़ी कमजोरी या असावधानी उन्हें सह्य नहीं होती । उनकी धारणा यह है कि सोना मूल्यवान तभी होता है जबकि उसे बार-बार आंच में जलाया जाता है, एक बार त्वर्चा के दौरान उन्होंने बताया था कि ये शिष्य मेरे पुत्रवत् हैं एक प्रकार से ये मेरे हृदय के टुकड़े हैं, इन पर कठोरता करने से मुझे अन्दर-ही-अन्दर जरूरत से ज्यादा दुख होता है और बुरा भला कहने पर हृदय में वेदना भी, परन्तु मैं उस वेदना को दबा कर ऊपर से कठोर और निर्मम रहता हूँ जिससे कि वे जिस पथ पर खड़े हुए हैं उस पथ पर आगे बढ़ सकें और अपने लक्ष्य को प्राप्त कर सकें ।

किसी और का शिष्य मात्र शिष्य कहलाएगा, परन्तु यदि कोई मेरा शिष्य होगा तो उसके पीछे मेरा पूरा व्यक्तित्व जुड़ा हुआ होगा, यदि उसमें न्यूनता होगी तो वह उसकी न होकर मेरी ही कहलायेगी, मैं इस प्रकार का कलक या घब्र्रा अपने ऊपर नहीं लगने देना चाहता ।

पिता को उस समय प्रसन्नता होती है जब वह जीवन के क्षेत्र में अपने पुत्र से पीछे रह जाता है या हार जाता है, यदि व्यापार में पुत्र, पिता से भी बढ-चढ कर होता है तो यह अप्रत्यक्ष रूप से पिता को ही गौरव मिलता है, इसी प्रकार गुरु अपने शिष्य से हारने में ज्यादा खुशी अनुभव करता है, यदि गुरु से ही शिष्य आगे बढ़ जाता है या उनसे ज्यादा सफलता अथवा लोकप्रियता अर्जित करता है तो यह अप्रत्यक्ष रूप से उस गुरु का ही सम्मान और गौरव होता है ।

इसीलिये मैं अपने शिष्यों के प्रति कठोर रहता हूँ जिससे कि वे अपने जीवन को सयमित रख सकें, नैतिक मूल्यों में उनकी आस्था बनी रह सके और मानवता के

गुणों से वे परिपूर्ण हो सकें। ऐसा होने पर ही वे आने वाली पीढ़ियों के लिए ज्योति-स्तम्भ का कार्य कर सकेंगे।

मैं अपूर्णता में विश्वास नहीं करता, मैं यह भी नहीं चाहता कि मेरा शिष्य अपूर्ण हो, अपितु मैं उसमें पूर्णता चाहता हूँ और इसीलिये कम-से-कम समय में उसको ज्यादा-से-ज्यादा ज्ञान और साधना देने में तत्पर रहता हूँ, ऐसी स्थिति में उसको ज्यादा परिश्रम करना ही पड़ता है। जो परिश्रम से घबरा जायगा वह मेरा शिष्य बनने के योग्य ही नहीं है।

कठोर होते हुए भी उनके हृदय में स्नेह की गंगा बहती रहती है और शिष्य इस गंगा से आप्लावित रहते हैं, उन्हें गुरु की कठोरता में भी आनन्द आता है, क्योंकि वे यह समझते हैं कि हम सामान्य योगी या माधक के शिष्य नहीं हैं अपितु श्रीमाली जी के शिष्य हैं और ऐसी स्थिति में जरूरत से ज्यादा श्रम करना स्वाभाविक है।

मैं उनके कई शिष्यों से मिला और मैंने पाया कि उनके मन में श्रीमाली जी के प्रति अत्यधिक उच्च आदर की भावना है। जब भी श्रीमाली जी की चर्चा छिड़ती है, तब उनकी आँखों में प्रेम के आसू छलछला पड़ते हैं, उनके मन की साध यही होती है कि वे ज्यादा-से-ज्यादा-गुरु-चरणों में रह सकें और उनसे ज्ञान प्राप्त कर सकें, मैंने यह देखा है कि न तो गुरु देने में सकोच कर रहा है और न शिष्य प्राप्त करने में न्यूनता अनुभव कर रहा है।

श्रीमाली जी का साधक रूप अपने आप में विलक्षण है, उनके भूगर्भ गृह में एक अलग ही साधना कक्ष है जिसमें अन्य किसी का भी प्रवेश पूर्णतः वर्जित है, मुझे केवल दो मिनट के लिए श्रीमाली जी के साथ उस साधना कक्ष में जाने का सीमाग्न प्राप्त हुआ था और मैंने एक विचित्र विद्युत-तरंगों उस कक्ष में अनुभव की थी, उनके तेजस्वी रूप से या मन्त्रात्मक ध्वनि रूप के कारण वह कक्ष अपने आप में विद्युतमय है और सामान्य मानव तो अन्दर जा ही नहीं सकता, क्योंकि अन्दर कदम रखते ही उसे ऐसा झटका लगता है जैसे कि उसने बिजली के नगे तार को छू लिया हो।

विशिष्ट साधना से सम्पन्न व्यक्ति ही उस कक्ष में जाने का अधिकारी माना जाता है, या उनके वे शिष्य जो विशिष्ट साधना में प्रवेश करते हैं, वह कक्ष अपने आप में पूर्णतः भ्रमरमय, चेतन्य और विद्युत ऊर्जा से स्फुलित है। वास्तव में ही वह साधक धन्य है, जिसने उस कक्ष में प्रवेश किया है, या वहाँ पर बैठकर कुछ प्राप्त किया है, मैंने यह देखा है कि कोई भी साधक जब उस कक्ष में बैठता है तो स्वतः ही उसकी कुण्डलिनी जागृत हो जाती है और पूर्ण समाधि लग जाती है जो कि अपने आप में अनिवर्चनीय होती है।

मुझे लगभग तीन महीने पण्डितजी के घर में रहने का सीमाग्न मिला और वे तीन महीने मेरे पूरे जीवन की निधि हैं जिसमें मैंने व्यावहारिक रूप से बहुत कुछ सीखा है, उस घर में मैंने पण्डितजी से श्रेष्ठ साधना का अभ्यास किया है, उनके गुरु का स्नेह और स्नेह को अनुभव किया है। मा का वास्तव्यमय स्नेह मेरी झोली में है,

वच्चो की सरलता और सहजता मेरे जीवन में अनुप्राणित रही है और घर के शान्त और स्वर्गिक वातावरण से मेरा जीवन आप्लावित हुआ है, वास्तव में ही वे तीन महीने मेरे जीवन की सर्वोच्च साधना और उपलब्धि है।

श्रीमाली जी के मकान के भूगर्भ गृह में एक विशाल पुस्तकालय है जिसमें कई हस्तलिखित ग्रन्थ हैं जो कि तंत्र, मन्त्र और आयुर्वेद से सम्बन्धित हैं, ज्योतिष से सम्बन्धित और साधना से सम्बन्धित भी सैकड़ों पुस्तकें हैं, इतना बड़ा पुस्तकालय मैंने अन्यत्र कहीं नहीं देखा। वास्तव में ही साधना से सम्बन्धित ग्रन्थों का जो खजाना इस गर्भगृह में है वह अन्यत्र दुर्लभ है।

मैंने श्रीमाली जी से विशेष अनुरोध कर इन पुस्तकों को कम से जमाने की प्रार्थना की थी और उनसे निवेदन किया था कि वे आज्ञा दें जिससे कि इन ग्रन्थों की सूची बनाई जा सके और प्रत्येक विषय से सम्बन्धित ग्रन्थ अलग-अलग आलमारियों में रखे जा सके, जिससे कि सम्बन्धित साधक उसका लाभ उठा सके।

मेरे अनुरोध को स्वीकार करते हुए उन्होंने इस सम्बन्ध में आज्ञा दे दी थी और पूरे महीने भर मैं इस कार्य में लगभग उन सारी पुस्तकों को क्रमबद्ध कर सका था।

इस दौरान में मुझे कुछ फाइलें मिली जिनमें प्राचीन पत्रों का संग्रह था। इतने पत्रों में कुछ संस्कृत में थे, कुछ हिन्दी और कुछ बंगला भाषा में, सौभाग्य से मुझे इन तीनों भाषाओं की जानकारी है और तीनों ही भाषाओं में भली प्रकार बोल-पढ़ लिख सकता हूँ। अतः मैंने उन पत्रों को पढ़ा तो मुझे ज्ञात हुआ कि वास्तव में ही ये पत्र अपने आप में दुर्लभ हैं।

इसमें से वे पत्र भी मुझे पढ़ने को मिले जो कि श्रीमाली जी ने अपने साधना-काल में माताजी को लिखे थे। माताजी ने वे पत्र सहेज कर रख दिये थे, जो कि फाइल में बन्द थे, वे पत्र वास्तव में ही अन्यतम और दुर्लभ हैं क्योंकि इन पत्रों से श्रीमाली जी के प्रारम्भिक जीवन पर प्रकाश पड़ता है और उस समय उनकी मन-स्थिति का ज्ञान इन पत्रों के माध्यम से होता है।

कुछ पत्र श्रीमाली जी के गुरु योगीराज श्री स्वामी सच्चिदानन्द जी के भी थे, जो कि वास्तव में ही अन्यतम और दुर्लभ हैं, कुछ पत्र श्रीमाली जी के शिष्यों के भी थे जो उन्होंने मार्गदर्शन प्राप्त करने के लिए भेजे थे।

मैंने अनुभव किया कि ये पत्र हमारे साधना जीवन के अमूल्य रत्न हैं और यदि ये प्रकाश में नहीं आये या ये पत्र समाप्त हो गए तो यह साहित्य एक अमूल्य निधि से वंचित हो जायेगा, यदि किसी कुटिल व्यक्ति की नजर में ये पड़ गये तो वह इसका मूल्य समझ कर ले जायेगा।

मैंने इन पत्रों की महत्ता और दुर्लभता अनुभव की और इस सम्बन्ध में एक दिन श्रीमाली जी को प्रसन्नचित्त देखकर याचना की कि इस प्रकार के पत्रों का सम्पादन कर यदि प्रकाशित किया जाये तो यह अपने आप में अन्यतम कार्य होगा

और हम जैसे युवको को इससे प्रेरणा और मार्गदर्शन मिल सकेगा ।

प्रश्न सुनते ही श्रीमाली जी ने तुरन्त मना कर दिया, उन्होंने कहा, मैं इस प्रकार के पत्रों का प्रकाशन उचित नहीं समझता हूँ, क्योंकि इनमें मेरी प्रशंसा हो सकती है और मैं ऐसा नहीं चाहता । वे पत्र कहा पड़े हैं, मेरी राय में इन पत्रों को नष्ट कर देना ही उचित है ।

मैं हतप्रभ रह गया कि यह व्यक्तित्व अपनी प्रशंसा से कितना अधिक कतराता है । मेरे मन ने कहा कि पण्डितजी अपनी प्रशंसा को प्रकाशित करना नहीं चाहेंगे और यदि उन्हें ज्ञात हो गया तो अवश्य इन पत्रों को वे फाड़ देंगे और इस प्रकार तांत्रिक समुदाय एक बहुत बड़ी निधि से वंचित हो जायेगा । मैंने उस समय तो श्रीमाली जी को कुछ नहीं कहा और उसी समय माताजी के आ जाने से विषय परिवर्तित हो गया और बात आई-गई हो गई ।

परन्तु मैंने पुस्तकों को क्रमबद्ध करने के साथ-साथ उन पत्रों की प्रतिलिपियां भी तैयार कर ली और उन प्रतिलिपियों को अपने पास रख लिया, कई पत्र थे, उनमें से वे पत्र जो वास्तव में ही मुझे अमूल्य लगे, उनकी प्रतिलिपियां मैंने तैयार कर ली, मैं चाहता था कि ये पत्र प्रकाश में आवें जिससे कि हम जैसे युवको का इससे मार्गदर्शन हो सके और हम इनसे प्रेरणा प्राप्त कर सकें ।

तीन महीनों में मैंने श्रीमाली जी से जो कुछ सीखा वह मेरे जीवन की श्रेष्ठतम निधि है, उसके बाद समय आने पर उन्होंने मुझे शिष्य रूप में भी स्वीकार किया और दीक्षा दी, मैं उनका चिर श्रुणी हूँ और यह पूरा जीवन उनका श्रुणी रहेगा ।

मैं ये पत्र प्रकाशित कर रहा हूँ, मेरा उद्देश्य मात्र हम शिष्यों को इन पत्रों से प्रेरणा प्राप्त करना है, श्री सच्चिदानन्द जी के पत्र अन्यतम हैं, यह श्रीमाली जी का ही गौरव है कि उन्हें उनके हाथ के लिखे पत्र प्राप्त हो सके, श्रीमालीजी ने भी कुछ पत्र लिखे थे उनकी प्रतिलिपियां भी मुझे कुछ शिष्यों से प्राप्त हुईं । उन शिष्यों ने मुझे वे पत्र तो नहीं दिए क्योंकि गुरुजी के हाथ के लिखे वे पत्र उनके लिए सौभाग्य-दायक हैं परन्तु उन्होंने मुझे प्रतिलिपि करने की स्वीकृति अवश्य दे दी ।

इस प्रकार मैं कुछ पत्र प्रकाशित कर रहा हूँ जो कि अन्यतम और दुर्लभ हैं, यद्यपि मैंने गुरुजी से स्वीकृति प्राप्त नहीं की है और अनजाने ही उन मूल पत्रों की प्रतिलिपियां प्राप्त की हैं यह एक प्रकार का चोरी का कार्य है, परन्तु यह चोरी भी मेरे लिए गौरव की बात है, मैं गुरुजी के प्रति इस कार्य के लिए अपराधी हूँ और इस चोरी के लिए वे जीवन में मुझे जो भी सजा देंगे मैं सहर्ष उसको भोगूंगा । मुझे उनकी उदारता पर भरोसा है और उस महान व्यक्तित्व के प्रति मेरा सिर श्रद्धा से नत है ।

इस पुस्तक में जो पत्र प्रकाशित हो रहे हैं वे मूल पत्र भले ही मेरे पास नहीं हैं, हो सकता है कि इन पुस्तक को देखने के बाद श्रीमाली जी मूल पत्रों को फाड़ दें या भ्राम्य कर दें, परन्तु मेरे पास जो भी प्रतिलिपियां हैं वे मेरे स्वयं के द्वारा तैयार

हैं, मैंने उन मूल पत्रों को देखा है, पढ़ा है वे प्रामाणिक हैं और उनकी प्रामाणिकता पर मुझे विश्वास है ।

आज मैं उन पत्रों को प्रकाशित कर गौरव अनुभव कर रहा हूँ कि ये पत्र हम जैसे साधकों के लिए मार्गदर्शक के रूप में कार्य करेंगे ।

मैं इस संक्षिप्त भूमिका के माध्यम से गुरुजी से क्षमा प्रार्थी हूँ । मेरा उद्देश्य जन-कल्याण है, हम साधकों का मार्गदर्शन है और इसीलिए इस अपराध को करने की हिम्मत जुटा पाया हूँ । इसके लिए मैं अपने आपको गुरुजी के प्रति अपराधी और उत्तरदायी अनुभव कर रहा हूँ ।

मुझे विश्वास है कि इन पत्रों से जन-साधारण लाभ उठा सकेंगे और वे उस महान् व्यक्तित्व के कुछ अंशों से साक्षात्कार कर सकेंगे । यदि जन-साधारण इससे और उस महान् व्यक्तित्व के जीवन और उनके कार्यों से प्रेरणा प्राप्त कर सका तो मैं अपना यह प्रयास सफल समझूँगा ।

वशिष्ठ आश्रम,

उत्तर काशी, उ० प्र०

योगी ज्ञानानन्द

डॉ० श्रीमाली के पत्र अपनी पत्नी के नाम

प्रेषक—डॉ० नारायणदत्त श्रीमाली

स्थान—लूनी

प्राप्तकर्ता—भगवती श्रीमाली

आलोक—डॉ० श्रीमाली जी ने यह पत्र उस समय अपनी पत्नी को लिखा था जब वे साधना के लिये घर से जाना चाहते थे, परन्तु पारिवारिक बन्धन उन्हें वहाँ पर रहने के लिये विवश कर रहे थे, यह पत्र उस समय की मानसिक स्थिति को स्पष्ट कर रहा है कि कितनी अधिक मानसिक चिन्ता और मनोव्यथा उनके मानस में थी और उन्हें अपने आपको साधना के लिये तैयार करने में कितना अधिक मानसिक संघर्ष करना पड़ा था ।

प्रियतमे ।

जिसके साथ तुम्हारे भाग्य की डोर जुड़ी है वह एक विविध विचारों और अनोखी भावनाओं का व्यक्ति है । उसके विचार अपने आप में अलग ही हैं, वह दूसरों के विचारों के साथ अपने आपका तादात्म्य नहीं कर पाता, क्योंकि वह इस बात को अब अनुभव करने लगा है कि उसका जीवन जन्म लेकर साधारण रूप में समाप्त होना ही नहीं है, अपितु उसे अपने जीवन में कुछ ऐसे कार्य करने हैं, जो अपने आप में विलक्षण हों, अपने आप में अलग हटकर हों और जो कार्य साधारण व्यक्तियों से सम्पन्न होना संभव न हों ।

विवाह से पूर्व मैंने कई रातों इस चिन्तन में बिता दी थी कि मुझे विवाह करना चाहिए या नहीं, और धीरे-धीरे मेरी यह धारणा बद्धमूल होती जा रही थी कि मेरा जीवन विवाह के लिये नहीं बना है, क्योंकि विवाह एक ऐसा बन्धन है जिसमें बंध करके व्यक्ति पूर्णतः स्वतंत्र नहीं रह पाता, यद्यपि यह बात सही है कि यह भी जीवन का एक आवश्यक धर्म है, और इस धर्म को मानना व्यक्ति का कर्तव्य है, परन्तु जैसा कि

मैंने तुम्हें बताया कि मैं अपने आपको साधारण स्थिति में नहीं रख पाता, और मेरे मन में एक ऐसी छटपटाहट है, एक ऐसी आग है जिसमें मैं चाह करके भी तुम्हारे सामने व्यक्त नहीं कर पाता ।



श्रीमती भगवती श्रीमाली

शायद तुम्हें ज्ञात नहीं होगा कि जब मेरे सामने विवाह का प्रस्ताव रखा गया तो उस समय सबसे अधिक प्रतिवाद मैंने ही किया था, और अपने माता-पिता के सामने यह बात भली प्रकार से स्पष्ट कर दी थी कि शायद मेरा जीवन गृहस्थ बनने के लिये नहीं बना है, सम्भवतः मैं इस गृहस्थ के दायित्वों को भली प्रकार से वहन नहीं कर सकूँगी, मेरी उदासीनता से एक प्राणी की सारी इच्छाएँ जड़ हो जायेंगी, क्योंकि मेरा चिन्तन, मेरी भावनाएँ और मेरे विचार अपने आप में एक अलग धारणा को लिए हुए हैं ।

मुझे स्वयं कुछ-कुछ ऐसा लगने लगा था जैसे कि मैं अपने आप से खोया हुआ रहता हूँ और आसपास के विचारों को न तो ग्रहण कर पा रहा हूँ और न उनसे सम्पर्कित ही हो पाता हूँ।

शायद मेरे इस प्रकार के विचारों को, मेरे घर वालों ने भाप लिया होगा और उन्होंने ऐसा महसूस किया होगा कि यह लड़का यदि इसी प्रकार अपने खयालों में खोया रहा तो, या तो पागल हो जायगा या सन्यासी हो जायगा, दोनों ही स्थितियों में उन्हें नुकसान था और वे नहीं चाहते थे कि उनके घर का सबसे बड़ा लड़का सन्यासी हो जाय या विवाह के नाम पर अपने आपको तटस्थ बना ले।

इसीलिये मेरी इस प्रकार की मन स्थिति को अनुभव कर उन्होंने विवाह के लिये ज़रूरत से ज्यादा प्रयास करने प्रारम्भ कर दिये। यह बात तुम स्वयं समझ सकती हो कि मेरी यह उन्न विवाह करने की नहीं थी, परन्तु शायद इन्हीं भावनाओं से प्रभावित होकर उन्होंने जल्दी-से-जल्दी विवाह करने की योजना बना ली और मुझे बिना बताये काफी कुछ तैयारियाँ कर ली। उनके सारे प्रयास, सारी योजनायें केवल इसी बात को लेकर के थी कि उनके घर का यह चिराग जलता रहे और आगे यह बश-परम्परा बनी रहे।

मैं मानता हूँ कि उनके विचार अपनी जगह सही थे। हर माता-पिता की यह आकांक्षा होती है कि उसका पुत्र गृहस्थ बने और आगे की पीढ़ियों के निर्माण में योगदान दे।

परन्तु मैं इस बात को जान रहा था कि यह ठीक नहीं हो रहा है। मेरा विवाह एक प्रकार से मेरे लिये बन्धन ही साबित होगा। मैं अपने जीवन में जो कुछ करना चाहता हूँ शायद वह नहीं कर पाऊँगा, क्योंकि उस समय एक ऐसी बेड़ी मेरे पावों में जड़ दी गई होगी, जिसे मैं चाहकर के भी छुड़ा नहीं पाऊँगा। पर—पर मेरे विचारों को माता-पिता ने हवा में उड़ा दिया और मेरा विवाह तुम्हारे साथ हो गया।

इसमें तुम्हारा कोई दोष नहीं है, तुमने विवाह किया है, तुम इस घर की बहू बन करके आई हो, तुम्हारी अपनी भावनाएँ हैं, अपनी इच्छाएँ हैं, अपने विचार हैं और तुम उन विचारों में बराबर खोई हुई रही हो।

मेरे घर में आने के बाद तुमने जहाँ मेरे माता-पिता से प्यार पाया होगा, देवर से चुहल अनुभव की होगी, पर साथ ही तुमने अग्नि को साक्षी बनाकर फेरे खाये हैं उसकी तरफ से तो किसी प्रकार का कोई स्नेह तुम्हें प्राप्त ही नहीं हो रहा है! यह उदासीनता तुम्हारे लिये एक पहेली की तरह दिमाग को उलझा रही होगी। हो सकता है मेरे बारे में तुम्हारे मन में कई प्रकार की भावनाएँ आई होंगी और तुमने कई प्रकार से अपनी उन भावनाओं को शान्त किया होगा।

मैं पिछले काफी समय से तुम्हें खोई-खोई देख रहा हूँ और मैं यह अनुभव कर रहा हूँ कि आते समय तुम्हारे चेहरे पर जो ताजगी और प्रफुल्लता थी, उस पर हल्की-

सी स्याही झाई पड़ती जा रही हैं, इसका कारण जहा तक मैं समझ रहा हू मेरी उदासीनता है ।

वास्तव मे ही तुम अपने आपमे पूर्ण नारी हो, और विवाह के उपरान्त सहेलियो के द्वारा तुम्हारे मन मे कई प्रकार के विचार भरे होंगे, कई प्रकार के सपने तुम्हारी आखो मे तैर रहे होंगे, कई प्रकार की बातें तुम अपने होठो से कहने के लिये आतुर हो रही होगी, परन्तु इतना समय बीतने के बाद भी जब मेरी तरफ से तुम्हे उदासीनता मिली होगी तो वे सपने धीरे-धीरे टूट रहे होंगे, वे कल्पनाए जो कि पूरे जीवन को गुदगुदी देती है बिखर रही होगी और एक प्रकार का झीना आवरण उस पर पड़ रहा होगा ।

मैं जानता हू कि तुम विवाह करके आई हो, तुमने मुझसे बहुत अधिक उम्मीदें लगाई होगी, परन्तु सभ्यत में तुम्हारी उम्मीदो को पूरा नहीं कर सकूंगा । यद्यपि यह बात कहते समय मैं अपने आपको भली प्रकार से पहचान रहा हू । मैं अपने उत्तरदायित्वो से भाग नहीं रहा हू । अपनी जिम्मेवारियो से विमुख नहीं हो रहा हू अपितु मैं पूर्णता के साथ तुम्हारे साथ समझौता कर लेना चाहता हू, जिससे कि तुम आने वाले जीवन मे परेशानिया अनुभव न करो ।

हो सकता है मैं तुम्हे वर्तमान जीवन मे उतना अधिक प्यार न दे सकू जितना कि विवाह के तुरन्त बाद एक पति अपनी पत्नी को देता है, हो सकता है मैं इस प्रकार के इन्द्र धनुषी ज्वाव तुम्हारे सामने नहीं लहरा सकू, जो कि इस उम्र मे लहराने स्वाभाविक हैं । यह भी हो सकता है कि मैं रसिक और मधुर बातें, गुपचुप समापण, चुहल, हसी-मजाक, तुम्हारे सामने नहीं कर सकू, परन्तु इसका तात्पर्य यह नहीं है कि मैं तुमसे उदासीन हू या तुम्हारी उपेक्षा कर रहा हू ।

जब मैंने विवाह कर ही लिया है तो भली प्रकार से सोच-विचार लिया है । मेरा एक कर्त्तव्य जहा अपनी आत्मा की उन्नति करना है वही दूसरी ओर अपने माता-पिता की इच्छाओ की पूर्ति करना भी है । जिस कार्य से उन्हें सुख मिलता है वह कार्य करना मेरा कर्त्तव्य है । एक पुत्र का यह धर्म है कि वह अपने पिता के विचारो को मान्यता दे, माता के कथन का आदर करे और उनको अप्रसन्न करके जीवित न रहे । मैंने ऐसा ही अनुभव किया था कि उन्हें मेरा विवाह होने से ज्यादा प्रसन्नता होगी, उन्होंने भी इस बात को सबसे ज्यादा महत्त्व दिया था और एक दिन तो बातचीत मे उन्होंने यहा तक कह दिया था कि यदि तुम माता-पिता का ऋण उतारने को कह रहे हो तो वह ऋण तभी उतर सकता है जब तुम हमारे कहने को मान्यता दो और विवाह कर लो । मैंने उसी दिन विवाह की स्वीकृति दे दी थी, जिसकी परिणति तुम्हारे साथ विवाह है ।

इतना होने पर भी मैं तुम्हारी भावनाओ को समझ रहा हू, तुम्हारी इच्छाओ को चकनाचूर कर देने का मुझे कोई अधिकार नहीं है, तुम्हारी मान्यताओ को खण्डित

करना मेरा धर्म नहीं है, मैं नहीं चाहता हूँ कि तुम अपने जीवन में उदासीनता के साथ जीवन के क्षण व्यतीत करो, मैं तुम्हें उतना ही सम्मान देता हूँ जितना मैं अपने आपको सम्मान दे रहा हूँ।

मेरी उपेक्षा को तुम किसी और रंग में न ले लो, इसीलिये आज मैं अपने मन की बात साफ-साफ कह देना उचित समझता हूँ। मैंने कई बार अपने मन को दृढ़ किया जिससे कि मैं तुम्हारे सामने सारी बात खोलकर रख दूँ, परन्तु जब भी मैं कुछ कहने के लिये उद्यत होता हूँ तो तुम्हारा मासूम चेहरा देखकर मैं कुछ भी कह नहीं पाता और चुपचाप लेट जाता हूँ। मैंने कई बार अपनी भावनाओं को स्पष्टता के साथ कहने के लिये प्रयत्न किया, पर हर बार तुम्हारे चेहरे का भोलापन मुझे कहने से रोके रहा। तुमने स्वयं यह देखा होगा कि मेरी सारी रात जागते हुए बीत जाती है, मैं करवटें बदलता रहता हूँ और उस समय मेरा पूरा दिमाग परस्पर संघर्ष कर रहा होता है, मैं विभिन्न विचारधाराओं के झझावातों में उलझ जाता हूँ, इस प्रकार धीरे-धीरे अपने सीने पर एक बोझ-सा अनुभव करने लगा हूँ। जब तक मैं अपनी सारी बातें तुम्हारे सामने खोलकर नहीं रख दूँगा तब तक मैं इस बोझ को अलग नहीं कर पाऊँगा और शायद तब तक मैं शान्ति से कुछ भी नहीं कर पाऊँगा।

जैसा कि मैंने तुम्हें बताया कि मेरा जन्म सामान्य रूप से जीवन बिताने के लिये नहीं है, मैं सामान्य रूप से रहना भी नहीं चाहता, मैं नहीं चाहता कि अपनी सुख-सुविधाओं के लिये प्रयत्न करूँ, जीवन में अर्थ को ही सबसे अधिक मान्यता दूँ और अपनी पत्नी के साथ हसी-मजाक, राग-रग, के साथ अपने ये कीमती वर्ष बिता दूँ।

शायद मेरा जन्म इस प्रकार के कार्यों के लिये हुआ ही नहीं है। मैं प्रारम्भ से ही अन्तर्मुखी व्यक्तित्व लिये हुए रहा हूँ, बहुत ही कम बोलकर अपनी भावनाओं को व्यक्त करता रहा हूँ, क्योंकि मेरे मन में छटपटाहट है, मेरे दिल में एक ऐसी आग है जिसे दूसरा सही प्रकार से समझ नहीं पाता है। मैं इस आग को, इस छटपटाहट को जितना ही ज्यादा दबाने का प्रयत्न करता हूँ यह आग उतनी ही ज्यादा भड़कती जाती है, यह छटपटाहट उतनी ही ज्यादा बढ़ती जाती है और पिछले चार महीने में इसी आग को दबाये हुए तुम्हारे पास आता रहा हूँ, परन्तु मैं अपने होठों से एक शब्द भी नहीं कह पाया हूँ, इसीलिये आज मुझे इस पत्र का सहारा लेना पड़ा है जिससे कि मैं अपनी बात को पूर्णता के साथ तुम्हारे सामने रख सकूँ और जीवन के इन प्रारम्भिक क्षणों में एक समझौता कर सकूँ जिससे कि मेरे मन में किसी प्रकार का मलाल न रहे, तुम्हारे मन में किसी प्रकार की विपरीत भावना न बने।

मैं ब्राह्मण युवक हूँ और मेरे मन में यह भावना है कि जब तक मैं इस भारत की कोई हुई विद्या को प्राप्त नहीं कर लूँगा तब तक मेरा जीना व्यर्थ है। मेरे पूर्वज ससार के सर्वश्रेष्ठ विचारवान व्यक्ति रहे हैं, उन्होंने हमारे समाज को जो मान्यताएँ दी हैं, जो विचारसूत्र प्रदान किये हैं वे अपने आप में अप्रतिम हैं, उन्हीं सूत्रों के सहारे उनका

नाम आज तक भी हमारा समाज आदर के साथ ले रहा है। गौतम, कणाद, वशिष्ठ, याज्ञवल्क्य आदि वे विचारवान युगपुरुष थे जिन्होंने अपने जीवन को तिल-तिल करके जलाया होगा, जीवन का अधिकांश भाग अपनी साधना में लगा दिया होगा और सत्सार के सारे सुखों से अपने आपको अलग हटाकर जो कुछ उपलब्धियां प्राप्त कीं, उन अमृत कणों से आज तक हमारा समाज जीवन-रस प्राप्त करता रहा है।

परन्तु अब मैं ऐसा अनुभव कर रहा हूँ कि उनका यह जीवन स्रोत सूख रहा है। यह बात नहीं है कि उनके स्रोत में किसी प्रकार की न्यूनता आ गई है, अपितु आज हमारा समाज एक प्रकार से पथभ्रष्ट हो गया है, उसकी विचारधारा बदल गई है, भुलायी की जजीरो में जकड़ कर वे अपने आपको भुला बैठे हैं। हमारा उच्चतम ज्योतिष ज्ञान आज विदेशियों द्वारा पैरो तले रोदा जा रहा है। हमारे मन्त्री की खिल्ली उड़ाई जा रही है, हमारे तन्त्र-मन्त्र और हमारी साधना एक उपहास का पात्र बन गई है, और यदि इसी प्रकार की स्थिति बनी रही तो एक दिन हम इन अमूल्य विद्याओं से हाथ धो बैठेंगे। हमारे पूर्वजों ने, हमारे ऋषियों ने, जो कुछ ज्ञान, जो कुछ विद्याएं अपने शरीर को जलाकर प्राप्त की थीं वे धीरे-धीरे लुप्त होती जा रही हैं। एक प्रकार से हम कुतप्न होते जा रहे हैं और यह एक दुःखद स्थिति है, जब-जब भी मैं यह सोचता हूँ तब मेरे हृदय में एक तिहरन-सी पैदा हो जाती है कि हम कितने पथभ्रष्ट हो गये हैं, हमारा समाज किस प्रकार से ऐसे रास्ते पर चलने लग गया है जिसका अन्त अन्धकार की काल-कोठरी है। मैं जान-बूझकर इस प्रकार के अंधेरे पथ का राही नहीं हो सकता। मेरे मन में यही एक आग है जो तिल-तिल करके मुझे जला रही है और चाहते हुए भी मैं आनन्द अनुभव नहीं कर पा रहा हूँ, चाहते हुए भी मैं राग-रग में अपने आपको लिप्त नहीं कर पा रहा हूँ।

इस उम्र में जब व्यक्ति चाद से बातें करता है, दूधिया चादनी में अपनी प्रिय-तमा से सभाषण कर आनन्द अनुभव करता है, उस समय मैं अपनी ही आग से भीतर-ही-भीतर दहकता जाता हूँ और तिल-तिल कर अपने आपको जलता हुआ अनुभव करता रहता हूँ।

मेरी एक ही इच्छा है कि मैं साधारण व्यक्ति की तरह नहीं मरूँ, साधारण रूप से घन कमाकर पेट भरना मेरा अभीष्ट नहीं है, राग-रग में मस्त होकर अपने जीवन को बिता देना मेरा उद्देश्य नहीं है, मेरा लक्ष्य, मेरा उद्देश्य केवल मात्र यही है कि मैं ज्योतिष को अत्यन्त ही उच्च स्थान पर स्थापित कर सकूँ और पूरे सत्सार को यह दिखा सकूँ कि भारतवर्ष की यह विद्या अपने आपमें अत्यन्त है, इस विद्या के माध्यम से ही हम इस विश्व में अग्रणी रहे हैं। इसके अलावा तन्त्र-मन्त्र आदि हमारे सामाजिक जीवन के आधार रहे हैं, भारत की चेतना या उसका स्पन्दन इस प्रकार की साधनाएँ ही हैं, जिसकी वजह से भारत भारत बन सका है और पूरे सत्सार का गौरवमय शिरमौर बन सका है।

परन्तु मैं देख रहा हूँ कि मेरा भारत विदेशियों के द्वारा रोदा जा रहा है। हम प्राणयुक्त होते हुए भी चेतनाशून्य हैं। हम अपनी भाषा को भुला बैठे हैं, अपने पूर्वजों के गौरव को विस्मरण कर बैठे हैं और अपने आपको पहचानने से इन्कार करने में गौरव अनुभव करने लगे हैं।

इसके हल के लिये दो ही उपाय हैं एक है राजनीति के माध्यम से इस कार्य को किया जाय और दूसरा साधना के द्वारा अपने पूर्वजों की याती, जो लुप्त होती जा रही है उसे पुनः सहेज कर प्राप्त किया जाय।

पहला रास्ता मेरे लिये उपयुक्त नहीं है, और मैं उस रास्ते पर नहीं बढ़ सकता, इसकी वजाय दूसरे रास्ते को अपनाना मैं श्रेयस्कर समझता हूँ।

जीवन में जितनी अलग विचारधाराएँ होती हैं जो लकीर से हट कर कुछ करना चाहते हैं लोग उसे पागल कहते हैं, और एक पागल की पत्नी बनना कितना दुखदायक होता है, इसकी तुम कल्पना कर सकती हो, परन्तु मैं इस बिन्दु पर तुमसे समझौता करने के लिये ही पकितया लिख रहा हूँ। मैं चाहता हूँ कि तुम मेरे उद्देश्य की पूर्ति में सहायक बनो। मुझे मेरे जीवन के लक्ष्य तक पहुँचाने में मदद करो, और मैं जो कुछ बनना चाहता हूँ, जो कुछ करना चाहता हूँ उसमें तुम भागीदार बनो, यही मेरी आकांक्षा है।

हो सकता है मेरे विचार तुम्हारे लिये अनुकूल न हों। इस समय तुम्हारे मन में इस प्रकार की बातें अनुकूलता पैदा कर ही नहीं सकती। तुम्हारे जीवन का यह यौवनकाल है और इस काल की अलग ही फिलोसोफी होती है, जो समय तुम्हारे लिये राग-रग, मस्ती और भोज का है उस समय मैं तुम्हारे सामने अलगाव की बातें कर रहा हूँ, तुम्हारे लिए मस्ती और प्यार के जो दिन होने चाहिए उन दिनों में मैं दूसरी विचारधारा तुम्हारे सामने रख रहा हूँ, परन्तु मैं यह सब कहने के लिये मजबूर हूँ और मैं चाहता हूँ कि तुम मेरी इन भावनाओं को भली प्रकार से समझो, तब तुम्हें यह महसूस होगा कि मैंने जो रास्ता चुना है वह असामान्य रास्ता चुनने वाले लाखों में दो-चार ही होते हैं। जो फूलों की राह छोड़कर काटों की पगडंडी पर बढ़ जाते हैं, आनन्द का रास्ता छोड़कर अभाव के रास्ते पर चल पड़ते हैं, भोग विलास और ऐश-आराम का परित्याग कर वे अपने लिये परेशानियाँ और कष्टों को निमंत्रण दे देते हैं, परन्तु इस बात में भी सत्यता है कि इस प्रकार का रास्ता चुनने वाले बहुत ही कम होते हैं और ऐसे व्यक्ति ही आगे चलकर समाज को नेतृत्व दे सकते हैं, देश को नई राह दिखा सकते हैं और उनके द्वारा कुछ ऐसे कार्य सम्पन्न होते हैं जिनका लाभ आने वाली पीढ़ियाँ उठाती हैं, उनके बताये हुए या उनके किये गये कार्यों से वे अपने आपको गौरवान्वित अनुभव करने लगती हैं।

मैंने यह निश्चय कर लिया है कि मैं इस समाज में रहकर कुछ भी नहीं कर पाऊँगा, इस घर में रहकर मैं अपने लक्ष्य की पूर्ति नहीं कर सकूँगा, आनन्द और सुख

भोग के द्वारा उस रास्ते पर या उस बिन्दु पर नहीं पहुँच सकूँगा जो मेरा ध्येय है, अतः उस ध्येय की प्राप्ति करने के लिये मुझे इस घर को छोड़ना पड़ेगा, इन समाज से अपने आपको अलग करना पड़ेगा, तभी मैं कुछ विशिष्ट प्राप्त कर सकूँगा और उस विशिष्टता की प्राप्ति के बाद ही मैं अपने आपको पूर्णता दे सकूँगा।

क्योंकि मेरा एकमात्र ध्येय लुप्त विद्या की प्रकाशित करना है, ज्योतिष का खोई हुई प्रतिष्ठा को पुनः स्थापित करना है, और इसके साथ-ही-साथ मन्त्र शास्त्र आदि के द्वारा जो आश्चर्यजनक सिद्धियाँ हमारे पूर्वजों के पास थीं उनको वापस जन-साधारण के लिये सुलभ बनाना है। इसकी पूर्ति घर में बैठकर नहीं हो सकती, समाज के बीच उदर पूर्ति करने में इन विद्याओं की प्राप्ति नहीं कर सकता, क्योंकि जो थोड़े बहुत साधक इस ससार में बच गये हैं और जिनके पास इस प्रकार की अलौकिक सिद्धियाँ हैं, वे भीड़-भाड़ वाले इलाके में नहीं हैं। वे मखमली गद्दों पर नहीं बैठे हैं, वे आराम से जीवन यापन करने वालों के बीच नहीं हैं, अपितु वे उन कन्दराओं में हैं जहाँ भौतिक सुखों का पूर्ण अभाव है, वे उन जगलों में हैं जहाँ पग-पग पर सकट है, वे उन स्थानों पर हैं जहाँ स्वार्थ नहीं है, छल और कपट नहीं है, धोखा और अत्याचार नहीं है, क्योंकि उन्हें इन बातों से कोई सरोकार नहीं है।

मैं उन लोगों के पास पहुँचना चाहता हूँ जो वास्तव में ही सिद्ध पुरुष हैं, जो वास्तव में ही इन विद्याओं के विशिष्ट जानकार हैं, इसके लिये मुझे जगजों में भटकना पड़ेगा, पहाड़ों की गुफाओं में जीवन को बिताना पड़ेगा, और पग-पग पर कण्टो और अभावों को झेलना पड़ेगा।

इस प्रकार की विद्या तभी प्राप्त हो सकती है जब मैं पूर्णतः वीतरागी बनूँ, और सारे सुखों का परित्याग कर दूँ, अपने जीवन का मोह छोड़कर उन साधुओं, सन्यासियों और तपस्वियों की खोज करूँ जो कि विरले स्थानों पर ही विचरण करते हैं, उनका पहचानना भी आसान नहीं है, मैं नहीं जानता कि मैं अपने उद्देश्य में सफल हो सकूँगा या नहीं, परन्तु मेरी आत्मा बार-बार इस बात को कह रही है, कि तुम्हारे लिए वही रास्ता श्रेयस्कर है, उसी रास्ते पर चलकर तुम कुछ प्राप्त कर सकोगे और आने वाली पीढ़ियों के लिये इस प्रकार की विद्या सुरक्षित रख सकोगे।

हो सकता है इस प्रकार की खोज में मैं समाप्त हो जाऊँ। यह भी हो सकता है कि मैं किसी हिंसक पशु की भेंट चढ़ जाऊँ और यह भी संभव है कि मेरे जीवन के अमूल्य वर्ष व्यर्थ में ही बीत जाय और मैं कुछ भी प्राप्त न कर सकूँ, परन्तु इन चिन्ताओं से या इन घटनाओं से विचलित होना मैं नहीं चाहता, इन आशंकाओं को देखते हुए मैं यदि मन मारकर घर में बैठ जाऊँगा तो मेरी आत्मा मुझे कभी भी क्षमा नहीं करेगी। साधारण जीवन जीने की अपेक्षा मैं हिंसक पशु का भक्ष्य बन जाना ज्यादा श्रेयस्कर समझता हूँ, यह मेरा निश्चय है कि या तो मैं कुछ प्राप्त करके ही घर लौटूँगा या अपने आपको समाप्त कर दूँगा, परन्तु यह बात निश्चित है कि मैं खाली हाथ घर नहीं लौटूँगा।

मेरी ये सारी बातें तुम्हारे लिये कष्टदायक है, मैं यह भी अनुभव कर रहा हूँ कि इस प्रकार तुम्हें कष्ट देना किसी भी प्रकार से उचित नहीं है। जो समय तुम्हारे आनन्द का समय है, उन क्षणों में मैं तुम्हें अभाव दे दूँ, यह उचित नहीं है। यह समय तुम्हारे यौवन का है, राग-रग और भस्ती का है, इन प्रसन्नता के क्षणों को मैं उदासी और लम्बी प्रतीक्षा में बदल दूँ यह मेरा धर्म नहीं है, परन्तु फिर भी जब दो स्थितियों की तुलना करता हूँ तो मुझे वह स्थिति ज्यादा प्रिय है और एक बड़े कार्य के लिये यदि मैं अपने आपको त्याग देता हूँ तो एक पत्नी के रूप में तुमसे भी अपेक्षा करता हूँ कि तुम मुझे इस कार्य में सहायता दोगी, मेरे लिये बन्धन नहीं बनोगी।

यह निश्चित है कि मुझसे विवाह करके तुम लाभ में नहीं रही हो, यह भी निश्चित है कि मैं तुम्हें सुख के स्थान पर दुःख ही दे रहा हूँ, आनन्द और प्रसन्नता के क्षणों में अभाव और परेशानियाँ प्रदान कर रहा हूँ, तुम्हारी उम्रों और आशाओं पर मैं एक प्रकार से स्याह आवरण बिछा रहा हूँ और इस प्रकार से तुम्हारे जीवन की सारी स्थितियाँ, सारी उम्रें समाप्त कर रहा हूँ।

मैं नहीं कह सकता कि यहाँ से जाने के बाद मैं वापिस कब लौटूँगा? मैं यह भी नहीं जानता कि मैं अपने उद्देश्य में सफल हो भी सकूँगा। आज तुम यौवनवती हो, मैं जब वापिस लौटूँगा तब तक तुम्हारा यौवन अक्षुण्ण रह भी सकेगा या नहीं? मैं जानता हूँ कि मैं जल्दी वापिस नहीं लौट पाऊँगा। हो सकता है कि मुझे अपने लक्ष्य की प्राप्ति में दस माल या पन्द्रह साल लग जाएँ, और ये दस और पन्द्रह वर्ष तुम्हारे लिये कितने कष्टदायक होंगे इसकी मैं कल्पना कर सकता हूँ।

मैं जानता हूँ कि इन १५ वर्षों में तुम्हारा यौवन चिन्ताओं में धुल जायगा। तुम्हारे चेहरे पर जो ताजगी और प्रफुल्लता है वह दुःखों के आवरण से मिट जायगी, तुम्हारा जीवन एक अभिशापित जीवन बन कर रह जायगा, परन्तु इतना होते हुए भी मैं तुमसे इस प्रकार की जीवन की याचना करता हूँ, जिस रास्ते पर मैं चल रहा हूँ या जिस पथ पर मैंने जाने की तैयारी की है, वह सुगम और सुखदायक रास्ता नहीं है, अपितु इस रास्ते पर पग-पग पर काटे बिछे हैं, हर क्षण, अभाव के साथ जन्म लेकर परेशानियों के साथ व्यतीत होगा। इस रास्ते पर मेरा सारा यौवन धुल जायगा। मेरे चेहरे की काँति अभावों के कारण धूमिल पड़ जायगी, और एक पूरा जीवन अभावों, कष्टों और परेशानियों का केन्द्र बन जायगा, परन्तु फिर भी यह निश्चित है, कि मैं खाली हाथ नहीं लौटूँगा और अपना तथा तुम्हारे यौवन का बलिदान देकर जो कुछ भी प्राप्त कर सकूँगा वह मेरा नहीं होगा अपितु पूरे समाज का होगा, उस पर केवल तुम्हारा और मेरा ही अधिकार नहीं होगा अपितु पूरे देश का अधिकार होगा, परन्तु फिर भी मेरे लिये वह क्षण अत्यन्त ही सुखदायक होगा जब कि मैं कुछ प्राप्त कर सकूँगा।

यदि मैं अपने जीवन में कुछ बन सका तो इसका सारा श्रेय तुम्हारा होगा,

क्योंकि इसके पीछे तुम्हारा त्याग होगा, तुम्हारा बलिदान होगा और तुम्हारे सुख और आनन्द की आहुति उसके पीछे होगी !

आज तुम्हारे चेहरे पर जो ताजगी, प्रफुल्लता और चमक मैं देख रहा हूँ, शायद वापिस आने पर वह मुझे दिखाई न दे । यह भी हो सकता है कि उस समय तुम्हारा शरीर एक लकड़ी की तरह शुष्क और ठूठ की तरह हो जाय, हो सकता है कि तुम्हारे चेहरे पर जरूरत से ज्यादा झुर्रियां देखूँ, परन्तु फिर भी मैं अपने सकल्प पर दृढ़ हूँ, हो सकता है मैं वापस तुम्हें नहीं देख सकूँ या तुम्हें नहीं मिल सकूँ, मेरे आने से पूर्व ही तुम मुझे प्राप्त नहीं हो सको या उस अभियान में मैं ही समाप्त हो जाऊँ, इस समय मैं कुछ भी नहीं कह सकता । मेरे चारों तरफ एक झंझावात है और उस झंझावात में मैं कुछ भी नहीं देख पा रहा हूँ । इतना होने पर भी मैं तुमने सहायता की उम्मीद कर रहा हूँ, और मुझे विश्वास है तुम मुझे इस पथ पर आगे बढ़ने के लिए रोकोगी नहीं, अपितु जोश के साथ, उत्साह के साथ आगे बढ़ने के लिए प्रेरित करोगी ।

शास्त्रों में नारी को सहचरी कहा है, इसका तात्पर्य है कि वह मानव के साथ बराबर कदम-से-कदम मिलाकर चले, इसका दूसरा तात्पर्य यह है कि वह अपने पति की उन्नति में, उसकी प्रगति में सहायक बने, और उसकी आज्ञा का पूर्णता के साथ पालन करे । मैं तुम से ऐसी ही आकांक्षा रखता हूँ । ऋषियों ने नारी को पृथ्वी की तरह सहनशील बताया है, मेरा विश्वास है तुम में ये सारे गुण अवश्य ही होंगे जो कि एक पृथ्वी में होते हैं, वह हर क्षण, हर पल सहन करती रहती है और मैं तुम से एक ही आकांक्षा रखता हूँ कि तुम सहनशीलता की प्रतिमूर्ति बन सको ।

हो सकता है तुम इस पत्र को पढ़कर मुझे मना कर दोगी, पर मना करने से पूर्व एक बार भली प्रकार से सोच लेना कि क्या यह तुम्हारे लिए उचित होगा ? क्या तुम्हारा सारा जीवन एक सामान्य नारी की तरह व्यतीत हो जाए ? क्या तुम चाहती हो कि तुम इन छोटे मोटे घर के कार्यों को करती हुई पशु की तरह अपनी जिन्दगी व्यतीत कर दो ? क्या बच्चों को पैदा करना ही गृहस्थ का सर्वोच्च लक्ष्य है ? क्या हमारा जीवन कीड़े-मकोड़े की तरह भटक-भटक कर भर जाने के लिए है ? निश्चय ही तुम ऐसा नहीं चाहोगी, प्रत्येक नारी की यह कामना होती है कि उसका पति एक विशिष्ट व्यक्तित्व सम्पन्न हो । वह सामान्य प्राणी न हो, अपितु लोगो से अलग हटकर हो, उसके नाम से लोग परिचित हो, उसके ज्ञान से आने वाली पीढ़ियाँ लाभान्वित हो, और वह मानव जाति के लिए एक विशिष्ट योगदान देने में सहायक हो । तुम्हारी कामना भी यह होगी और इसी कामना की पूर्ति के लिए मैं जाना चाहता हूँ ।

तुम स्वयं सोचो कि यदि मैं कुछ प्राप्त करके वापिस आ सका तो वह हमारे जीवन का कितना सुखमय दिन होगा जबकि मैं कुछ प्राप्त कर सकूँ गा, कुछ विशिष्ट बन सकूँ गा, कुछ ऐसी उपलब्धियाँ मेरे पास होगी जो कि अपने आप में अन्यतम होगी

और उस समय गौरव के साथ तुम मेरा नाम उच्चारण कर सकोगी ।

लोग इस बात को अनुभव करेंगे कि मेरे निर्माण के पीछे तुम्हारा बहुत बड़ा सहयोग है, मेरे जीवन के तन्तुओं को अनुकूल बनाने में तुम्हारा बहुत कुछ योगदान रहा है, और तुम्हारे त्याग, तुम्हारे बलिदान की नींव पर ही मैं कुछ बन सकूँगा तथा अपने व्यक्तित्व को, अपने ब्राह्मणत्व को उजागर कर सकूँगा ।

यह पत्र मैं बहुत दुखी मन से लिख रहा हूँ, क्योंकि इस पत्र के प्रत्येक अक्षर के पीछे मेरा स्वार्थ है और जितना मेरा स्वार्थ है उतना ही तुम्हारा त्याग है, परन्तु फिर भी मैं प्रसन्नता के साथ यह पत्र तुम्हें दे रहा हूँ । मैं इस बात को (जो कुछ इस पत्र में लिखा है) अपने होठों से तुम्हें कहना चाहता था, तुम्हें समझाना चाहता था, परन्तु जब भी मैंने इस प्रकार का उत्क्रम किया तब तक मैं रुक गया, क्योंकि मेरे सामने तुम्हारा शान्त और सरल चेहरा आ जाता था । जब-जब भी अपने विचारों को कहने के लिए उद्यत हुआ तब-तब तुम्हारी आयु, तुम्हारी भावनाएँ, तुम्हारी उम्रों मेरे होठों को सी देती थी, और मैं बहुत कुछ कहना चाहते हुए भी कुछ नहीं कह पा रहा था । यह एक प्रकार की मेरी विवशता थी, और इस विवशता के कारण ही मेरा बहुत समय इस उधेड़बुन में बीत गया कि मैं तुम्हें कहूँ या नहीं ?

एक बार तो ऐसा भी विचार आया कि मैं अपनी बात तुम्हें नहीं कह सकूँगा, अपने लक्ष्य की पूर्ति के लिए चुपचाप घर से निकल जाऊँ, किसी को कानोकान खबर तक न हो । परन्तु फिर मेरे पैरों ने अपने आपको रोक लिया, मेरे मन ने कहा यह उचित कदम नहीं होगा, जिसके साथ सम्बन्ध बना है, उसको सारी बात कह देना ज्यादा उचित होगा, अन्यथा वह कुछ भी नहीं सोच सकेगी, कुछ भी नहीं समझ सकेगी और उसका मानस दिग्भ्रमित होकर रह जाएगा ।

इससे पूर्व मैं कई पत्र लिखकर फाड़ चुका हूँ, परन्तु तुम्हारी आँखों की सजलता के सामने रखने की हिम्मत नहीं कर सका हूँ, पर आज कड़े मन से अपनी बात लिख दी है और तुम्हारे सामने इस पत्र के द्वारा रख दी है ।

मैं इस पत्र के उत्तर में अस्वीकृति नहीं चाहता हूँ । मना प्राप्त करने के लिए यह मैं तुम्हें नहीं लिखा । मैं केवल स्वीकृति चाहता हूँ और मुझे विश्वास है तुम प्रसन्नता के साथ उत्साह और उमंग के साथ मुझे स्वीकृति दोगी ।

मेरी आत्मा के सारे सुख तुम्हारे पास गिरवी हैं । मैं केवल यहाँ से भूख, परेशानी, कष्ट, अभाव और कठिनाइयाँ लेकर जा रहा हूँ । आगे का जीवन काटो से भरा है अधकार में टटोल-टटोल कर आगे बढ़ना है, किसी प्रकार की कोई किरण मेरे सामने नहीं है, परन्तु फिर भी मेरी आत्मा का प्रकाश मेरे साथ है और वह मुझे सही रास्ता दिखा सकेगा ।

इतना विश्वास करो कि यदि मैं लौटा तो खाली हाथ नहीं लौटूँगा, क्योंकि मेरी आत्मा, मेरा विश्वास, मेरे साथ है और इससे भी बढ़कर मेरे साथ है तुम्हारा त्याग, तुम्हारा स्नेह, तुम्हारी कामनाएँ और तुम्हारा बलिदान ।

मैं तुम्हारी झोली में इस समय खुशियाँ डालकर नहीं जा रहा हूँ, इस समय तो मैं एक लम्बी अन्तहीन उदासी, बेवसी, बेचैनी और इन्तजार ही देकर जा रहा हूँ, जिसे तुम्हें पार करना है। फिर भी इतना विश्वास रखना कि मैं अवश्य लौटूँगा, जरूर लौटकर आऊँगा।

मेरी समस्त शुभकामनाएँ तुम्हारे साथ हैं, मेरे प्राणों का अमृत वर्णन तुम्हारे पथ को सुखदायक बना सकेगा, ऐसी मुझे आशा है।

स्नेह युक्त
(नारायणदत्त श्रीमाली)

प्रेषक डा० नारायणदत्त श्रीमाली।
स्थान अज्ञात
प्राप्त कर्ता भगवती श्रीमाली

आलोक यह पत्र डॉ० श्रीमाली जी ने अपनी पत्नी को घर से जाने के लगभग ३ वर्ष बाद लिखा था और इन तीन वर्षों में उन्होंने कितना अधिक मानसिक और शरीरिक संघर्ष किया था, उसकी एक क्षीण झाँकी इस पत्र के माध्यम से प्राप्त होती है। साधक को कितना अधिक मानसिक संघर्ष करना पड़ता है यह पत्र उसका प्रमाण है और साधकों के लिये प्रकाशस्तम्भ भी।

प्रियतमा भगवती !

घर को छोड़े हुए आज लगभग ३ वर्ष बीत गये हैं, पूरे एक हजार दिन, कुछ इससे ज्यादा ही, पर इस लम्बी अवधि में मैंने एक बार भी घर से सम्पर्क स्थापित नहीं किया, एक बार भी पत्र के द्वारा अपने वारे में मैंने कुछ नहीं लिखा, एक बार भी अपनी व्यथा, अपने दुःख दर्द को तुम्हारे पास नहीं भेज सका, परन्तु इसका यह मतलब नहीं है कि मैं तुम्हें विस्मरण कर बैठा हूँ। घर को पूरी तरह से भुला बैठा हूँ, मुझे इस घर की बराबर याद बनी रही है, और प्रत्येक क्षण मैं तुम्हारे दुःख दर्द के चिन्तन में भागीदार बना रहा हूँ।

इतना होते हुए भी मैं नहीं चाहता था कि मेरा और घर का सम्पर्क सूत्र जुड़ा रहे, क्योंकि इससे फिर एक समस्या पैदा हो जाती। मेरा हृदय डबाडोल हो जाता। संभव है मेरे पावों में फिर से बेड़ी डालने की कोशिश की जाती, मुझे विचलित करने का प्रयत्न किया जाता और इसीलिये मैं स्वयं अपने स्वयं के दर से भागता रहा।

मैं जानता हूँ कि ये तीन वर्ष कम नहीं हैं। पूरे १००० दिन तुम से अलग होकर मैंने जंगलों में बिता दिये हैं। मुझे वह क्षण याद है जब मैं तुमसे अलग हो रहा था। तुम्हारी आँखों में जो झरझर आसू बह रहे थे उनकी टीस इस समय भी मेरे

क्या अधिकार था ? उसकी उमरों को समाप्त करने का मुझे क्या हक था ? जब-जब भी मैं इन बातों को सोचता हूँ तो मेरी आँखों की नींद उठ जाती है, और पूरा दिमाग गरम होकर लावे की तरह उबलने लग जाता है ।

मैं जानता हूँ कि तुम उस माहौल में सुखी नहीं हो, क्योंकि हमारा समाज एक दकियानूसी और सकीर्ण विचारों से ग्रस्त है । जहाँ पग-पग पर नारी के पावों में बेडिया डाली हुई हैं, और उन बेडियों को देखकर, उसकी विवशता और छटपटाहट को देखकर पुरुष समाज अपने आप पर, अपने कृत्य और कुशलता पर प्रसन्न है ।

पर ये बेडिया भी, अभाव दुःख और कठिनाइयाँ भी वह नारी झेल लेती है, यदि उसे पति का साहचर्य मिल जाय, परन्तु तुम्हें तो वह भी नहीं मिल पाया, जिसके भरोसे तुम इस घर में आई थी । वह भरोसा ही अपने म्यान से भाग खड़ा हुआ, जिस विश्वास और सम्बल को लेकर तुम यहाँ आई थी । वह आधार ही तुम्हारे नीचे से हट गया, और तुम आधारहीन, बेवस, निरीह सी होकर दिन को शरीर तोड़ परिश्रम करती होगी, और रात के अँधेरे में आसुओं से तकिये को सिसक-सिसक कर भिगोती होगी ।

मैंने तुम्हारे शरीर की कोमलता को अनुभव किया है, और साथ ही अपने घर के कठोर कार्यों के भी निकट सम्पर्क में रहा हूँ, जहाँ प्रातः चार बजे से रात बारह बजे तक काम के अलावा कुछ भी नहीं होता । जिस घर में आराम को अभिशाप समझा जाता है, चक्की चलाना, दूर स्थानों से पानी लाना, भाँयो को दुहना, भोजन पकाना, गोबर लोपना, और घर के सँकड़ों कार्यों को करने के बाद भी उपेक्षा और ताने सुनना—कितना कठिनाईपूर्ण, कितना दुःखदायी होता होगा और तुम उस यंत्रण की चक्की में पिस कर तिल-तिल कर अपने आपको खाककर रही होगी ।

अन्य स्त्रियों को तो दिन भर के जी तोड़ परिश्रम के बाद पति का कुछ साहचर्य मिल जाता है परन्तु तुम तो उससे भी वंचित हो । तुम्हारी आँखों में आसूँ तैर जाते होंगे परन्तु उनको पोछने वाला वहाँ कोई नहीं है, जब परिश्रम से शरीर दूढ़ रहा हीगा तब भी तुम्हारा हालचाल पूछने वाला उस परिवार में मुझे कोई नजर नहीं आता, क्योंकि मैंने उस परिवार की भोगा है जहाँ पर वह को पैरों की जूती समझा जाता है । जहाँ पर यह देखा जाता है कि वह का कार्य केवल पशु की तरह काम करना होता है, आराम की इच्छा करता उसके अधिकार क्षेत्र के बाहर की बात होती है, वास्तव में ही तुम जितने कष्ट में, जितनी यंत्रणा पूर्ण स्थिति में अपना समय व्यतीत कर रही हो, उसको सोच कर मैं कांप उठता हूँ । तुम्हारा दुर्बल शरीर इतने थपेड़ों को किस प्रकार से झेल पाता होगा, क्या इतने थपेड़े झेलने के बाद तुम आज तक बची भी रही हो या नहीं, मैं कुछ भी नहीं कह सकता ।

परन्तु इस बात को भली प्रकार से समझ लो, कि जीवन में अलौकिकता तभी प्राप्त हो सकती है, जबकि उसके पीछे कष्टों का लम्बा इतिहास हो, त्याग की नींव पर ही कुछ विशेष अलौकिक कार्य सम्पन्न हो सकते हैं । यदि मैं चाहता तो एक

सामान्य जीवन जी सकता था। मुझे किसी प्रकार की कमी नहीं थी, घर में मा-बाप थे, भाई-बहन थे, सुन्दर पत्नी थी, आनन्ददायक क्षण थे और मैं कहीं पर भी छोटी-मोटी नौकरी कर अपना पेट पाल सकता था।

परन्तु तुम स्वयं यह सोचो कि ऐसे साधारण जीवन को क्या जीवन कहा जा सकता है? मेरे जैसा पागल शायद ही कोई होगा जिसने खुशियों को छोड़ कर दुखों के साथ समझौता किया हो। आनन्द को त्याग कर अभावों के साथ रहने में प्रसन्नता अनुभव की है। भोग और विलास को छोड़कर परेशानियों, कष्टों और दुखों से नाता जोड़ा है, परन्तु मैंने यह सब अपने सीने पर पत्थर रखकर किया है, क्योंकि मेरी एक ही भावना, लालसा और इच्छा थी कि मैं सामान्य मानव बनकर नहीं रहूँ। मेरे ब्राह्मणत्व को धिक्कार है, यदि मैं कुछ विशिष्टता प्राप्त नहीं कर सकूँ, ज्योतिष के क्षेत्र में पूर्णता नहीं ला सका, तब और मन्त्रों के अलौकिक रहस्य को उजागर नहीं कर सका, और मेरे देश की जो यह विशिष्ट थाती है उसे पुनः समाज को नहीं सौंप सका।

तुम्हें छोड़ने के बाद मैं एक क्षण भी आराम से नहीं जी सका हूँ, इसके पीछे कोई भोग या वासना की वान नहीं है, अपितु मेरे मन की यह विडम्बना है कि मैं जिस रास्ते पर चला हूँ क्या वह उचित है? मैं जो कुछ करने जा रहा हूँ, क्या मैं उस कार्य को कर सकूँ। मेरे सामने जो लक्ष्य है क्या मैं उस लक्ष्य को पा सकूँ। इस प्रकार के सैकड़ों प्रश्न मेरे मानस में बराबर घुमड़ते रहे हैं और इन विचारों के अधः ने एक क्षण के लिये भी मुझे चैन से सोने नहीं दिया है।

मेरे पत्र को पढ़ते ही तुम्हारे होठों ने बुदबुदाया था कि यह पागलपन है और आज मैं वास्तव में ही अनुभव कर रहा हूँ कि मैं पागल हूँ। इन तीन वर्षों में मैंने इस शब्द पर कई बार विचार किया है और मैं यह अनुभव कर रहा हूँ कि वास्तव में ही मुझमें इस प्रकार की स्थिति है। पर विना पागल हुए कोई भी वस्तु प्राप्त नहीं हो पाती। विद्यार्थी जब अपनी डिग्री के लिये पागल हो जाता है, रात-रात भर जागता है उसकी भूख और प्यास सब जाती है तब जाकर कहीं उसे सफलता मिलती है। भक्त अपने प्रभु के पीछे पागल हो जाता है, उसे न अपने शरीर का होश रहता है और न खानपान का, तब उसे उस प्रभु के दर्शन हो पाते हैं। तुलसी, सूर, मीरा, आदि एक प्रकार से पागल ही थे, उनका पूरा जीवन अपने लक्ष्य के पीछे पागल बन जाता था और इस पागलपन के बाद ही वे अपने लक्ष्य तक पहुँच सके थे। वास्तव में ही विना पागल हुए कोई वस्तु प्राप्त नहीं हो पाती, इस दृष्टि से मैं पागल हूँ और आज इस बात को अनुभव कर रहा हूँ कि मैं भी अपने लक्ष्य के पीछे जब तक पागल नहीं हो जाऊँगा तब तक मुझे अपना लक्ष्य प्राप्त नहीं हो सकेगा।

तुम्हारे होठों ने मुझे पागल कहा है तो वास्तव में ही मैं पागल हूँ और मैं चाहता हूँ कि तुम भी मेरे विचारों का अनुसरण करती हुई पगली बनो। हमारा पूरा धर्मशास्त्र इस बात पर एक मत है कि पत्नी की गति पति के अलावा कुछ भी नहीं।

पति ही उसका गुरु, उसका पथ-प्रदर्शक और उसका सर्वस्व होता है, 'पतिरेको गुरुः स्त्रियाम्' मनु ने कहा है कि पत्नी को अपने आप में उसी प्रकार का आचरण और व्यवहार ढाल लेना चाहिए जिस प्रकार उसका पति हो, इसीलिये धृतराष्ट्र की पत्नी ने जब देखा कि उसका पति अन्धा है तो उसने भी जीवन भर के लिये अपनी आँखों पर पट्टी बांध ली। वेदव्यवस्था की पत्नी ने उसी प्रकार अपने जीवन को ढाल दिया था जिस प्रकार से उसका पति था। दानव्य एक मिथ्यारी था परन्तु वह उच्चकोटि का विद्वान भी था। यद्यपि उसकी पत्नी राजा की पुत्री थी फिर भी उसने पति के समान ही याचनावृत्ति को अपना लिया था। इसी प्रकार—यदि तुम्हारे हाँठों ने मुझे पागल कहा है तो मैं भी चाहता हूँ कि तुम पगली बन सको और अपने जीवन के त्याग से, मुझे बदल सको जिससे कि मैं अपने लक्ष्य तक पहुँच सकूँ।

मेरा प्रथम पागलपन यह है कि मैं सुख-सुविधापूर्ण जीवन को सही जीवन नहीं मानता। मुझे यह देखकर दुःख होता है कि मेरे देश के साठ करोड़ नर-नारी पराधीनता के जुए से बंधे हैं उनमें से कुछ मुट्ठी भर लोग सम्पन्न हैं, बाकी पूरा देश अभावों की चक्की में पिस रहा है, उनके पास खाने के लिये भोजन, पहनने के लिये पूरा वस्त्र तथा सोने के लिये छत तक नहीं है। ऐसी स्थिति में यदि मैं आराम का जीवन व्यतीत करता हूँ तो यह मेरे लिये अनुकूल नहीं है, मुझे कोई अधिकार नहीं है कि मैं भरपेट भोजन करूँ, रंग-रेलियाँ मनाऊँ या आनन्द के साथ अपने जीवन को व्यतीत करूँ। मैं चाहता हूँ कि उन दुखियों के अभावों को दूर कर सकूँ, उनके आसुओं को पोछ सकूँ, उनके अभावों, बाधाओं और परेशानियों में भागीदार बन सकूँ।

मेरा दूसरा पागलपन यह है कि मैं ब्राह्मण हूँ और अपने ब्राह्मणत्व को पहचान सका हूँ। मेरे पूर्वज उच्चकोटि के ब्राह्मण थे। उनके पास अलौकिक सिद्धियाँ थी, ज्ञान का अक्षय भंडार था, ज्योतिष के क्षेत्र में वे अद्वितीय थे। काल को अपने चिन्तन के माध्यम से उन्होंने बांध रखा था, और भविष्य की उन अंधेरी छाड़ियों में वे सफलतापूर्वक झाँकने में सफल हो सके थे, जहाँ पर सामान्य मानव की दृष्टि नहीं जाती।

पर आज वे विद्याएँ कहाँ हैं, ज्योतिष को सही रूप में जानने वाले इस देश में कितने हैं? तंत्र और मंत्र की वास्तविकता कहाँ पर है? आकाश-गमन तथा परदेश गमन की सिद्धियाँ कहाँ हैं? पर—पर—यह सब कुछ मेरे देश में था। हम ब्राह्मणों के पास इस प्रकार की सिद्धियाँ थी कि हम अपने शरीर में से प्राण निकाल कर विजीव शरीर में प्राणों का संचार कर सकते थे। यह बहुत दूर की बात नहीं है, शकराचार्य ने ऐसा कर दिखाया था—पर आज ये सब कल्पनाएँ बन गईं। हमारे ज्ञान का मखौल उड़ाया जा रहा है, हमारी विद्याएँ उपहास का पात्र बन गई हैं, हमारे ब्राह्मणत्व पर लाछन लगाया जा रहा है, और इतना सब कुछ होते हुए भी हमारे कानों पर जू तक नहीं रेंगती। हम अपने ही राग-रग में मस्त हैं, अपने ब्राह्मणत्व को भुला बैठे हैं, अपने पूर्वजों की थाती लोप हो रही है और हम आनन्द से जीवन जी रहे हैं। क्या यह उचित है? क्या इस प्रकार हम इन विद्याओं से अलग नहीं हो जायेंगे? क्या कुछ

समय बाद इस प्रकार की अलौकिक सिद्धियों से हमारा देश वंचित नहीं हो जायेगा ? ये और इस प्रकार के सैकड़ों प्रश्न मेरे मानस में घुमड़ रहे थे और उस दिन मेरे हृदय को सबसे अधिक चोट लगी, जिस दिन एक साधु ने मुझे यह कहा कि ब्राह्मण अपने आप में समाप्त हो गया है। कुछ समय बाद ब्राह्मण उस व्यक्ति को कहा जायगा जो केवल पेट भरने को ही अपना जीवन समझता हो, और अपनी उदरपूर्ति के लिये यजमान को ईश्वर से भी ज्यादा मान्यता देता हो।

और मैंने उसी दिन निश्चय कर लिया था कि मैं इस ब्राह्मणत्व को लोप नहीं होने दूंगा। यदि प्रभु ने मुझे शरीर दिया है तो यह शरीर एक सामान्य जीवन बन कर नहीं रह पायेगा। जब तक यह कुछ विशिष्टता प्राप्त नहीं कर लेगा तब तक मैं अपने जीवन को जीवन नहीं कहूंगा, फिर मेरे और कीड़े-मकोड़ों के जीवन में फर्क ही क्या रह जायगा ?

पर इस प्रकार की आलौकिक सिद्धियाँ, तंत्र, मंत्र वाजारों में नहीं विकते। गली-कूचे में फिरने वाले साधुओं के पास इस प्रकार का ज्ञान नहीं होता। इस प्रकार के व्यक्ति ससार से उदासीन हैं, समाज से कटे हुए हैं, और प्रकृति की गोद में, उसके साहचर्य में अपने आपको लिप्त किये हुए हैं। मुझे उन लोगों तक, उन साधुओं तक, उन विशिष्ट भूतियों तक पहुँचना है, जिनके पास इस प्रकार की अलौकिक सिद्धियाँ हैं।

आज की नई पीढ़ी ने पेंट और कोट पहनना, अग्रेजी बोलना और विदेशियों की तरह रहन-सहन अपनाना अपने जीवन का धर्म मान लिया है। ब्राह्मण का बेटा क्लर्क बना अपना गौरव समझने लगा है, ऐसी स्थिति में यह विद्या कैसे सुरक्षित रहेगी। मैंने इस बात को अनुभव किया कि जिन विभूतियों के पास यह ज्ञान है वे इने-गिने ही रह गये हैं, और यदि वे समाप्त हो गये तो यह दुर्लभ ज्ञान, यह अलौकिक सिद्धियाँ उनके साथ ही समाप्त हो जाएंगी।

इसीलिये मैं अपने जीवन को सामान्य रूप से नीकरी करके विताना पाप समझने लगा था। समाज को आगे बढ़ाने के, उसे जिन्दा रखने के, कई प्रकार हैं। राजनीति के द्वारा भी समाज में चेतना दी जा सकती है। क्रांति के द्वारा भी समाज को आगे बढ़ाया जा सकता है, परन्तु इस प्रकार से जो समाज बनता है वह खोखला होता है। क्योंकि वह देह तो सुन्दर बन जाती है परन्तु उसकी आत्मा शून्य होती है। उस आत्मा में स्पन्दन इस प्रकार के ज्ञान की चेतना के द्वारा ही दिया जा सकता है, और इसीलिये मैंने इस रास्ते को अपनाया, यदि यह मेरा पागलपन है तो मैं इस पागलपन पर खुश हूँ। मैंने आनन्द का जीवन छोड़कर दुखों का जीवन स्वीकार किया है। खुशियों को त्याग कर अभावों के साथ रहने में प्रसन्नता अनुभव करने लगा हूँ। राग-रग, भोग-विलास आदि को छोड़कर जंगलों में भटकना, भूमि पर सोना तथा कठिनाइयों, परेशानियों, भूख और अभावों को साथ लेकर पहाड़ों में झर-उधर पागलों की तरह भटकना मैंने स्वीकार किया है—और मैं आज इस बात को मानता हूँ कि

मैं जिस रास्ते पर चल रहा हूँ वह रास्ता इतना आसान नहीं है, उसमें काटे-हो-काटे हैं, फूलों की कल्पना करना ही मूर्खता है।

मेरा तीमरा पागलपन यह है कि मैं किसी भी कीमत पर उन लुप्त विद्याओं को प्राप्त करना चाहता हूँ जो कि अलौकिक हैं, और इन तीन वर्षों में मैंने यह अनुभव किया है कि मैं अपने लक्ष्य पर पहुँच सकूँगा। घर पर जब मैं था तब मुझे विश्वास नहीं था कि इस प्रकार की अलौकिक सिद्धियाँ वास्तव में होती हैं। मंत्रों में इतनी अधिक शक्ति होती है कि वह असम्भव को भी सम्भव कर सकता हो। परन्तु आज जब इस क्षेत्र में घुमा हूँ, थोड़ा बहुत जो कुछ प्राप्त किया है उसके आधार पर मैं यह कहने में समर्थ हूँ कि आज भी इस प्रकार के माधु जीवित हैं जो अलौकिक हैं, जिनके पास ज्ञान का अक्षय भण्डार है, मैंने उन माधुओं के पास पहुँचने का प्रयत्न किया है और मुझे अपना लक्ष्य स्पष्ट दिखाई देने लगा है।

घर में निकलने के बाद मैं एक दिन भी आराम से सो नहीं सका हूँ। तुम यदि आज मेरी हालत देख लो तो शायद अपने आपको सौभाग्यशाली समझोगी। तुम्हारे पास तिर ढकने के लिये छन है, छाने के लिये ऋषी-सूखी बाजरे या मक्के की रोटी तो हैं परन्तु मेरे पास तो यह भी नहीं है। कोई निश्चित नहीं है कि शाम कहाँ पर धोतेगी, सुबह कहाँ पर होगी। शाम को भोजन प्राप्त भी हो सकेगा या नहीं। शाम तक जीवित भी रह सकूँगा या नहीं, कुछ भी नहीं कह सकता। सब कुछ अनिश्चित है। परन्तु फिर भी मेरी आँखों की चमक टूटी नहीं है, बल्कि उसमें तीव्रता ही आई है। क्योंकि इसके बावजूद भी मुझे कुछ ऐसे अलौकिक साधु मिले हैं जिनके पास इस प्रकार की विद्याएँ हैं और उनके द्वारा मुझे मिला है—बहुत कुछ मिला है।

यह जीवन कितना कष्टदायक है यदि मैं इस पत्र के माध्यम से व्यक्त करूँ तो तुम्हारी आँखें भर जायगी। मेरे पास एक धोती और एक कुर्ता है, जिसे मैं स्नान करने के बाद नित्य बदल लेता हूँ, इसके अलावा किसी प्रकार का कोई भौतिक साधन न तो मेरे पास है और न अपने पास रखना चाहता हूँ।

नगे पाव चलने से पूरे पाव जगह-जगह से फट गये हैं, और कई स्थानों से तो खून भी रिसने लगा है, क्योंकि एक साधु ने यही शर्त रखी थी कि यदि नगे पाव आगे के साल भर तक विचारण कर सको तो तुम ज्ञान पाने के अधिकारी हो, और मैंने उस ज्ञान की प्राप्ति के लिये इस शर्त को भी स्वीकार कर लिया है। मेरी यह धारणा है कि मुझे प्रत्येक स्थान का अन्न स्वीकार नहीं करना चाहिए, प्रत्येक व्यक्ति के हाथ का भोजन ग्रहण नहीं करना चाहिए, इसीलिये मैं दिन में एक बार किसी एक ब्राह्मण परिवार से एक समय का आटा स्वीकार कर लेता हूँ और अपने हाथों से पकाकर खा लेता हूँ। उसके साथ न तो साग होता है और न अन्य साधन। कई बार तो इस प्रकार का परिवार ही नहीं मिलता और ऐसी स्थिति में भूखे रह जाना पड़ता है। हकीकत तो यह है कि अब कुछ स्वभाव ही ऐसा हो गया है कि भूखे रहकर मैं ज्यादा आनन्द अनुभव करने लगता हूँ।

पिछले महीने मैं एक ऐसे स्थान पर था जो आवादी से काफी दूर था। उस साधु के पास जो ज्ञान था वह अलौकिक था। क्योंकि वह ओघड था और जैसा कि तुम जानती हो ओघड—ओघड ही होता है। उसने एक दिन मेरी छोटी-सी गलती पर इतने जोर से डडा मेरी पीठ पर मार दिया था कि आज भी उस स्थान पर दर्द करने लगती है। जिस समय वह डडा लगा था तब तुम्हारा स्मरण हुआ तो आया था। उस दिन की घटना मेरी आँखों के सामने तैर गई जबकि तुम्हारे हाथों से दूध की बाल्टी गिरने पर पिताजी ने क्रोध के आवेश में जलती हुई लकड़ी से तुम्हारी पीठ पर वार कर दिया था, उस घटना को मैं भुला नहीं पाया था, क्योंकि वह चोट तेरी पीठ पर नहीं अपितु मेरे हृदय पर लगी थी, वह आघात तेरी पीठ पर नहीं मेरे समाज की निर्लज्जता और मेरे सकोच पर लगी थी—फफोला पड़ गया था। दो-तीन दिन तक तो तुम मुझसे छुपती रही, परन्तु जब वह घाव दन गया तब मुझे ज्ञात हुआ और आज जब उस डडे के चोट की कसक अपनी पीठ पर अनुभव करता हूँ तब महसूस होता है कि उस चोट का दर्द तुमने कितनी शालीनता के साथ भोगा था। उस शारीरिक चोट से भी ज्यादा गहरी खरोच तुम्हारे मानस पर पड़ी थी क्योंकि तुम एक अलग वातावरण से आई थी, और मेरे घर पर एक अलग वातावरण देखने को मिला था। तुम्हारे घर में एक अलग भावना थी, एक अलग विचार पद्धति थी, एक अलग जीवन का रहन-सहन था। जबकि मेरे घर का माहौल उससे विल्कुल विपरीत था, और इस माहौल में यदि वह लकड़ी की पीठ पर जलती हुई लकड़ी मार दी जाती है तो यह शिक्षा का एक अध्याय माना जाता है।

इन तीन वर्षों में पता नहीं तुमने और कितनी जलती हुई लकड़ियाँ खाई होंगी, कितनी गालियों की बीछार अपने ऊपर झेली होंगी। कितनी यत्रणा और कष्ट को तुम दात भीचकर सह रही होगी—कुछ नहीं कह सकता।

यह पत्र मैं ऐसे स्थान से लिख रहा हूँ जहाँ आस-पास कोई बस्ती नहीं है। इस समय रात के तीन बजे हैं और सारा जंगल साय-साय कर रहा है। कभी-कभी जंगली पशुओं की आवाजें जंगल की इस भयानकता को और भयानक बना देती हैं। यहाँ पर एक छोटी-सी कुटिया है जिसमें साधु सोये हुए हैं, और बाहर इस दालान में बैठकर मैं तुम्हें पत्र लिख रहा हूँ। मिट्टी के तेल की एक छोटी-सी दिबरी जल रही है। पिछले दिनों ही एक गृहस्थ से कुछ कागज और एक कलम माग ली थी। क्योंकि तुम्हें कई दिनों से पत्र लिखने की सोच रहा था।

इस पत्र लिखने के पीछे कोई वासना या मोह नहीं है जितनी कि यह इच्छा है कि तुम बहुत अधिक मेरे बारे में चिन्तित न हो। कम-से-कम तुम्हें यह तो अहसास हो कि मैं अभी तक जीवित हूँ। यदि मैं तुलना करता हूँ तो मैं यहाँ तुम्हारे कष्टों की अपेक्षा ज्यादा सुखी हूँ। तुम्हारे प्रति मेरा एक कर्त्तव्य है, तुम्हारे साथ मेरी भावना जुड़ी हुई है। अग्नि को साक्षी रख कर मैंने तुम्हारा वरण किया है—और इसी धर्म के नाते मेरा यह कर्त्तव्य हो जाता है कि मैं तुम्हें अपने मन की बात कहूँ।

जान बूझकर मैं अपना पता नहीं दे रहा हूँ और सही बात तो यह है कि साधुओं का कोई अता-पता नहीं होता 'रमता जोगी और बहता पानी' का कोई ठिकाना नहीं होता कि आज कहा है और कल कहा होगा।

यह एक तरफ का पत्र व्यवहार है, तीन वर्षों के बाद यह पहला पत्र लिखा है, और दूसरे पत्र की इच्छा अभी मत करना, हो सकता है मैं दो या तीन या चार वर्षों के बाद पत्र लिख सकूँ। परन्तु इतना निश्चित समझना कि मैं जहाँ भी हूँ सुखी हूँ, स्वस्थ हूँ, मेरे मन में तुम्हारे प्रति जरूरत से ज्यादा अपनत्व है और यह अपनत्व क्षीण नहीं होगा - कभी भी क्षीण नहीं होगा।

यद्यपि मेरे पिता जरूरत से ज्यादा क्रोधी हैं। यद्यपि मेरे माता और पिता का व्यवहार तुम्हारे प्रति बहुत अधिक अनुकूल नहीं होगा। सत्कारों की वजह से वे तुम्हें प्रताड़ित करते होंगे, परन्तु फिर भी तुम्हें धैर्य से काम लेना है। किसी भी हालत में उनके सामने अपनी जवान नहीं खोलनी है। यदि त्रे जलती हुई लकड़ियों से भी तुम्हें पीट लें तब भी तुम्हें उफ़ नहीं कहना है। खाने के लिए जो कुछ भी मिल जाए उसी को भगवान का प्रसाद समझकर स्वीकार कर लेना है, किसी भी प्रकार की इच्छा या वाचना मत करना।

सब कुछ होते हुए भी वे मेरे माता-पिता हैं, मेरे लिए आदरणीय हैं, उन्होंने जन्म दिया है, इस सत्सार में कुछ करने के लिए मुझे पाल-पोस कर बड़ा किया है, अतः उनके डम ऋण को मैं स्वीकार करता हूँ। यद्यपि मैं उनसे दूर हूँ इसलिए शरीर से तो मैं उनकी सेवा नहीं कर पा रहा हूँ, पर मुझे विश्वास है कि तुम्हारी तरफ से सेवा में कोई कमी नहीं आएगी। यही नहीं अपितु तुम्हारा यह कर्त्तव्य है कि तुम उनकी सेवा जरूरत से ज्यादा करो, क्योंकि मेरे हिस्से की भी सेवा तुम्हें ही करनी है।

सेवा में किसी भी प्रकार का प्रतिदान नहीं होता। सेवा केवल एकांगी होती है उसके माध्यम से किसी प्रकार की प्राप्ति की भावना नहीं होती। तुम्हारे लिए वे सब कुछ है, वह परिवार ही तुम्हारा परिवार है और उस परिवार की शरीर से और मन से सेवा करना तुम्हारा कर्त्तव्य है। मुझे विश्वास है इसमें तुम्हारी तरफ से किसी प्रकार की न्यूनता नहीं आएगी।

यह पत्र केवल तुम्हारे लिए है और इस पत्र को गोपनीय रूप से ही तुम्हें रखना है। तुम्हारे मन में उस परिवार के प्रति जरूरत से ज्यादा आदर और सम्मान बना रहे, चाहे किसी भी प्रकार की स्थिति हो, अपने आप को तुम्हें हर हालत में दीपशिखा की तरह जलते रहना है। मैंने तुम्हारी भावनाओं को पढ़ा है तुम्हारे व्यक्तित्व से जितना भी परिचित हुआ हूँ उससे मैं आश्चस्त हूँ और मुझे तुम्हारे त्याग की रोशनी में अपना पथ स्पष्ट दिखाई दे रहा है।

आज भले ही न सही, परन्तु आने वाला समय इस बात को स्वीकार करेगा कि मेरे निर्माण के पीछे सब कुछ तुम्हारा है। तुम्हारा त्याग मेरे त्याग से बहुत बड़ा

चढ़ा है। तुम्हारे त्याग की रोशनी में ही मैं आगे बढ़ सका हूँ। मेरे पीछे तुम्हारा बहुत बड़ा सबल है, तुम्हारी प्रेरणा है और शक्ति है।

तुम्हारा समय ईश्वर चिन्तन में ज्यादा लगना चाहिए, प्रभु के सामने तुम्हारी यही प्रार्थना होनी चाहिए कि स्वामी जिस उद्देश्य के लिए गए हैं उस उद्देश्य की पूर्ति में वे सफल हो और अपने ज्ञान से समाज को, आने वाली पीढ़ियों को रोशनी दे सकें, उनका पथ प्रशस्त कर सकें

तुम्हारा साथी
(नारायणदत्त श्रीमाली)

प्रेषक डा० नारायणदत्त श्रीमाली

स्थान अज्ञात

प्राप्तकर्त्ता भगवती श्रीमाली

आलोक—घर से निकलने के कई वर्षों बाद यह पत्र पण्डितजी ने पत्नी के नाम भेजा था, जिसमें उन्होंने उनके कर्त्तव्य को स्पष्ट किया था, वहीं साथ-ही-साथ इस पत्र के माध्यम से उनके मानस चिन्तन की झांकी भी प्राप्त होती है उन्होंने इन वर्षों में कितना मानसिक संघर्ष और जन कल्याण के लिए कितना अधिक त्याग और बलिदान किया था उसका आभास इस पत्र के माध्यम से प्राप्त होता है जो कि साधकों के लिए एक दीप-स्तम्भ की तरह ज्योतिर्मय है।

प्रिये !

बहुत समय बीत गया है, जबकि मैं तुम्हें आज पत्र लिखने बैठा हूँ, मुझे याद नहीं आ रहा है कि मैंने इससे पूर्व तुम्हें कब पत्र लिखा था, परन्तु इतना याद है कि मैंने जो पत्र लिखा था उसको भेजे हुए चार वर्ष से कुछ ज्यादा ही हो गया है।

इन चार वर्षों में मैंने बहुत कुछ भोगा है, बहुत कुछ सहन किया है और जिस उद्देश्य से मैं घर से निकला था उस उद्देश्य की पूर्ति में अनुकूलता प्राप्त हुई है, जब निकला था तब मेरा मन आशकाओं से ग्रस्त था, पता नहीं मैं जिस उद्देश्य के लिए जा रहा हूँ उस उद्देश्य की प्राप्ति होगी भी या नहीं, मैंने अपने जीवन का जो बहुत बड़ा जुआ खेला है उसमें सफल हो सकूंगा या नहीं ? मैं जान-बूझ कर अपने जीवन को अभावों की भट्टी में घुलने के लिए दे रहा हूँ, क्या यह उचित है या नहीं ? इतना हठ करके मैं जा रहा हूँ मेरे जाने से पिता, अपने आपको बेसहारा अनुभव करने लगेंगे, जिस समय मुझे घर में रहकर मा की सेवा करनी चाहिए, उसके आसुओं को पोछना चाहिए, उस समय मैं इन सबको छोड़कर एक ऐसे रास्ते पर बढ़ रहा हूँ

जिसका कोई ओर-छोर दिखाई नहीं दे रहा है, मेरे साथ ऐसा कोई पथ-प्रदर्शक भी नहीं है जिसके सहारे मैं आगे बढ़ सकूँ, ऐसी कोई ज्योति भी मेरे हाथ में नहीं है जिसके सहारे मैं इस अन्धकार में बढ़ता हुआ लक्ष्य पर पहुँच सकूँ। इस प्रकार के सैकड़ों प्रश्न मेरे मन को कुरेद रहे थे, परस्पर विरोधी विचार मेरे मानस को उद्धत कर रहे थे और मैं भयकर तूफानी से घिर कर अपने मस्तिष्क को बढ़ी कठिनाई से सयत रखने का प्रयत्न कर रहा था, परन्तु मेरे सामने कुछ भी स्पष्ट नहीं हो रहा था।

ऐसे ही परस्पर विरोधी विचारों के अघड में जब मैं लगभग अपने विचारों से डूबने जा रहा था, तब यह निश्चय करने जा रहा था कि मुझे इस अनजाने रास्ते पर नहीं बढ़ना चाहिए, वर्तमान में जो सुख-सुविधाएँ हैं उनको छोड़ कर अभावों के दलदल में नहीं फसना चाहिए और जो कुछ प्रभु ने दिया है उसी को पाकर सन्तुष्ट हो जाना चाहिए, जो कुछ प्राप्त है उसी में सन्तोष कर लेना चाहिए। मच कह रहा हूँ उन दुर्लभ क्षणों में मैं अपने विचारों से फिसल गया था, मित्रों सम्बन्धियों और परिवर्तितों ने जो भयकर वातावरण मेरे सामने बढ़ा-चढ़ा कर बताया था उससे जाने का निश्चय मैं मन-ही-मन छोड़ चुका था, ऐसे ही क्षणों में तुम दीपशिखा की तरह मेरे सामने प्रकट हुई। मैंने तुम्हारा कारुणिक रूप भी देखा है और तेजस्वी तथा ओजपूर्ण चेहरा भी। तुम्हारा आसुओं से भरा हुआ मुख-मण्डल भी मेरे सामने साकार हुआ है और दृढ़ता तथा तेजस्विता से युक्त चेहरा भी। जब मैं लगभग अपने आपमें टूट चुका था, मा की आँखों के बहते आसुओं से लड़खड़ा चुका था, तब तुमने मेरे शरीर में एक नई विचारधारा पैदा की थी, एक नया रास्ता मेरे सामने स्पष्ट किया था। तुम्हारा वह चेहरा, तुम्हारी वह दृढ़ता और तुम्हारी वह ओजस्विता आज भी मेरे सामने ज्यों-की-त्यों साकार है। सच कहूँ तो इन ७-८ वर्षों में तुम्हारी यह दृढ़ता ही मेरा पाथेय बनी है, मेरे लिए वह प्रकाश बिन्दु की तरह जगमगाती रही है, जब-जब भी मैं दुर्बल और कमजोर पड़ा हूँ, उसने मुझे सबल, साहस और दृढ़ता दी है।

प्रारम्भ में तुम जरूर हताश हो गई थी, एक प्रकार से अपने जीवन से ही निराशा अनुभव करने लग गई थी। ऐसा लगने लगा था जैसे तुम्हारे शरीर का पूरा खून निकल गया हो, चेहरा पीका पड़ने लग गया था और तुम में और मृत्यु में बहुत ज्यादा फासला अनुभव नहीं हो रहा था, परन्तु ज्योंही मुझमें कायरता का संचार हुआ, तुम्हारा रूप ही बदल गया, तुम्हारी वह श्रीहीन आँखें ओजस्विता में परिणत हो गईं, और चेहरे पर एक अपूर्व कान्ति, एक अपूर्व चमक आ गई जो कि अपने आप में मेरे लिए अन्यतम थी, आश्चर्यजनक थी।

मैंने इतिहास में राजपूत महिलाओं के जौहर पढ़े थे। मैंने पढ़ा था कि वे महिलाएँ जो असूर्यम्पश्या कहलाती थी, मुस्कराती हुई, खिलखिलाती हुई अग्नि को समर्पित

हो जाती थी। आग में कूदते समय भी उनके चेहरे पर एक अपूर्व चमक रहती थी, मृत्यु का वरण करते समय उनके चेहरे की कान्ति और बढ़ जाती थी, और मैंने ऐसा दृश्य पहली बार प्रत्यक्ष रूप में देखा। जब तुमने स्पष्ट शब्दों में मुझे बताया कि इस प्रकार हताश और निराश होने की जरूरत नहीं है, जो जीवन में खतरा नहीं ले सकता।

वह कुछ भी नहीं कर सकता । जो मृत्यु से डरता है उसका जीवन स्पन्दित होते हुए भी मृत्यु तुल्य है । जो असफलताओं की आशकाओं से घबरा जाता है वह कायर है, बुजदिल है ।

बातचीत के दौरान तुमने आगे कहा था कि जब आपने इस रास्ते पर बढ़ने का निश्चय कर ही लिया है तो फिर इस प्रकार लड़खड़ाने की जरूरत नहीं है, इस प्रकार बुजदिली प्रदर्शित करने की आवश्यकता नहीं है, जो समुद्र के किनारे बैठे रहते हैं उनके हाथ में घोड़े ही आते हैं पर जो खतरा उठाकर समुद्र की बीच धार में कूद जाते हैं वे युवक ही मोती प्राप्त करने में सफल होते हैं, जीवन में यदि तुम्हें घोड़े ही चुनने हैं तो यह जीवन ठीक है, पर घोड़े चुनने वाले कायर और बक होते हैं, वीर और साहसी किनारे पे नहीं बैठे रहते, मगरमच्छ और खतरनाक जन्तुओं से घबराते नहीं हैं, अपितु विना हिचकिचाहट के समुद्र में कूद जाते हैं और जीवन में सफल हो जाते हैं ।

मैंने तुम्हारा वरण किया है एक ऐसे पति का वरण किया है जो साहसी है, जिसमें कुछ करने की भावना है, जिसमें आगे बढ़ने की लालसा है, जो समाज में कुछ कर दिखाने की क्षमता रखता है, मैंने कायर और निर्बल व्यक्ति से शादी नहीं की, नपुंसक और श्रीहीन व्यक्ति की मेरी नजरों में कोई इज्जत नहीं है, जो अपने आपसे हार जाता है उसकी ससार भी कद्र नहीं करता, यदि एक बार आप मेरी नजरों से गिर गए तो फिर वापिस मेरी नजरों में इज्जत नहीं पा सकेंगे, आप मेरे पति हैं, आपका सम्मान करना मेरा कर्त्तव्य है । आपकी आज्ञा शिरोधार्य करना मेरा धर्म है परन्तु मेरा यह भी धर्म है कि जब आपके पांव लड़खड़ाने लगे तब आपको सम्बल दूँ, जब आप निराश और हताश हो जाए तब आपको सहारा दूँ, जब आप अपने आपमें कमजोरी अनुभव करने लगें तब आपमें आशा का संचार करूँ और मैं यह कह कर अपने धर्म का निर्वाह कर रही हूँ ।

आपमें कमजोरी इसलिए आई है कि आपके मित्रों ने एक भयानक चित्र आपके सामने खींच दिया है । पर आप यह देखें कि क्या उन्होंने अपने जीवन में कुछ किया है ? क्या उनको कोई जानता है ? इस गली के बाहर क्या उनका कोई अस्तित्व है ? क्या वे समाज को कुछ देने में समर्थ हैं ? यदि नहीं, तो फिर उनकी बात मानने से क्या लाभ ? वे स्वयं कायर हैं और दूसरों को भी कायरता के अलावा कुछ भी नहीं दे सकते । जिसके पास जो कुछ होता है वह वही तो दे सकता है । वे कायर हैं, बुजदिल हैं, जीवन से चूके हुए हैं अतः उनके पास निराशा और हताशा देने के अलावा कुछ भी नहीं है ।

आप विचलित इसलिए हो गए कि आपने पिताजी के उतरे हुए चेहरे को देखा है, आप निराश इसलिए हो गए कि आपने माँ की आँखों में बहते हुए आँसुओं को देखा है, आपने छोटे भाई के उदास चेहरे को अनुभव किया है, आपने ऐसा महसूस किया है जैसे इस घर की रौनक समाप्त हो गई है, आपने ऐसा पाया होगा कि जैसे

इस घर की रौनक समाप्त हो गई है, आपने ऐसा पाया होगा कि जैसे इस घर पर मृत्यु का सन्नाटा छा गया हो और इस वातावरण में आपके पावों में कमजोरी ला दी होगी, पर क्या यह उचित है ? जब आपने एक निश्चय कर ही लिया है तो फिर उम निश्चय में न्यूनता लाना उचित नहीं है, जो भी इस प्रकार का निश्चय करेगा उसे तो इन समस्याओं को पहले से ही देखना पड़ेगा । जो इस प्रकार आगे बढ़ना चाहेगा उसके सामने ये परेशानियाँ आएंगी ही । शुभ कार्य में पग-पग पर बाधाएँ और कठिनाइयाँ आती हैं, पर इससे वे निराश नहीं होते, हमारा इतिहास इन तथ्यों से भरा पड़ा है, राम के अपने कर्तव्य-निर्वाह में क्या इस प्रकार की बाधाएँ नहीं आई थी, क्या उनके सामने दशरथ का श्रीहीन चेहरा और कौशल्या की अश्रुपूर्ण आँखें नहीं थी ? क्या गौतम बुद्ध घर से निकलते समय इन सारे विचारों के तबडर से नहीं जलझे थे ? पर इनसे वे अपने पथ से विचलित नहीं हुए । अपितु इस प्रकार की बाधाओं ने तो उनके पैरों में और ज्यादा मजबूती ला दी थी, इस प्रकार की कठिनाइयों ने उनके जीवन में और ज्यादा दृढ़ता पैदा कर दी थी और इसीलिए वे जीवन में सफल हो सके हैं । मृत्यु पर विजय प्राप्त कर सके हैं और उस युग के समाज को बहुत कुछ दे सके हैं ।

आप स्वयं सोचिए यदि इस प्रकार राम अपने पथ से अपने निश्चय से लड़खड़ा जाते तो क्या उनमें और एक साधारण राजपूत में कुछ अन्तर रहता ? यदि यशोधरा का मोह बुद्ध को बाध लेता तो क्या आज हम उनका नाम स्मरण रख पाते ? क्या शकराचार्य अपनी माँ की आँखों के आसुओं से विचलित हुए थे ? हमारा तो पूरा इतिहास इस प्रकार की घटनाओं से भरा पड़ा है और आज यदि हम उन युग-पुरुषों को स्मरण करते हैं तो इसलिए कि उनके सामने भी इस प्रकार की चुनौतियाँ थी, इस प्रकार के विरोधी विचार उनके दिमाग में भी उठे थे, इस प्रकार का विरोधी वातावरण उनके सामने भी था, पर वे कायर नहीं बने, उन्होंने अपने जीवन में हार कर नपुंसकता प्रदर्शित नहीं की, अपितु उन्होंने मुट्टी बांध कर खड़े हुए, समाज को चुनौतियाँ दी और अपने पूरे जीवन को दाव पर लगा दिया । इसीलिए आज वे जीवित हैं और आगे भी सैकड़ों वर्षों तक जीवित रह सकेंगे ।

यह सही है कि जब मैंने विवाह किया तब मेरे दिमाग में बहुत कुछ सुखद कल्पनाएँ थी, यह उम्र कल्पनाजीवी होती है, मेरी सहेलियों ने भी मुझे बहुत कुछ बताया था और वे मुझसे बहुत कुछ उम्मीदें भी रख रही होगी, परन्तु जब मैं यहाँ आई तब मैंने अपने आपको एक विचित्र वातावरण में अनुभव किया, यहाँ का वातावरण मेरे घर के वातावरण से सर्वथा भिन्न था । मैं बड़ी कठिनाई से अपने आपको सयत्न कर सकी, मेरे जो दिवास्वप्न थे वे तो एक महीने में ही काफूर हो गए । मेरी जो सुखद कल्पनाएँ थी वे विवाह के कुछ समय के बाद ही हवा में विलीन हो गईं, मैंने अपने मन में यह निश्चय कर लिया कि मुझे जब अपना जीवन इसी वातावरण में बिताना है तो मुझे अपने आपको वातावरण के अनुकूल बनाना ही होगा । जब मैं

घरती पर सोई तो कुछ दिनों तक तो नींद ही नहीं आई, जब मैंने पहली बार मक्के की रोटी चन्दलिए के साग के साथ खाई तो उसका स्वाद एक अजीब अटपटा-सा लगा और मैं भूखी ही उठ गई परन्तु ऐसा कब तक करती ? मैं धीरे-धीरे उसके अनुकूल अपने आपको बनाने का प्रयत्न करती रही, उस वातावरण में अपने आपको ढालने की कोशिश करती रही और अपने जीवन को इस प्रकार से कठोर बनाने का प्रयत्न करती रही जिससे कि इस प्रकार के वातावरण को वह झेल सके ।

मैंने काफी कुछ पढ़ रखा था, मैंने पढ़ा था कि जब बहू पहली बार ससुराल जाती है तो उसका बहुत-बहुत स्वागत होता है, उसके आराम का, उसके सुख-सुविधाओं का पूरा-पूरा ध्यान रखा जाता है, देवर उसे गुदगुदाते हैं, ननदे मजाक करती हैं, हम-जोली बहुएं उससे चुहल करती हैं और उसका वह समय मन्त्र-मुग्ध की तरह बीत जाता है, पता ही नहीं चलता कि कब प्रात होता है, कब साझ उतर आती है और कब रात शुरू हो जाती है ।

परन्तु मैंने यहाँ ऐसा कुछ भी नहीं पाया, अपितु इससे बिल्कुल भिन्न वातावरण अनुभव किया, शुरू-शुरू में तो मैंने ऐसा अनुभव किया जैसे मैं घनघोर जंगल में आ गई हूँ, चारों तरफ एक आतंक चतुर्दिक एक डरावना-सा माहौल है और कुछ ऐसा वातावरण है जो कि अत्यन्त ही अटपटा और असंगत है ।

घर में दूसरे ही दिन मुझे एक मील दूर से पानी लाने की आज्ञा हुई । मैं अपने घर में सिर पर मटकी रखकर कभी पानी लाई नहीं थी, परन्तु उस दिन सभलते-सभलते भी सिर पर से मटकी गिर गई और गिरते ही जिन गालियों से मेरा स्वागत सत्कार हुआ वह मेरे लिए अप्रत्याशित था, मैं अपने आप में जडवत् हो गई, मैं समझ नहीं सकी कि इस समय क्या कर सकती हूँ, इस सारे कार्य में मेरी क्या गलती है, मैं जब सिर पर सयत ढग से मटकी रख नहीं सकती तो गिरना स्वाभाविक है और चार आने की एक मटकी के पीछे जो मेरा अपमान हुआ है जिस प्रकार से मेरे ऊपर गालियों की वीछार हुई है, क्या वह उचित है ? क्या वह का स्वागत इस समाज में इसी प्रकार से होता है और यदि पहला दिन इतने स्वागत के साथ हुआ है तो फिर अभी तो पूरा जीवन आगे पड़ा है और यह सोच-सोचकर मैं पीपल के पत्ते की तरह काप गई । सच कहती हूँ वह सारा दिन मेरा दुःखी मन से बीता, सारी रात मैं अपने आप में सो नहीं सकी । एक प्रकार से मैं अपने आपको असुरक्षित अनुभव करने लग गई थी, मुझे कुछ ऐसा लगने लगा था कि जैसे मैं कमाइयों के बीच घिर गई हूँ, आने वाले समय और आने वाली अज्ञात आशंकाओं से मैं झर-झर कापने लगी ।

परन्तु मैंने यह निश्चय कर लिया था कि यथासमय मेरी तरफ से कम-से-कम गलती हो, मुझे ऐसा कोई मौका नहीं देना चाहिए जिससे कि इन लोगों को कुछ कहने का अवसर मिले, अपने लिए कुछ भी नहीं मागना है । स्वयं के लिए किसी भी प्रकार की सुख-सुविधा की इच्छा नहीं करनी है, जो कुछ मिल जाए, जिस प्रकार से भी

मिल जाए उसी में सन्तुष्ट रहना है ।

और मैंने अपने जीवन को इसी प्रकार से ढालने का प्रयत्न किया, जमीन पर जो भी बिछौना मिल गया उसी को श्रेंयम्कर मान लिया, जो भी खाने को मिल गया उसी को सब कुछ समझ लिया, और अपनी तरफ से कुछ ऐसी व्यवस्था की जिससे कि आपके कानों तक मेरी बात न पहुँचे, क्योंकि जब आपको ज्ञात होता कि यह खाना खाना मेरे लिए कष्टप्रद है तो शायद आपको दुःख होता, सुबह चार बजे उठकर चक्की चलाना, पानी लाना, वापस आकर इतने लम्बे-चौड़े घर को साफ करना लीपना, भोजन बनाना, गायो और भैंसों का दूध दुहना, उसे गर्म करना, उनको चारा-पानी देना, उनके गोबर को लीपना और दोपहर को जंगल से घास काटकर लाना, जलाने के लिए लकड़ियाँ जंगल से लाना, शाम को फिर गायों का काम, भोजन का काम, कपड़े धोना, सबको भोजन करवाना और वरतन माजते-माजते रात्रि के ग्यारह-बारह बजे जाते । इस हाडतोड़ मेहनत के बाद भी उपेक्षा, गालियाँ और आलोचना सुनना, यह सब कुछ मेरे लिए सर्वथा अप्रत्याशित था । मेरे लिए इतना बोझ उठाना सम्भव नहीं था, मैंने कभी अपने जीवन में ऐसा सोचा ही नहीं था कि मुझे इस प्रकार के वातावरण में जाना पड़ेगा, इस प्रकार के कामों में लगना पड़ेगा और इस प्रकार से गालियाँ और ताने सुनने पड़ेंगे, सब कुछ अप्रत्याशित था, परन्तु फिर भी मैंने अपने हाँठ सी लिए थे, अपने हाँठों पर चुप्पी की मोहर लगा ली थी । मैंने निश्चय कर लिया था कि यह शरीर बहुत समय तक मेरा साथ नहीं देगा, परन्तु जब तक भी इस पिंजरे में प्राण है तब तक मुझे उफ़ नहीं कहना है, सब कुछ सहना है, दात भीचकर सहना है, जी को मसोस कर रहना है और मैंने यह किया है तथा आज तक करती रही हूँ ।

शायद आपको स्मरण होगा, विवाह के दो महीने बाद मेरे पिताजी मुझसे मिलने के लिए आये और अपने साथ खाने के लिए सेब लेकर आये थे, उन सेबों को देखकर मेरे हाँठों पर पहली बार व्यग्न की मुस्कराहट उभरी थी, मैंने अपने भाग्य पर विचार किया था कि जहाँ खाने के लिए सब्जी भी ढंग से प्राप्त नहीं होती वहाँ पर ये सेब प्राप्त होना प्रकृति का और नियति का मेरे ऊपर कितना कूर व्यग्न है ।

मेरे पिता ने जब मेरे चेहरे को ध्यान से देखा तो उन्हें जबर्दस्त आघात लगा था । वे इस बात की कल्पना ही नहीं कर सकते थे कि केवल दो महीने में बेटी का चेहरा इस प्रकार से फीका पड़ जायेगा, चेहरे की सारी लुनाई और चमक इस प्रकार से झुझ जायेगी, इसकी तो उन्होंने कल्पना ही नहीं की थी । उन्होंने एक तरफ मुझे ले जाकर पूछा भी था, कि क्या बेटी तुम यहाँ खुश हो ?

और मैंने पहली बार चेहरे पर जबरदस्ती से मुस्कराहट चढ़ाकर स्वाभाविक रूप से उत्तर दिया था कि मैं खुश हूँ, बहुत खुश हूँ, परन्तु इतना कहते-कहते मेरी आँखें भर आईं, मैं बहुत प्रयत्न करती रही कि आँखें मेरा साथ दें, आसू मेरा भेद न खोलें, परन्तु उन्होंने सारी बात कह दी और मेरे पिता की अनुभवी आँखों ने वह

सब कुछ जान लिया जो मैं कहना नहीं चाहती थी ।

मैंने अपने जीवन में पहली बार अपने पिता को उदास देखा था । सम्भवतः वे अपने आपको अपराधी समझने लग गये थे, उन्होंने यह अनुभव कर लिया था कि मैंने अपनी बेटी का गला घोट दिया है, उसकी खुशियां नीलाम कर दी हैं, उसके चेहरे पर जो चमक समाप्त हो गई है उसका जिम्मेवार मैं स्वयं हूँ, उसके आँचल में जो दुःख भर दिया है वह मेरी गलती है, उसकी आँखों में जो आसूँ तैर रहे हैं उसका जिम्मेवार मैं स्वयं हूँ और वे सारे विचार उनके दिमाग में एक साथ ही कौंध गए होंगे और उनका चेहरा बुझ गया । मैंने पहली बार अपने पिता का इतना श्रीहीन चेहरा देखा था, सच कहती हूँ कि उनके इस प्रकार के चेहरे को देख कर मैं रुक नहीं सकी, और उनकी गोद में सिर देकर फफक पड़ी, मेरी आँखों में आसूँ बाध तोड़कर वह निकले, हिककिया भर आई और मैं न चाहते हुए भी उनके सामने थरथरा गई, मेरे साथ ही उनकी आँखों से भी आसूँ वह निकले और उनके वे गर्म आसूँ जब टप-टप करते हुए मेरे चेहरे पर पड़े तो आप कल्पना कर सकते हैं कि मेरे दिल पर क्या गुजरी होगी और किस प्रकार से उन्होंने इतना जबरदस्त धक्का अपने कमजोर सीने पर झेला होगा ?

शाम को मेरे पिता ने जब मुझे अपने घर ले जाने के लिए आपके पिताजी से पूछा तो उन्हें सीधी गालियों की बौछार मिली । उन्हें बताया गया कि मैं कितनी कामचोर हूँ, कितनी मटकिया फोड़ दी हैं,, कितनी रोटियां जला दी हैं और कितनी बार अपनी उंगलियां जलाकर झूठी सहानुभूति प्राप्त करने की कोशिश की है । उनकी मान्यता यह थी कि जो मेरी उंगलियां जल गई हैं वे मैंने जानबूझकर जलाई हैं, जिससे कि दूसरी बार रसोई करने से छुटकारा मिल सके, यही नहीं अपितु मैंने कितनी बार जंगल से आते समय लकड़ियों की ढेरी या घास के गठुर गिराये हैं, इन सबका लेखा-जोखा उनके सामने रख दिया गया, यह भी बताया गया कि मैं निकम्मी हूँ, बेकार हूँ, बलवान नहीं हूँ, कामचोर हूँ और मैं उनके घर के लिए किसी भी प्रकार से योग्य नहीं हूँ ।

आपके पिताजी, धारा प्रवाह रूप से यह सब कुछ कहते रहे और मेरे पिता अपराधी की तरह इन सब बातों को सुनते रहे । आप उन दिनों किसी कार्यवश एक सप्ताह के लिए बाहर गये हुए थे, यदि आप उस क्षण देखते या गालियों की बौछार सुनते तो शायद आप स्वयं सयत नहीं रह पाते, मैं अपने आप में इतनी दुखी हो रही थी कि यदि उस समय घरती फट जाती तो निश्चय ही मैं उसमें समा जाने का गौरव अनुभव करती ।

और अन्त में निर्णय सुनाते हुए बताया कि किसी भी हालत में हम वहाँ को आपके घर नहीं भेजेंगे, इसको यही रहना होगा, यह यहा सुखी है, हम इसको जरूरत से ज्यादा प्यार दे रहे हैं, इसको किसी प्रकार की कोई तकलीफ नहीं है इसलिए इसको ले जाने की आवश्यकता नहीं है ।

इसके साथ ही आपकी माताजी ने यह भी जोड़ दिया कि भविष्य में इसमें मिलने के लिए आने की जरूरत नहीं है और जब हमें भेजनी होगी तब आपको कह-लवा देंगे।

मैंने उस दिन पहली बार अनुभव किया कि हमारे समाज में स्त्रियाँ कितनी पराश्रित और पददलित हैं, मैंने उस दिन यह अनुभव किया कि बेटों का पिता होना कितना दुःखदायक है। मैंने उस दिन यह अनुभव किया कि पुत्री का पिता किस प्रकार से वेबस हो जाता है, मैं अश्रुपूरित आँखों से उन्हें जाते हुए देखती रही, ऐसा लग रहा था जैसे वे एक गाय को कसाइयों के बाड़े में छोड़कर जा रहे हैं। उन्होंने मुझे देखा तक नहीं, या यों कहूँ कि उनमें इतनी शक्ति ही शेष नहीं रह गई थी कि वे मुझे मुड़कर देखते। वे जाते रहे और मैं ढबड़वाई आँखों से उन्हें देखती रही।

इतना होते हुए भी मैंने आपसे कभी शिकायत नहीं की। आप स्वयं अपने विचारों में उलझे हुए थे, आप स्वयं अपनी समस्याओं से घिरे हुए थे। ऐसी स्थिति में मैं अपनी समस्याओं से आपको परेशान करना उचित नहीं समझती थी। आपने एक-दो बार पूछा भी था कि तुम सुखी तो हो और मैंने जवरदस्ती की मुस्कगहट ओढ़कर कहा था कि मैं बहुत सुखी हूँ, बहुत सन्तुष्ट हूँ।

मैं उस दृश्य को नहीं भुला पा रही हूँ जब मैं सर्दी में बीमार पड़ गई थी, मैं जमीन पर सोती रही क्योंकि घर में एक ही खाट थी और उस पर आपके पिता जी सोते थे, जमीन पर पूरा विछौना नहीं था और ओढ़ने के लिए बोरी की जो सिली हुई गुदड़ी थी वह पर्याप्त नहीं थी। आप स्वयं जानते हैं कि आपके गाँव में किननी सर्दी पड़ती है और ऐसी सर्दी में जब पूरे पहनने के लिए कपड़े नहीं थे ओढ़ने के लिए पूरी गुदड़ी नहीं थी तो सर्दी लगना और बुखार आना स्वाभाविक था। जब सुबह मैं उठने के लिए उद्यत हुई तो मैं उठ नहीं पाई। ऐसा लग रहा था जैसे मेरा सारा शरीर दूट रहा है, दिमाग चक्कर खा रहा था और उस समय १०४° के आस-पास में बुखार अनुभव कर रही थी।

परन्तु मैं फिर भी हिम्मत करके उठी और चक्की चलाने लगी। मैं कोशिश कर रही थी फिर भी मैं स्वयं अपने आप में नहीं थी। मुझे कुछ भी पता नहीं था कि चक्की चलाने-चलाते कब मैं सज्ञाशून्य-सी हो गई और मेरा सिर चक्की के हत्ये पर टिक गया।

मुझे होश तब आया जब मेरी कमर पर जोरों की लात लगी और इसके साथ-ही-साथ गालियों की बौछार मुझे झेलने को मिली, वह मेरे लिए आश्चर्यजनक थी, मैं अपने आप में नहीं थी, मुझे यह भी ज्ञात नहीं था कि कमजोरी की वजह से मैं इस बुखार में कब बेहोश हो गई हूँ और कब चक्की का चलना बन्द हो गया है।

जब आपकी माताजी ने चक्की चलाने की आवाज नहीं सुनी तो वे दबे पाँव यह देखने के लिए आईं कि बहू क्या ढोंग कर रही है? और जब उन्होंने देखा कि

मैं चक्की के हत्ये पर सिर रखकर पड़ी हू तो उन्होंने सोचा कि यह तो रही है और उन्होंने जितनी तेजी से और जोर से लात मेरी कमर पर लगा सकती थी लगाई। हो सकता है कि उन्होंने लात धीरे लगाई होगी परन्तु एकबारगी ही मेरा सिर चक्कर खा गया और मैं वहीं पर बेहोश होकर गिर गई, लात के प्रहार से चक्की का हत्या मेरे सिर में घुस गया और खून वह निकला।

परन्तु उन्होंने इस बात की आवश्यकता ही नहीं समझी कि उम्र खून को बन्द करने का उपाय भी करना है, या बेहोशी को दूर करने का भी यत्न करना है, पता नहीं मैं कब तक वहाँ पड़ी रही, खून वह-वहकर सूख गया था और जब मेरी आख खुली, तब दिन के तीन धजे थे और मैं वहीं चक्की के पास पड़ी हुई थी।

आज भी वह चोट का निशान रह-रह कर साल जाता है और इतना जोरों से दर्द उठता है कि मैं सहन नहीं कर पाती। पिताजी के यह पूछने पर कि खून कैसे निकला तो माताजी ने कहा था कि मर जाती तो अच्छा था, जिन्दा रहकर यह क्या करेगी और इस घर का क्या भला कर सकेगी ?

उफ् ! आज इस जगल में बैठा हू, तुम से बहुत दूर, पर—सच कहता हू कि तुम्हारे साथ जो घटनाएँ घटी हैं वे सब रह-रहकर मेरे दिमाग में बराबर चक्कर काटती रहती हैं मैं जितना ही इन घटनाओं को भूलाने का प्रयत्न करता हू उतनी ही ज्यादा ये घटनाएँ मेरे मानस को उद्वेलित करती रहती हैं, वास्तव में ही मेरा समाज आज के समय में बहुत ही पिछड़ा हुआ है और इस समाज में तूने जो कुछ भोगा है, जिस प्रकार से भोगा है, वे घटनाएँ जब स्मरण आती हैं तो मेरे रोंगटे खड़े हो जाते हैं और मैं अपने आप में कापकर रह जाता हू।

मैंने तो अपने आपको उस समाज से कुछ समय के लिए काट लिया है एक प्रकार से अपने आपको अलग कर लिया है पर तुम उसी समाज में हो, उसी वातावरण में हो, उसी परिवार में हो और उस दमघोटू वातावरण में तुम किस प्रकार से सास ले रही होगी, यह सोचकर मैं अपने आपको अपराधी-सा महसूस करने लग जाता हू।

इस समय मैंने एक पङ्क्ति हुए साधु से “नखदर्पणादि खण्ड विभूति” ज्ञान प्राप्त किया है, इसके माध्यम से हम अपने अगूठे के नाखून में वर्तमान जीवन की सारी घटनाएँ देख लेते हैं, मैंने यह साधना सीखने के बाद सबसे पहले तुम्हें देखने का प्रयत्न किया था, केवल इसी तथ्य से कल्पना कर सकती हो कि मेरे मानस में तुम्हारा बिम्ब तुम्हारा स्मरण कितना अधिक शक्तिशाली है।

और जब मैंने अपने दाहिने हाथ के अगूठे के नाखून में तुम्हारा चित्र देखा तो मेरा हृदय धक् से रह गया। एक दुबली-पतली लाश की तरह आगन में एक तरफ बैठी हुई हो, शरीर पर फटी हुई साडी पहनी हुई है, आँखें अन्दर घस गई हैं, शरीर पर मांस का नाम-निशान तक नहीं है और ऐसा लग रहा है जैसे अस्थि-पंजर पर जलरक्ष्मणी की जीवित खाल चढ़ा दी हो।

सच कहता हूँ तुम्हारे इस रूप को देखकर मैं अपने आप में नहीं रह सका था, मैंने अपने आपको पूरी तरह से अपराधी महसूस किया था, उस दिन मैंने अपने आपको कितनी बार धिक्कारा होगा इसकी कोई कल्पना ही नहीं कर सकता, मैंने स्वयं को धिक्कारते हुए कहा कि यह सब तुम्हारे कारण हुआ है। इसमें केवल तुम्हारा स्वार्थ है, तुमने अपने स्वार्थ के लिए एक पूरे जीवन को बर्बाद कर दिया है, उसके जीवन को, उसकी खुशियाँ और उसकी उमंगों को, दुःख की भट्टी में बेरहमी से फेंक दिया है। तुमने इस बात को सोचा भी नहीं कि जो कुछ तुम कर रहे हो, उसके पीछे कितना कुछ हो जाएगा, उस दिन तो सोच-सोचकर पागल-सा हो गया था और उस रात्रि को हिचकिया भर-भरकर जितना रोया था उतना शायद अपने पूरे जीवन में भी नहीं रोया होगा, उस दिन जितना अपने आपको अपराधी महसूस किया था उतना कभी भी महसूस नहीं किया। जिस दिन मेरे पादों में साप लिपट गया था और मृत्यु मुझसे एक क्षण के अन्तराल पर थी उस दिन भी मैं इतना विचलित नहीं हुआ था जितना उस दिन तुम्हें नाखून में देखकर हुआ था।

परन्तु मुझे सन्तोष है कि तुम जीवित हो। मुझे उस दिन कम-से-कम इस आशंका से तो मुक्ति मिल गई कि जिसने मेरे लिए त्याग किया है जिसने मेरे लिए अपने आपको बलिदान किया है उसकी साँसें अभी तक कायम हैं, उसके शरीर का मांस भले ही समाप्त हो गया हो, चमड़ी अभी तक जिन्दा है और एक बार फिर मेरे हृदय ने पुलक महसूस की है, आनन्द अनुभव किया है, घर जाने की ललक पैदा की है और यह इच्छा बलवती हुई है कि मुझे जल्दी-से-जल्दी तुमसे मिलना चाहिए, जल्दी से-जल्दी अपनी बाहों में भरकर तुम्हें उठा लेना चाहिये।

इस समय मैं तुमसे बहुत दूर हूँ। इतना दूर कि यदि मैं जल्दी-से-जल्दी आना भी चाहूँ तब भी मुझे काफी समय लग जायेगा और यह भी कि जिस उद्देश्य के लिए मैंने इतना सब कुछ झेला है वह अब कुछ ही कदम दूर रह गया है। मैंने बहुत कुछ प्राप्त किया है और यदि तुम मेरी उपलब्धियाँ, मेरी सफलता सुनोगी तो तुम एक-बारगी प्रसन्न हो जाओगी, तुम्हारे चेहरे पर आत्म-सन्तोष की झलक उभर आवेगी, तुम्हारी आँखों में विश्वास की ज्योत्स्ना फैल जायेगी, तुम्हारे होठों पर खुशी का तराना गुनगुना उड़ेगा और मन को एक बार फिर विश्वास हो जाएगा कि कुछ प्राप्त हुआ है, जिसके लिए इतना सब कुछ किया है।

तुम्हारा कोई पत्र मेरे सामने नहीं है पर तुम्हारा मौन-पत्र अपने आपमें अन्य-तम है, घर से रवाना होते समय तुमने जिस साहस के साथ मुझे निदाई दी थी वह अपने आप में अन्यतम क्षण है। उस समय, जब कि मैं कायर हो रहा था, मेरे पाव कमजोर पड़ रहे थे और जब यात्रा स्थगित करने का निर्णय कर लिया था तब तुमने जिस साहस के साथ, जिस वीरता और धैर्य के साथ मुझे सलाह दी थी, आगे बढ़ने के लिए प्रेरणा दी थी, कुछ कर गुजरने के लिए साहस दिया था वह आज भी मेरे सामने ज्योत्स्ना है। मैं उन आँखों की चमक भूला नहीं पाया हूँ, तुम्हारे उन

शब्दों ने मुझे बराबर सहायता दी है और मैं आश्चर्य से उस समय तुम्हें देख रहा था, तुम्हारे परिवर्तित रूप को देख रहा था, भारतीय नारी के आदर्शों को परख रहा था कि यह वही नारी है जो मेरा प्रस्ताव सुनकर हतप्रभ हो गई थी, जिसकी आँखें डबडबा आई थी, जिसका चेहरा फीका पड़ गया था और जिसके शरीर में एक कपन एक थरथराहट पैदा हो गई थी, पर जब इसी भारतीय नारी ने अपने पति को कम-जोर होते हुए देखा है तो इसका रूप ही बदल गया है।

वास्तव में ही उन क्षणों में तुम्हारा धैर्य तुम्हारा साहस अप्रतिम था, तुमने साहस के साथ मुझे जाने के लिए प्रेरित किया। तुमने जो कुछ कहा था वे अक्षर मेरे जीवन के लिए तो स्वर्णिम अक्षर हैं। तुम्हारा वह साहस, वह ओजस्वी रूप मेरे लिए अप्रत्याशित और आश्चर्यजनक रहा है।

पर* पर जब मैं रवाना होने के लिए तैयार हुआ और जिस दिन मैंने रवाना होने का निश्चय कर लिया सारा सामान बंध गया तब तुम्हारा वही पत्नी रूप पुनः उभर आया। तुम्हारा चेहरा फिर आसुओं से भर गया और तुमने जो कुछ साहस दिखाया था वह एकबारगी ही ढह गया। मैं कितने दुखी मन से, कितने व्यथित हृदय से वहाँ से रवाना हुआ था, वह मैं ही जानता हूँ। परन्तु उससे भी ज्यादा तुम व्यथित थी, ज्यादा दुखी और उदास थी। ऐसा लग रहा था जैसे देह से प्राण जा रहे हो और वह देह बेबस खड़ी देख रही है। उस समय मैं जान करके भी अनजान बना रहा, मुझमें इतना साहस ही नहीं रह गया था कि मैं मुड़कर तुम्हें और तुम्हारी उस अवस्था को देखूँ।

मुझे विश्वास है तुम सुख से होगी, मेरी तरफ से किसी प्रकार की चिन्ता करने की जरूरत नहीं है। मैंने तुम्हें एक से अधिक बार देखा है, यह सब साधना के द्वारा ही सम्भव हो सका है और जब भी तुम्हारा स्मरण आता है मैं अपने आपको रोक नहीं पाता हूँ, तुम्हें देख लेता हूँ और अपने मन को शान्ति दे देता हूँ।

मेरे माता-पिता की सेवा करना उन्हें कष्ट न हो, इस बात का ध्यान रखना परिवार का मंगल ही तुम्हारा मंगल है, माता-पिता का आशीर्वाद ही हमारे जीवन का पाथेय है।

श्रीधर ही तुम्हें पत्र लिखूंगा, जिसमें विस्तार से अपनी बात को कह पाऊंगा।

स्नेह युक्त,
(नारायणदास श्रीमाली)

डा० श्रीमाली का पत्र ऋतु के नाम

प्रषक डा नारायणदत्त श्रीमाली

स्थान जोधपुर

प्राप्तकर्ता ऋतु नैनीताल

वालोक—इस पत्र के माध्यम से पण्डितजी के मानस चिन्तन का आभास मिलता है कि किस प्रकार से गृहस्थ में रहते हुए भी अपने आपको वीतरागी-सा बना रखा है और किस प्रकार से एक साधक गृहस्थ में रहते हुए भी वानप्रस्थ वत् जीवन व्यतीत कर सकता है, जीवन का प्रत्येक क्षण कितना अधिक मूल्यवान होता है और उसका किस प्रकार से हिसाब रखा जाता है इसका आभास इस पत्र के माध्यम से साधको को प्राप्त होता है।

प्रिय ऋतु,
शुभाशीर्वाद।

तुम्हारा पत्र मिला, जिसमें तुमने आरोप लगाया है कि मैं जान बूझ कर तुम्हारे पत्र का उत्तर नहीं देता या तुम्हें पत्र का उत्तर प्राप्त करने में बहुत अधिक प्रतीक्षा करनी पड़ती है, इसका तात्पर्य यह नहीं है कि मैं पत्र का उत्तर देना नहीं चाहता या तुमसे अथवा तुम्हारे परिवार से उदासीन हूँ, अपितु इसका कारण मेरी अत्यधिक व्यस्तता है। मैं चाहता हूँ कि मेरे जीवन का प्रत्येक क्षण रचनात्मक कार्यों में ही व्यतीत हो। आगे के जीवन में मेरी जितनी सासें हैं उनका हिसाब-किताब समाज के पास हो, एक भी क्षण व्यर्थ में नहीं बीत जाए, इस बात का मुझे हमेशा आभास रहता है।

तुमने अपने पत्र में आरोप लगाया है कि मैं उस तरफ पिछले एक वर्ष से नहीं आ सका हूँ या मैं नहीं आना चाहता हूँ, तुम्हारा ऐसा सोचना व्यर्थ है। मैं स्वयं तुम्हारे परिवार से मिलने के लिए उत्सुक हूँ, उनकी सेवा मेरे मानस में इस समय भी है, उनकी भावनाओं को मैं भली प्रकार से समझता हूँ और मेरे न आने से आप सब लोगों को कितनी खीझ, कितनी उदासी और कितनी बेचैनी होती होगी, इन तीनों में कल्पना कर सकता हूँ।

परन्तु तुम्हारे सामने प्रश्न केवल तुम्हारे परिवार का है, जबकि मेरे सामने इस प्रकार के सैकड़ों, हजारों परिवारों का प्रश्न है, तुम्हारी समस्याओं से तुम चिन्तित हो और चाहती हो कि इस समस्या का निराकरण जल्दी हो जाए। जिस प्रकार से तुम सोच रही हो उसी प्रकार से अन्य परिवार के लोग भी तो सोचते होंगे। भारत-वर्ष में कम-से-कम एक करोड़ से ज्यादा लोगो से मेरा व्यक्तिगत परिचय होगा और इनमें से कम-से-कम पाच-दस लाख परिवार ऐसे होंगे जिनका मुझसे निकट का परिचय होगा। वे यह चाहते हैं कि मैं उनके यहाँ भी जाऊँ, उनकी बातें भी सुनूँ, उनकी समस्याओं का निराकरण भी करूँ, जिस प्रकार से तुम्हें और तुम्हारे परिवार को खीझ या वेचैनी होती है उसी प्रकार से इन दस लाख परिवारों को भी होती होगी, जिस प्रकार से तुम मुझसे मिलने के लिए आतुर हो उसी प्रकार से और लोग भी तो होंगे। काश्मीर से कन्याकुमारी तक मेरा परिवार फैला हुआ है, मैं उन सब परिवारों का एक सदस्य हूँ, उनके सुख-दुख का भागी हूँ, उनकी समस्याओं के निराकरण में सहयोगी हूँ, उनके हर्ष और विषाद, दुख और सुख आदि में मेरा भी योगदान रहा है, इसीलिए इन सबसे मेरा आत्मीय सम्बन्ध है, मेरा अपनत्व है, निकट का सम्पर्क है।

इस सम्बन्ध या सम्पर्क के पीछे किसी प्रकार का कोई स्वार्थ नहीं है, उन परिवारों से मुझे कुछ लेना नहीं है, उनके और मेरे बीच जो सम्बन्ध हैं वे आत्मीय सबंध हैं, प्रेम के सम्बन्ध हैं, सरलता और सहजता के सम्बन्ध हैं, इसीलिए ये सम्बन्ध स्थायी हैं और इतने वर्ष बीतने के बाद भी इन पर किसी प्रकार की गर्द नहीं जमी है।

जो सम्बन्ध स्वार्थ पर आधारित होते हैं वे ज्यादा समय तक जीवित नहीं रहते, जिन सम्बन्धों के पीछे केवल मात्र स्वयं का ही हित चिन्तन होता है वे सम्बन्ध क्षणजीवी होते हैं, जिन सम्बन्धों के पीछे वासना, घोखा, कपट, छल या स्वार्थ होता है, उन सम्बन्धों का अन्त अत्यन्त ही दुखदायक होता है, मैं इस प्रकार के सम्बन्धों की भर्त्सना करता हूँ, इस प्रकार के सम्बन्धों का निर्वाह मैं कर ही नहीं सकता, मैं तो अपने जीवन में पूरी तरह से उन्मुक्त रहा हूँ। मेरे जीवन का कोई भी क्षण गोपनीय नहीं रहा है, मेरे जीवन का प्रत्येक हिस्सा सार्वजनिक है। मैं चाहता हूँ कि मेरा यह जीवन और आगे का जीवन इसी प्रकार सार्वजनिक बना रहे, ऐसी स्थिति में छल, कपट, घोखा की गुंजाइश कहा हो सकती है ?

मैं तुम्हारी और तुम्हारे परिवार की समस्याओं से परिचित हूँ, परन्तु यह समस्या इतनी तीव्र नहीं है कि उसका समाधान आज का आज ही होना आवश्यक हो। तुमने अपने पत्र में आरोप लगाया है कि मैं तुम लोगों को झुला बैठा हूँ या तुम्हारे कार्यों के बारे में मैं रुचि नहीं ले रहा हूँ, यह सोचना व्यर्थ है। मैं अपने जीवन में सत्य का हामी रहा हूँ। मैं उतनी ही बात कहता हूँ जितनी कि कर सकता हूँ, व्यर्थ मैं किसी को न तो धोखे में रखता हूँ और न उसे दिवास्वप्न दिखाता हूँ।

बिलम्ब होने की बात मैं स्वयं स्वीकार करता हूँ और यह शिकायत तुम्हारी

ही नहीं है अपितु सैकड़ों-हजारों परिवारों की है, पर तुम स्वयं सोचो कि तुम्हारी तरफ तो इसलिए आना है कि तुम लोगों से मिलना है, पर जब मैं घर से रवाना होने का उपक्रम करता हूँ और ज्ञात होता है कि कलकत्ता के किसी परिचित परिवार का पुत्र बीमार है और उनकी सारी आशा केवल मेरी ओर ही लगी हुई है, उनकी यही

भावना है कि यदि मैं वहाँ पहुँच जाता हूँ तो उनका इकलौता पुत्र बच सकता है तो तुम बताओ कि ऐसी स्थिति में मैं तुम्हारी तरफ कैसे आ सकता हूँ ? मेरा पहला कर्तव्य यह होता है कि मैं उस दुखी परिवार के पास पहुँचूँ। उसे सान्त्वना दूँ और यदि मुझ में कुछ ज्ञान है तो उसके द्वारा उसके पुत्र को स्वस्थ करूँ।

कई बार ऐसा होता है, कई बार ऐसा हुआ है, तुम्हारा ही नहीं और भी कई परिवारों का मुझ पर आरोप है कि मैं उनसे मिलता नहीं हूँ या मिलना नहीं चाहता या कुछ क्षणों के लिए आकर तुरन्त रवाना हो जाता हूँ। उन्हें ऐसा लगता है कि जैसे ग्रीष्म ऋतु में एक शीतल हवा का झोका कुछ क्षणों के लिए आकर चला गया हो, परन्तु इतना होते हुए भी मैं उन कार्यों को प्राथमिकता देता हूँ जो तुरन्त आवश्यक होते हैं, जिनका समाधान यदि कुछ समय के लिए टाल दिया जाए तो ऐसी घटना घटित हो जाती है जिसका समाधान फिर सम्भव ही नहीं होता।

मुझे तो खुशी है कि तुम्हारा जन्म पहाड़ों की गोद में हुआ है और पहाड़ों की निश्चलता, पहाड़ों की सहजता, उसकी सरलता तुम्हारे जीवन में भी व्याप्त हुई है, मेरा स्वयं का अधिकांश जीवन पहाड़ों में ही व्यतीत हुआ है। मेरे तो जीवन के सुख-दायक क्षण ही प्रकृति की गोद में बीते हैं, प्रकृति को जिस रूप में मैंने समझा है उस प्रकार से कम लोगों ने समझा होगा, मेरे लिए यह प्रकृति माँ है, वहिन है, इसने मुझे बहुत कुछ दिया है, मेरे जीवन को यदि खुशियों से परिपूर्ण किया है तो वह इस प्रकृति के माध्यम से ही हो पाया है।

पर आज मैं उस प्रकृति से कट सा गया हूँ, एक ऐसे लोक में अपने आपको चिरा हुआ अनुभव कर रहा हूँ जिसमें बघन है, कसावट है मोह और प्रेम का चतुर्दिक जाल है, इस लोक से जितना ही ज्यादा अलग होने का प्रयत्न करता हूँ उतना ही ज्यादा उलझता जाता हूँ। आज का मानव पूरी तरह से कृतिम हो गया है इसीलिए उसमें छल, कपट, धोखा और अनाचार की बाहुल्यता आ गई है, इतना होने पर भी वह प्रकृति से अपने आपको अलग नहीं कर पाया है, बहुत बड़े-बड़े भवन बनाकर उसमें प्रकृति के पौधे लगाने को वह आतुर रहता है, क्योंकि उसके जीवन का आधार उसकी मानवीयता का आधार प्रकृति रहा है। अतः व्यक्ति जितना ही ज्यादा प्रकृति से कटता है, वह उतना ही ज्यादा खोखला होता है।

मैं जंगलों में अकेला रहा हूँ, मेरे नीचे घरती का बिछीना रहा है और मैं आकाश की चादर ओढ़कर निर्द्वन्द्व रूप से सोया हूँ। मेरे पास कुछ नहीं होते हुए भी मैं अपने आपको ससार का सबसे ज्यादा सम्पन्न समझता था क्योंकि मेरे पास प्रकृति थी, उस प्रकृति के हजारों रूप मेरे सामने थे, मैं प्रत्येक पल उस प्रकृति के परिवर्तित रूप को देखता था और अपने आपमें मुग्ध होता था। जितना ही ज्यादा मैं प्रकृति के निकट गया हूँ उतना ही ज्यादा मुझे सुख और सन्तोष मिला है, जितना ही ज्यादा मैंने प्रकृति से तादात्म्य स्थापित किया है उतनी ही ज्यादा मुझे अनुकूलता प्राप्त हुई है।

और आज मैं विल्कुल दूसरा जीवन जी रहा हूँ, रहने के लिए बहुत बड़ा मकान है, खाने के लिए सुस्वादु भोजन है, काम के लिए नौकर चाकर हैं और इतना सब कुछ होते हुए भी मेरे मन में शान्ति नहीं है। एक छटपटाहट है कि मैं कितना जल्दी इस कृत्रिमता से निकलूँ और प्रकृति की गोद में चला जाऊँ। मुझे यह भवन, यह सुख-सुविधाएँ विल्कुल सान्त्वना नहीं देती। मैं एक प्रकार से अपने-आपको घिरा हुआ अनुभव करने लग गया हूँ। जंगलो में रहते हुए जो मस्ती थी, जो उन्मुक्त भावना थी वह समाप्त हो गई है और इस समय तो चौबीसों घण्टे कार्य के अलावा कुछ भी मेरे सामने नहीं रह गया है।

प्रातः चार बजे से उठ कर रात्रि को ग्यारह बजे तक मैं एक क्षण के लिए भी विश्राम नहीं कर पाया या यो कहा जाए कि विश्राम करने को समय ही नहीं मिलता। मैं स्वयं इस प्रकार बीस-बीस घण्टे कार्य करते-करते थक गया हूँ, मैं चाहता हूँ कि जितना जल्दी इससे छूटकर उस तरफ आ सकूँ, प्रकृति की गोद में बैठ सकूँ, उसके साथ बातें कर सकूँ और एक बार पुनः अपने जीवन को आनन्द के क्षणों में डुबो सकूँ।

मैंने दोनों प्रकार का जीवन जीया है, मैं भूख और अभाव में भी रहा हूँ और सम्पन्नता को भी अनुभव किया है। पत्थरों और चट्टानों पर भी सोया हूँ और मखमली गद्दों पर भी विश्राम किया है। जंगलो में विचारण करता रहा हूँ और ऊँचे महलो और होटलो में भी रहा हूँ परन्तु इन दोनों स्थितियों में से यदि मुझे एक स्थिति चुनने के लिए कहा जाए तो निश्चय ही मैं उस स्थिति को ज्यादा श्रेयस्कर मान रहा हूँ जिसका रास्ता प्रकृति की तरफ है। इस प्रकार के ऊँचे-ऊँचे भवनों में रहते हुए मुझे किंचित भी सुख नहीं मिलता, मखमली गद्दों पर लेटकर मुझे नीद नहीं आती, आनन्द और वैभव के बीच में रहते हुए भी मेरा मन छटपटाता रहता है। एक प्रकार का अभाव-सा अनुभव करता हूँ, ऐसा लगता है जैसे मैं अपने जीवन से कट गया हूँ, मूल जीवन स्रोत से परे हट गया हूँ। मेरे जीवन की पूर्णता उसी दिन हो सकती है जिस दिन वे प्रकृति से पुनः तादात्म्य स्थापित कर सकूँगा। जब भी मुझे प्रकृति की गोद में जाने का अवसर मिलता है, मेरे लिए वे क्षण स्वर्णिम होते हैं, उन क्षणों का मैं जी भरकर आनन्द लेता हूँ और पुनः अपने आपको तरोताजा और स्वस्थ अनुभव करने लग जाता हूँ।

इसलिए मेरी तो स्वयं की यह इच्छा रहती है कि मैं उस तरफ आऊँ, आप लोगों के परिवार के बीच रहूँ, प्रकृति के साथ अपने आपको एकाकार करूँ और कुछ क्षण भी यदि मुझे इस प्रकार के मिल जाएँ तो वे क्षण मेरे स्वयं के हो जाएँ, मेरे नाम लिख लिए जाएँ।

परन्तु मैं इस प्रकार के क्षणों से वंचित हो गया हूँ, चाहते हुए भी वे क्षण मेरे नहीं रहे, क्योंकि मैं इतना अधिक स्वार्थ अपने आपमें पैदा नहीं कर सकता। जिस उद्देश्य के लिए मैंने अपना घर बार छोड़ा था, जिस लक्ष्य के लिए मैंने अपने जीवन

को दाव पर नगाया था, जिस उद्देश्य की पूर्ति के लिए कष्ट सहें वे तो क्या वह उद्देश्य मेरा व्यक्तिगत था ? मैं अपने जीवन में व्यक्तिगत जैसी कोई मान्यता नहीं रखना चाहता । मैं तो चाहता हूँ कि मेरा प्रत्येक क्षण समाज के लिए समर्पित रहे, मैं जो कुछ सीख सका हूँ, जो कुछ मैंने प्राप्त किया है उसे दोनों हाथों से लुटाऊँ, समाज को ज्यादा-से-ज्यादा वह ज्ञान दूँ जो मैंने प्राप्त किया है और इस ज्ञान के माध्यम से अपने समाज का, अपने देश का ज्यादा हित-सम्पादन करूँ ।

और इस हित सम्पादन में यदि मुझे व्यक्तिगत क्षण नहीं मिलते हैं तो मुझे कोई चिन्ता नहीं, यदि मुझे आराम और सुविधाएँ नहीं मिलती हैं तो इसका मुझे गिला नहीं है, यदि चाहते हुए भी मैं कुछ क्षण अपने लिए नहीं निकाल सकूँ तो मुझे इस बात की कोई परवाह भी नहीं है । यदि मेरे आगे का पूरा जीवन समाज के लिए समर्पित हो जाए तो यह मेरे लिए खुशी की बात होगी । मेरे जीवन का प्रत्येक क्षण समाज का हित कर सकता हो तो इससे ज्यादा प्रसन्नता की बात कुछ हो ही नहीं सकती ।

मैंने भारत की प्राचीन विद्याओं को प्राप्त करने में जो कष्ट भोगा है, जो दुःख झेला है, जो परेशानियाँ उठाई हैं, वे मैं ही समझता हूँ और मेरे मन की यही शकावाही है कि मैं इस ज्ञान को अपने साथ नहीं ले जाऊँ, जो कुछ मैंने प्राप्त किया है उसे समाज में बांट दूँ, लोगों को दे दूँ और इस प्रकार से उस ज्ञान को जीवित रखूँ जिससे कि आने वाली पीढ़ियाँ उस ज्ञान से वंचित न हों ।

पर मुझे दुःख है कि मेरे समाज की वर्तमान पीढ़ी बहुत ही उतावली है, उसमें धैर्य और सयम का जरूरत से ज्यादा अभाव है । मैं अपने ज्ञान को देना चाहता हूँ और उनमें इस ज्ञान को प्राप्त करने की क्षमता ही नहीं है । मैं चाहता हूँ कि अपने जीवन में निर्जीव पुस्तकों के लेखन की अपेक्षा कुछ सजीव ग्रन्थ तैयार करूँ, कुछ ऐसे युवक तैयार करूँ जो इस ज्ञान को प्राप्त कर सकें, इस ज्ञान में समृद्ध हो सकें, इस ज्ञान में पूर्णता प्राप्त कर सकें जिससे कि मेरी मृत्यु के बाद भी यह ज्ञान मेरे साथ ही समाप्त न हो जाये अपितु यह ज्ञान उन युवकों के माध्यम से जीवित रहे, उनके द्वारा यह ज्ञान की धारा आगे बढ़ती रहे और इस प्रकार आगे के वर्षों तक यह ज्ञान हमारे समाज में जीवित रह सके जिससे कि हमारा समाज लाभान्वित हो, हमारा देश गर्व से उन्नत बना रह सके, हमारे महर्षियों की धरोहर सुरक्षित रह सके ।

परन्तु इतने वर्षों में मैं अन्य सारे कार्यों में सफल हो सका परन्तु प्रयत्न करने पर भी ऐसे १५-२० युवक प्राप्त नहीं हो सके जो इस प्रकार का ज्ञान प्राप्त करने में समर्थ हो । यह बात नहीं है कि मेरे पास इस प्रकार की भावना लेकर लोग आते नहीं हों, नित्य ५०-६० लोग इस प्रकार का ज्ञान प्राप्त करने के लिए भागे चले आते हैं परन्तु वे परिश्रम करना नहीं चाहते, वे चाहते हैं कि मैं अपने ज्ञान को उनमें परिवर्तित कर दूँ । वे चाहते हैं एक ही दिन में वे महान् तन्त्र-शास्त्री, या मन्त्र-शास्त्री बन जायें, वे एक ही दिन में प्रकाण्ड ज्योतिष और भविष्यवक्ता बनना चाहते

हैं, पर ऐसा कैसे सम्भव है ? जब मे उन्हें अपनी कसौटी पर कसता हू तो वे सोने की जगह पीतल निकल आते हैं और एक-दो दिन के बाद ही भाग खड़े होते हैं । मुझे दुःख है कि मेरे देश के साठ करोड़ व्यक्तियों में से साठ व्यक्ति भी ऐसे नहीं हैं जिनमें इस प्रकार का ज्ञान प्राप्त करने की ललक हो, जिनमें इस प्रकार की विद्या सीखने की प्रवृत्ति हो, जो परिश्रम से सम्बन्ध जोड़ने वाला हो, जो साधना के क्षेत्र में कष्ट उठाने में समर्थ हो, जिनका संकल्प दृढ़ हो, जिनकी साँसों में परिपक्वता हो जिसके हृदय में कुछ कर गुजरने की क्षमता हो, ऐसे युवक मिल ही नहीं रहे हैं । मेरे देश में ऐसे युवकों का अकाल है और ऐसी स्थिति देख कर कई बार तो मेरी आँखें डबडबा आती हैं कि क्या यह ज्ञान जो कुछ मैंने प्राप्त किया है, वह मेरे साथ ही समाप्त हो जाएगा ? इतने अधिक कष्ट उठाकर जो कुछ मैंने प्राप्त किया है, वह सब बेकार चला जाएगा ? इन सारी साधनाओं को पत्थरों पर उतारने से क्या हो जाएगा जब तक सजीव ग्रन्थ नहीं लिख पाऊंगा तब तक यह सब बेकार है, यह सब व्यर्थ है ।

मन्त्र एक ध्वन्यात्मक प्रयोग है, मन्त्र की मूल आत्मा ध्वनि है । उसका आरोह अवरोह है । किस मन्त्र को किस प्रकार से उच्चारित करना है यह मूल बात है कि मन्त्र को पढ़ लेना ही कुछ नहीं है, जब तक उस मन्त्र की ध्वनि, उसका आरोह, अवरोह उसकी लय, ज्ञात नहीं होती तब तक उस मन्त्र का प्रभाव हो ही नहीं सकता । इसीलिए हमारे शास्त्रों में बताया गया है कि मन्त्र गुरु मुख से लेना चाहिए । इसका मूल कारण यह है कि गुरु ही उच्चारण कर उस मन्त्र की ध्वनि का आभास दे सकता है । यह आभास कागज नहीं दे सकते, पुस्तकों में लिखे मन्त्र नहीं दे सकते, इसलिए मन्त्र का ज्ञान, मन्त्र की मूल आत्मा, पुस्तकों के माध्यमों से पहचानी ही नहीं जा सकती, उसे समझने के लिए तो गुरु की मितान्त आवश्यकता है, गुरु ही उसे इस बात का ज्ञान दे सकता है कि किस मन्त्र का उच्चारण किस प्रकार से करना है ? किस प्रकार से उसे प्रयोग में लाना है ? किस प्रकार उसका उपयोग करना है ? और उस मन्त्र से सम्बन्धित और अन्य क्या-क्या विद्याएँ हैं उसका कौलन और उत्कीलन क्या है ? यह सब पुस्तकें नहीं बता सकती । इसका ज्ञान तो तभी हो सकता है जब सामने गुरु बैठा हो और वह शिष्य गुरु चरणों में बैठकर सीख रहा हो । इसके लिए चाहिए धैर्य, समय और परिश्रम की भावना और और मेरे युवकों में आज उन्हीं गुणों का अभाव है ।

मेरे लिए यह कितनी बड़ी दुःख की बात है कि मैं इस प्रकार का ज्ञान देना चाहता हूँ और ज्ञान लेने वाले मिल ही नहीं पाते । मैं ज्यादा-से-ज्यादा इसको वाटना चाहता हूँ और सामने वाले की क्षोभी देखता हूँ तो वह फटी हुई मिलती है मुझे ऐसा लग रहा है कि मैं चाह कर भी कुछ नहीं कर पा रहा हूँ, मेरे मन में किस प्रकार की आग धधक रही होगी, कितनी बेचैनी और छटपटाहट मेरे मानस में रहती होगी इसको तुम कल्पना कर सकती हो ।

और ऐसे ही क्षणों में जब मेरा मानस बोझिल हो जाता है छटपटाहट से दिल

वेचैन हो जाता है, तब मैं प्रकृति की तरफ भागने की कोशिश करता हूँ, कुछ दिन वहाँ रहने का प्रयत्न करता हूँ परन्तु फिर मेरा कर्तव्य मुझे समाज में ठेल देता है, मेरी आत्मा कहती है कि तुम्हारे इन क्षणों पर तुम्हारा कोई अधिकार नहीं है, तुम्हारे जीवन की जो साँसें हैं वे समाज की हैं, प्रत्येक मास का हिमायत समाज को देना है, अपने स्वार्थ के लिये समाज से कटकर एक तरफ दौट जाना कायरता है, और मैं अपने जीवन के साथ 'कायरता' शब्द को जोड़ना नहीं चाहता, इसीलिये भारी मन से, और नवीन आशा के साथ पुनः समाज में घुस जाता हूँ कि शायद इस बार कोई ऐसा युवक मिल जायगा जो कुछ सीख सकेगा, जिसमें सीखने की इच्छा होगी। कार्य करने की उत्कट भावना होगी और मैं अपने ज्ञान को देकर अपने आपको हल्का अनुभव करने लग सकूँगा।

मैं भीड़ इकट्ठी करने में विश्वास नहीं रखता, यदि मैं चाहता तो अपनी इन साधनाओं के द्वारा इस प्रकार के चमत्कार दिखा सकता था या दिखा सकता हूँ जोकि अपने आप में अन्यतम हो, और इस प्रकार मैं अपने इर्द-गिर्द शिष्यों की लम्बी-चौड़ी फौज इकट्ठी कर सकता था, परन्तु मैं इस प्रकार की धारणा के सर्वथा विपरीत हूँ, मैं मानव हूँ अपने आपको भगवान् कहलाने में विश्वास नहीं रखता। मैंने प्रारम्भ से ही इस प्रकार के विचारों को हेय दृष्टि से देखा है, मेरे विचारों में यह आडम्बर है पाखण्ड है, जनता के साथ छल है, जीवन में शान्तिपूर्ण तरीके से ठोस रूप में जो कुछ भी कार्य किया जाता है, वह ज्यादा श्रेयष्कर होता है, समाज के लिये ज्यादा उपयोगी होता है, देश के लिये ज्यादा लाभदायक होता है।

मैं अपने जीवन में अत्यन्त ही सरल और सात्विक जीवन जीने को उचित समझता हूँ। मेरे जीवन की 'फिलोसोफी' एक अलग ढंग की है। मैं अपने जीवन में अन्तर्मुखी ज्यादा रहा हूँ। मैंने अपने आपको कभी उजागर करने का प्रयत्न नहीं किया, कभी भी अपनी प्रशंसा करने की कोशिश नहीं की, मैंने यह कभी नहीं चाहा है कि भीड़ इकट्ठी करूँ, 'धुर' कहलाऊँ या ऊँचा सम्मान प्राप्त करूँ।

इसकी अपेक्षा मैं इन सब चीजों से भागता रहा हूँ, मैंने अपने जीवन में एक ही उद्देश्य रखा है कि जीवन में मौन रहकर जितना कार्य हो पाता है उतना वाचाक्य बन कर नहीं। यदि जीवन में ठोस कार्य करना है या कुछ उपलब्धि प्राप्त करनी है तो वह चुपचाप तरीके से ही हो सकती है। जिसको पाखण्ड प्रिय है, जो अपने आपको सम्मानित कराना चाहता है जो यह चाहता है कि वह दुनिया की नजरों में दिखाई दे, वह इस प्रकार का आचरण कर सकता है, मेरी प्रकृति इससे सर्वथा भिन्न है।

मैंने अपने जीवन में जो कुछ प्राप्त किया है, वह पूरे समुद्र में एक बूद की तरह है, ज्ञान तो एक समुद्र की तरह होता है जिसका कोई ओर-छोर नहीं होता। मैंने इस समुद्र में डूबकी लगाने का प्रयत्न किया है और यह प्रभु की कृपा है कि मुझे मोती प्राप्त हुए हैं जो कि समाज के लिये गौरवयुक्त हैं।

यहाँ यह स्पष्ट कर दूँ कि आज जो अपने आपको प्रसिद्ध साधु, मन्त्र-शास्त्री, या

तांत्रिक कहते हैं उनमें से कई लोग मेरे साथ रहे हैं, और मुझसे गोपनीय तरीके से बहुत कुछ सीखा है, आज उनके पास लम्बी-चौड़ी भीड़ है, शिष्यों की पूरी जमात है, यह उनका चमत्कार है कि उन्होंने उस बूद का समुद्र बना दिया है, परन्तु मेरे लिये यह सब व्यर्थ है, मैं इस प्रकार की धारणा के सर्वथा विपरीत हूँ, इस प्रकार का पाखण्ड मेरी दृष्टि में हेय है ।

इसमें कोई दो राय नहीं कि शरीर, शरीर होता है उसको भी आराम की आवश्यकता होती है, वह भी विश्राम चाहता है और जिस प्रकार से मैं इस शरीर से बीस-बीस घण्टे काम लेता हूँ, उसको देखते हुए यह निश्चित है कि यह शरीर बहुत लम्बे समय तक मेरा साथ नहीं देगा, परन्तु जब तक मैं जीवित हूँ तब तब अकर्मण्य नहीं रहूँगा, मेरे जीवन का प्रत्येक क्षण समाज को समर्पित है और समर्पित रहेगा ।

मैं शीघ्र ही तुम्हारी तरफ आने का प्रयत्न करूँगा और जल्दी ही मुझे समय मिल पायेगा, जबकि मैं तुमसे और तुम्हारे परिवार से मिल सकूँगा । और कुछ समय प्रकृति के साथ निर्युक्त रूप से व्यतीत हो सकेगा ।

मेरा शुभाशीर्वाद सदैव आप लोगों के साथ है ।

स्नेह युक्त,
(नारायणदत्त श्रीमाली)

पत्र--डा० श्रीमाली के नाम

प्रेषक अरविन्दकुमार
स्थान झाबुआ (मध्य प्रदेश)
प्राप्तकर्त्ता महामहोपाध्याय, डा० नारायणदत्त श्रीमाली

आलोक—एक शिष्य किस प्रकार से अपने जीवन को समर्पित करके साधना के उच्च क्षेत्र पर पहुँच सकता है और किस प्रकार से उसके मानस में गुरु के प्रति सम्मान और श्रद्धा रहती है, उसके मानस का चिन्तन किस प्रकार से गुरु के साथ एकाकार रहता है इसका आभास इस पत्र के माध्यम से प्राप्त होता है जो कि साधकों के लिये अनुकरणीय है।

श्री अरविन्द कुमार पण्डितजी के प्रिय शिष्य है और कई वर्षों तक पण्डितजी के समीप रहकर उन्होंने उच्च स्तर की साधनाएँ सिद्ध की हैं।

परम पूज्य गुरुदेव,

साष्टांग दण्डवत्

आज बहुत दिनों के बाद मैं आपको पत्र लिख रहा हूँ, यद्यपि यह मेरी धृष्टता है कि मैं बिना आपकी आज्ञा के, आपको पत्र लिखने की चेष्टा कर रहा हूँ, परन्तु मेरी विकलता इतनी अधिक बढ़ गई है कि मैं चाहते हुए भी अपने आपको रोक नहीं पा रहा हूँ। मैंने बहुत प्रयत्न किया कि आपको पत्र न लिखूँ, आपके व्यस्त समय को लेने का मुझे कोई अधिकार नहीं है, आपके चिन्तन में मैं विघ्न दूँ ऐसा मैं उचित नहीं समझता, परन्तु पिछले एक महीने से मैं कुछ ऐसी आकुलता अनुभव कर रहा हूँ कि बिना आपसे मिले मैं अपने आपको रोक नहीं पाऊँगा, यद्यपि आपने मुझे पत्र लिखने के लिये मना किया था और आज्ञा दी थी कि बिना पत्र के भी बातचीत हो सकती है, एक दूसरे को देखा जा सकता है और आपने कृपा करके जो ज्ञान, जो साधना मुझे दी थी, वह मेरे जीवन की अतुलनीय सम्पत्ति है, आपने मुक्त हस्त से मुझे सब कुछ देने का प्रयत्न किया, परन्तु मैं ही अभागा हूँ कि उस समुद्र में से इतने अधिक मोती बटोर नहीं सका जिससे कि मेरी झोली पूरी तरह से भर जाय, इतनी अधिक आतुरता, इतनी अधिक बेचैनी मैंने अपने जीवन में कभी अनुभव नहीं की थी, परन्तु

आपके जाने के बाद मैं कोशिश करने पर भी अपने आपको नियंत्रित नहीं कर पा रहा हूँ।

आपने मुझे साधना काल में यह बताया था कि जब भी मन चंचल हो जाय तब प्रभु के चरणों में बैठ जाना चाहिए और उस मन्दिर में प्रभु के सामने अपनी सारी इच्छाएँ रख देनी चाहिए, पर मैं किसे मन्दिर मानूँ किस्को ईश्वर मानूँ ? किस्के सामने अपनी व्यथा कहूँ ? मेरे लिये तो मन्दिर, ईश्वर या इष्ट जो कुछ भी है, वह आप ही है और आपके अलावा मेरे लिये कुछ भी नहीं है।

आपका पूरा शरीर मेरे लिये मन्दिर के समान है, आपके चरण उस मन्दिर के सुदृढ स्तम्भ हैं। आपका शरीर इस मन्दिर का गर्भगृह है, और आपका उन्नत ललाट इस पवित्र मन्दिर का शिखर, जो कि दूर से ही भव्य और दिव्यतम दिखाई देता है। इस मन्दिर में जो मूर्ति बैठी हुई है, सत्य और प्रेम की वह साक्षात् मूर्ति ही मेरा इष्ट है। उसके सामने मैं बच्चों की तरह रोया हूँ, गिड़गिड़ाया हूँ और मुझे इससे सान्त्वना मिली है, प्रेम की अजल धारा प्राप्त हुई है, जब मैंने इस प्रकार के मन्दिर में प्रवेश किया है, इस प्रकार के पवित्र मन्दिर को छाया में बैठा हूँ, इस प्रकार की सजीव मूर्ति की करुणा मुझे प्राप्त हुई है तो फिर मैं और किस मन्दिर में जाऊँ ? किस मूर्ति के सामने अपनी व्यथा कहूँ ?

मैं अपने जीवन में बहुत भटका था, सैकड़ों मन्दिरों से सिर टकराया था, हजारों मूर्तियों के सामने अपनी व्यथा कही थी, परन्तु किसी ने भी मेरे आसू नहीं पोछे, किसी ने भी मेरे मन की तड़फ़ महसूस नहीं की, पर जब मैं आपके चरणों में आया, इस साक्षात् मन्दिर की छाया में बैठा तो ऐसा लगा जैसे मुझे वह सब कुछ प्राप्त हो गया हो जिसकी तलाश मुझे वर्षों से थी, और जब इस मन्दिर में निवास करने वाली साक्षात् मूर्ति के दर्शन किये और उसकी करुणा से आप्लावित हुआ तो मैं धन्य हो गया, मेरा सारा जीवन उन्मुक्त हो गया, जीवन में जो बेचैनी थी वह एकबारगी ही समाप्त हो गई।

इस भारत में लाखों मन्दिर हैं, जहाँ पर लोग जाते हैं, हजारों तीर्थ स्थल हैं, जहाँ पर गृहस्थ जाकर अपनी मानसिक व्यथा शान्त करते हैं, परन्तु उनमें कितने ऐसे हैं जो सही रूप में प्रभु के दर्शन कर पाते हैं, आपका शरीर एक चलता फिरता अद्भुत पावन मन्दिर है जिसमें करुणा की, दया की, और ममता की साक्षात् मूर्ति विद्यमान है, इस प्रकार के मन्दिर और इस प्रकार की दिव्य मूर्ति को छोड़कर मैं और कहा जाऊँ ?

मेरा पूरा जीवन तब तक व्यर्थ था जब तक कि इस मन्दिर के पास नहीं आया था। मेरा सारा शिक्षण, मेरा सारा ज्ञान एक प्रकार से व्यर्थ ही रहा था, आज मैं यह अनुभव कर रहा हूँ कि मेरे जीवन के कई वर्ष व्यर्थ में बरबाद हो गये। स्कूल की शिक्षा और कालेज का अध्ययन मानव के जीवन निर्माण में किसी प्रकार से सहायक नहीं होता। एक प्रकार से यह शिक्षण उसको थोड़ी डिग्रियाँ भले ही दे दे

परन्तु उसकी आत्मा का विकास नहीं कर सकता, आत्मा का विकास तभी हो सकता है जबकि उसे गुरु की प्राप्ति हो जाय । इस ससार में जितने भी व्यक्ति हैं, उनका अस्तित्व महज एक बालक के समान है, फिर वे भले ही सौ वर्ष के बूढ़े हो या पच्चीस वर्ष के बालक, क्योंकि जीवन की पूर्णता तभी सम्भव है जबकि उसको यह ज्ञान हो जाय कि उसका अस्तित्व क्या है दुनिया में हजारों पण्डित हैं, विद्वान् हैं, अपने क्षेत्र में अग्रगण्य हैं, और उनकी विश्व में ख्याति भी है परन्तु फिर भी वे अपने आपको ही नहीं पहचानते । जब तक उनको आत्मस्वरूप का ज्ञान नहीं होता तब तक वे व्यर्थ में ही इधर-रधर भटकते रहते हैं, अपना स्वरूप आत्म-ज्ञान या आत्म-ज्योति का दर्शन कराने वाला केवल गुरु ही होता है, सद्गुरु ही व्यक्ति को उसकी आत्मा में साक्षात्कार कराने में समर्थ होता है ।

जब तक मुझे आपका सानिध्य प्राप्त नहीं हुआ था तब तक मैं अपने आपको विद्वान और योग्य समझता था, जब तक मैंने आपको उगली नहीं पकड़ी थी तब तक पूरा भारत मुझे भौतिक शास्त्र का विद्वान् मानता था, जब तक मैं आपके चरणों के पास नहीं बैठा था तब तक मुझे अपने आप पर बहुत अधिक घमण्ड था, जरूरत से ज्यादा अहं था और मैं अपने आपको बहुत कुछ समझने लग गया था, परन्तु जिस दिन आपका बरदहस्त मेरे सिर पर पड़ा उस दिन एक नई ज्योति के दर्शन हुए, एक नया प्रकाश मेरी आँखों के सामने आया, मैंने पहली बार अनुभव किया कि इतना शीतल स्पर्श आज तक मेरे जीवन में अनुभव नहीं हुआ । मुझे उस दिन जिस स्वर्गिक सुख की अनुभूति हुई थी वह अपने आप में वर्णनातीत है । बूढ़ तभी तक उछलती है जब तक वह बूढ़ होती है पर उसको अपने वास्तविक रूप का ज्ञान तभी होता है जब वह समुद्र में मिलती है, उस समुद्र के सामने उसका महत्त्व क्या है, ठीक ऐसा ही मैंने आपके सामने आने पर अपने आपको अनुभव किया, मैंने दूर से हिमालय की धवलता का अवगाहन किया था, और उससे प्रवाहित गंगा में स्नान किया था, परन्तु इन दोनों का संयुक्त आभास उसी दिन हुआ था जिस दिन आपका सुखद स्पर्श मुझे प्राप्त हुआ था । आपकी आँखों की करुणा, दया और प्रेम की त्रिवेणी में जिस दिन मैं डूबा था उसी दिन मैंने अनुभव कर लिया था कि यही वास्तविक सुख है, मेरे जीवन का यही वह बिन्दु है जिसे प्राप्त करने के लिये मैं भटक रहा था ।

आपका प्रथम दर्शन ही मेरे लिए एक दिव्य दर्शन था । और पहली बार ही आपको देखकर मैं अपने आपमें आपके प्रति सम्मोहित-ता अनुभव करने लगा था । वास्तव में ही सन्त के दर्शन ही जीवन की पूर्णता का परिचायक होता है । यह मानव का भाग्य है कि उसे जीवन में सच्चे सत के दर्शन हो जाय । मुझे अपने पिता के द्वारा कहीं हुई एक घटना का स्मरण हो रहा है, उन्होंने कहा था कि जीवन की पूर्णता तभी होती है जबकि सच्चे सन्त के दर्शन हो जाए, फिर भले ही वह सन्त भ्रमूत रमाया हुआ हो या दिगम्बर हो, लंगोटी पहने हुए हो या पूर्ण गृहस्थ हो, इससे उस सन्त की दिव्यता पर कोई असर नहीं पड़ता, सन्त के दर्शन ही मानव के पापों का क्षय होता

है। इस सवध में उन्होंने मुझे एक कहानी सुनाई थी जो कि मुझे आज भी स्मरण है।

एक बार देवर्षि नारद ने भगवान विष्णु से प्रश्न किया कि सन्त के दर्शन करने से क्या लाभ है? भगवान विष्णु नारद के प्रश्न को सुनकर बिहसे और कहा कि अमुक स्थान पर एक मिट्टी के कण को लुढ़काता हुआ कीट जा रहा है, यह प्रश्न उसने पूछो।

महर्षि नारद उस कीट के पास गये और उससे प्रश्न किया। प्रश्न सुनते ही कीट ने देवर्षि नारद को एक क्षण के लिए देखा और अपने प्राण त्याग दिये।

नारद लौटकर विष्णु के पास पहुँचे और जो घटना घटी थी वह बता दी, भगवान विष्णु ने एक वर्ष बाद आने के लिए कहा।

एक वर्ष बाद नारद ने जब पुनः यही प्रश्न दोहराया तो विष्णु भगवान ने कहा कि अमुक जंगल में अमुक सरोवर के किनारे बैठे हुए राजहंस से तुम जाकर प्रश्न करो, इसका उत्तर वह देगा।

नारद तुरन्त उस स्थान पर पहुँचे और उस राजहंस से यही प्रश्न किया। राजहंस ने नारद को ध्यानपूर्वक देखा और अपने पर फैला कर वही समाप्त हो गया।

नारद को अत्यन्त दुख हुआ और उन्होंने विष्णु से जाकर सारी बात कह दी। भगवान विष्णु ने एक वर्ष बाद फिर आने के लिए कहा।

एक वर्ष बाद जब नारद ने पुनः यही प्रश्न भगवान विष्णु के पास रखा तो भगवान विष्णु ने उन्हें एक नगर के राजगृह में जन्मे नवजात शिशु से वह प्रश्न पूछने के लिए कहा।

नारदजी तुरन्त उस राजगृह में पहुँचे, वहाँ उनका अत्यन्त आदर सत्कार हुआ, उन्होंने एकान्त में उस शिशु से बात करने की इच्छा प्रकट की। लोगों को आश्चर्य हुआ कि यह नवजात शिशु देवर्षि नारद से किस प्रकार बातचीत कर सकेगा, पर नारद का हठ देखकर सभी अलग हो गये।

जब नारद ने प्रश्न किया कि सन्त के दर्शन से क्या लाभ है तो शिशु ने उत्तर दिया, महर्षि नारद पहली बार मैं कीड़ा था आपके दर्शन से मेरी मृत्यु हुई और मैं उच्च योनि में राजहंस बना। दूसरी बार जब आप जैसे सन्त के दर्शन हुए तब मैं उस योनि से छुटकारा पाकर इस राजगृह में जन्म लिया है और आज आपके पुनः दर्शन प्राप्त हुए हैं अतः सुखपूर्वक राज्य भोगने के बाद मेरी मुक्ति हो सकेगी।

सन्त अपने आप में चलते फिरते देवालय हैं, विचरण करते हुए पवित्र तीर्थ स्थल हैं, और आप में मैंने एक सच्चे सत के दर्शन किये हैं, आपके दर्शन करने के बाद मेरे जीवन में कोई भी इच्छा, कोई भी आकांक्षा बाकी नहीं रही है।

यद्यपि यह सब कुछ लिखने का मुझे कोई अधिकार नहीं है, यह लिखकर एक प्रकार से मैं पागलपन ही कर रहा हूँ, परन्तु मेरे मन में आपके जाने के बाद इतनी अधिक छटपटाहट बढ गई है कि मैं बिना कहे रह नहीं सकूँगा। मैं बहुत कुछ कहना चाहता हूँ परन्तु जब भी आप मेरे सामने होते हैं मेरी वाणी रूख जाती है, गला भर आता है और आँखों में हर्ष और आनन्द के आसूँ छा जाते हैं, इस प्रकार, मैं आपकी

मूर्ति के भली प्रकार से दर्शन करना चाहते हुए भी दर्शन नहीं कर पाता हूँ, आपको बहुत कुछ कहना चाहते हुए भी कुछ नहीं कह पाता हूँ, अपने मन की व्यथा, अपने मन की तड़फ, अपने मन की बेचैनी आपके सामने खोल कर रखना चाहता हूँ पर रख नहीं पाता । पता नहीं आपके सामने आते ही मेरी क्या अवस्था हो जाती है कि मैं कुछ भी नहीं कह पाता, कुछ भी नहीं कर पाता, जो भी कुछ याद होता है वह सब विस्मरण हो जाता है और आखों के सामने कर्पणा और प्रेम की साक्षात् भूति साकार हो जाती है ।

मैंने आपको सागर की तरह अनुभव किया है, मैंने यह देखा कि इस सागर में जो जितनी ही ज्यादा गहरी डुबकी लगाता है वह उतने ही ज्यादा मूल्यवान् रत्न प्राप्त करता है । मैं अपनी व्यक्तिगत अनुभूति के माध्यम से कहने में समर्थ हूँ कि आपके द्वारा साधना की जो गंगा प्रवाहित होती है वह अपने आप में निर्मल है, उसमें स्नान कर चित्त हल्का हो जाता है, मन में कई गुना आनन्द बढ जाता है और पूरा शरीर एक नये ही भावलोक में विचरण करने लग जाता है ।

आपसे अलग हुए लगभग एक वर्ष बीतने को आ रहा है और इस एक वर्ष में एक क्षण के लिए भी मैं आपको भुला नहीं पाया हूँ । सम्भवतः मैं अपने जीवन में आपको भुला भी नहीं सकूँगा, आपने मुझे दिव्य बिन्दु के दर्शन करने को कहा है, परन्तु जब भी मैं दिव्य बिन्दु पर ध्यान अवस्थित करता हूँ तब आपका सुन्दर स्वरूप मेरे सामने साकार हो जाता है, और वह बिन्दु अपने आप तिरोहित हो जाता है, उस समय जितना आनन्द प्राप्त होता है, मैं उसका वर्णन नहीं कर सकता, मेरी लेखनी में या मेरी जीभ में इतनी शक्ति ही नहीं है कि मैं उस आनन्द का वर्णन कर सकूँ ।

यद्यपि आपने मुझे जो 'चाक्षुष-साधना' सिखाई थी, उसके प्रयोग से मैं बराबर आपके दर्शन करता रहा हूँ, और अपने जीवन के प्रत्येक क्षण को सरस करता रहा हूँ, परन्तु इससे तृप्ति नहीं होती । ऐसा लगता है जैसे बहुत कुछ होते हुए भी मैं हर वार वंचित रह जाता हूँ, बहुत कुछ प्राप्त करना चाहते हुए भी प्राप्त नहीं कर पाता, आपके शरीर दर्शन का जो आनन्द मैंने प्राप्त किया है, वह अपने आप में अन्य-तम है । चाक्षुष-साधना से तो केवल मेरी आत्मा ही आपको देख पाती है, परन्तु मेरे नेत्र अतृप्त हैं, उनकी प्यास तब तक नहीं बुझती जब तक कि ये नेत्र आपके दर्शन न कर लें । दूर से हिमालय के दर्शन उतना आनन्द कैसे दे सकते हैं जितना आनन्द उस हिमालय से मिलने पर या हिमालय की छाया में बैठने से प्राप्त होता है, जब-जब भी मैंने इस सबध में साधना के द्वारा आपसे आज्ञा चाही है, तब-तब आपने निष्ठुरता से मना कर दिया है, पता नहीं मुझ से ऐसा क्या अपराध हो गया है, जिससे कि आप निकट आने की अनुमति नहीं देते । हो सकता है मुझ से अपराध हुआ हो, परन्तु मैं तो बालक हूँ और बालक का धर्म ही गलतियाँ करना है । आपको मैंने माता और पिता दोनों ही रूपों में देखा है, दोनों का समुक्त स्वरूप ही गुरु होता है और इसी रूप में मैंने आपके दर्शन किये हैं, फिर मुझे आपके दर्शन करने से वंचित क्यों रखा जा रहा

है ? 'कुपुत्रो जायेत क्वचिदपि कुमाता न भवति' पुत्र कुपुत्र हो सकता है परन्तु मा कुमाता नहीं होती, मैं अपराध कर सकता हूँ परन्तु आप क्षमाशील हैं, कृष्णा की साक्षात् मूर्ति हैं, आप मेरे अपराध पर ध्यान दें और मुझे आज्ञा दें जिससे कि मैं आपके चरणों में आ सकूँ, आपके सान्निध्य में कुछ क्षण बैठ सकूँ और अपने जीवन को धन्य कर सकूँ, इन अतृप्त आँखों की प्यास बुझा सकूँ, और जीवन की अभिलाषा को, इच्छा को पूर्णता दे सकूँ ।

इस जीवन में तो शायद मेरे द्वारा कोई पुण्य कार्य नहीं हुआ होगा, परन्तु इसमें कोई सन्देह नहीं कि पूर्व जन्म में मैंने अवश्य ही पुण्य कार्य किये होंगे जिससे कि मैं आपका सान्निध्य पा सका, आपके चरणों में बैठ सका, और आपकी कृपा, आपका स्नेह, आपका भ्रमत्व पा सका । आपके पास रहकर छ वर्ष किस प्रकार से बीता गये कुछ मालुम ही नहीं पडा । ऐसा लगा जैसे हवा में कपूर विलीन हो गया हो और उसकी गंध ही वातावरण में रह गई हो, परन्तु आपसे अलग होकर यह एक वर्ष निकालना इतना अधिक कठिन हो गया है कि कुछ कह नहीं सकता । मेरे लिये प्रत्येक क्षण भारी हो रहा है, यह एक वर्ष इस प्रकार से बीता है जैसे मैंने हजारों वर्ष बिता दिये हो । अब तो ऐसी स्थिति बन गई है कि मैं चाहते हुए भी अपने आपको रोक नहीं पा रहा हूँ, यद्यपि आपके पास आने में आपकी आज्ञा बाधक बन रही है, परन्तु मैं बालक हूँ और बालहठ से कहीं मेरे द्वारा आपकी आज्ञा का उल्लंघन न हो जाय, यदि कुछ समय तक आपके दर्शन नहीं कर सका, तो शायद ये प्राण इस पिंजरे में नहीं रह पायेंगे । कुछ ऐसा ही आभास होने लगा है ।

पिछली बार जब साधना में आपसे बातचीत करने का सुखद क्षण प्राप्त हुआ था तब आपने मुझे विवाह करने की आज्ञा दी थी, पर प्रभु मेरी इच्छा इस प्रकार की नहीं रह गई है, मैं अब अपने जीवन को पुनः उस कीचड़ में नहीं धकेलना चाहता, जिस कीचड़ से मैं बाहर निकल आया हूँ । मेरी तो एक ही इच्छा है कि मैं आपके चरणों में रहूँ, आपका सुखद स्पर्श अनुभव करूँ, आपकी आज्ञा का पालन करूँ और इस प्रकार मेरा पूरा जीवन आपके चरणों में रहते हुए व्यतीत हो जाय ।

मेरे लिए माता-पिता, भाई बन्धु, स्वजन, कुटुम्ब, परिवार यदि कुछ है तो वह सब कुछ आप ही हैं । मेरे लिए न कोई मन्दिर है, न कोई इष्ट देवता । मेरे लिए कुछ है तो वह केवल आपका सामीप्य है, आपकी कृपा है ।

आज विश्व, कलह, युद्ध, रोग, और अधकार से ग्रस्त है, चारों तरफ धोखा, छल, कपट का साम्राज्य छाया हुआ है । पीडित मानवता पुकार रही है, आवश्यकता है एक ऐसे स्नेह की, एक ऐसे कृष्णा के प्रवाह की, जिससे कि वह पीडित मानवता सान्त्वना पा सके, उसके हृदय में आनन्द और उमंग आ सके, और यह सब कुछ आपके द्वारा ही संभव है, आपकी कृष्णा के माध्यम से ऐसा हो सकेगा, ऐसा मैं अनुभव करता हूँ । इस प्रकार के कार्य में मैं भागीदार बन सकूँ, आपके सन्देश को ज्यादा से ज्यादा

लोगों तक पहुँचा सकूँ, उनकी पीड़ा हर सकूँ और उन्हें सच्चा आत्मीय सुख दे सकूँ, यही मेरी इच्छा है, यही मेरा लक्ष्य है और इस लक्ष्य की पूर्ति तभी संभव है जबकि आपका वरदहस्त मेरे सिर पर हो, आपकी आज्ञा मेरे लिए पाथेय हो ।

आपने मुझे बहुत कुछ दिया है, मैंने आपसे बहुत कुछ पाया है फिर भी मैं अपने आप में अतृप्त हूँ । ऐसा लग रहा है जैसे अभी तक मेरा पूरी तरह से निर्माण नहीं हो पाया है, अभी तक मेरी आँखों में खालीपन है, और यह खालीपन यह, शून्यता आपके द्वारा ही भरी जा सकती है, आपने साधना के माध्यम से जो कुछ मुझे दिया है, उससे उच्छृङ्खल इस जीवन में तो क्या अगले सात जीवन में भी नहीं हो सकता । यदि मेरे शरीर के चमड़े की चर्म पादुकाएँ आपके पैरों के लिए बनें तब भी मेरा उस कृपा से उच्छृङ्खल होना संभव नहीं है ।

आपके पास रहकर मैंने जितना सुख और सन्तोष प्राप्त किया है उतना जीवन में कभी नहीं कर पाया था । मुझे ऊँचे-से-ऊँचा सम्मान मिला था, विदेशों में मेरे कार्य की सराहना हुई थी, तब भी मुझे इतना आनन्द प्राप्त नहीं हुआ था, जितना आनन्द आपके चरणों में बैठकर प्राप्त हुआ था । आपसे जो कुछ पाया है वह मेरे लिए अन्यतम है, आपके घर में जो शान्ति प्राप्त हुई है, उसका वर्णन करना संभव नहीं है ।

पूज्य माताजी कल्या की साक्षात् मूर्ति हैं, मैं उनसे प्रार्थना करूँगा कि वे आपको प्रेरित करें, जिससे कि आप मुझे अपने चरणों में बुला सकें, मैं अतृप्त हूँ और आपके चरणों के पास आने के लिए उतावला हूँ, आपके बिना मेरी कोई गति नहीं है, आप ही मेरे सर्वस्व हैं, सब कुछ हैं ।

एक बार पुनः आपके चरणों में नमन करता हुआ आपके सान्निध्य में आने की इच्छा प्रकट करता हूँ और आज्ञा चाहता हूँ जिससे कि मैं जल्दी-से-जल्दी आपके चरणों में आ सकूँ ।

आपका ही,
(अरविन्द कुमार)

प्रेषक श्री सच्चिदानन्द परमहंस
 स्थान अज्ञात (संभवत वद्रीनाथ के आस पास)
 प्राप्त कर्त्ता डा० नारायणदत्त श्रीमाली
 आलोक डा० श्रीमाली जी ने परमपूज्य गुरुदेव के पास लिखे गए एक पत्र में साधना सम्बन्धी अपनी आन्तरिक अनुभूतियों का विवरण देते हुए उनसे मार्ग निर्देश की याचना की थी, पूज्य श्री स्वामीजी ने यह पत्र उसी के उत्तर में लिखा था ।

विषय साधना ज्ञान ।

ओम तत् सत्
 आशीर्वादक श्री सच्चिदानन्द परमहंस
 चिरायु ।

परम शुभा शिषा राखय सन्तु ।

बाबा ! तुम लोगों के मंगल के लिए परम मंगलमय के समीप प्रार्थना करता हूँ, मंगलमय तुम लोगों का मंगल करे, यही मेरा इष्ट है । वत्स ! तुम्हारा पत्र पाकर सब अवगत हुआ ।

वत्स ! जो कुछ तुम बाहर देखने का प्रयत्न कर रहे हो, वह अपने अन्तर में देखो, क्योंकि अन्तर का प्रकाश ही बाह्यकाश को प्रकाशित और ज्योत्स्नि करता है । साधारणतः मानव अपनी आन्तरिक चिन्ता को बाह्यकाश में देखता है और तभी वह चिन्ता घनीभूत होकर उसके मस्तिष्क को तथा चित्त को विभ्रान्त कर देती है, यदि तुम सूक्ष्मता से देखोगे तो यह सारी प्रकृति नित्य लीलालीन दिखाई देगी, अन्तर के प्रकाश के द्वारा ही तुम बाह्य प्रकृति के आभ्यन्तरिक मूल को देख सकते हो, मन में प्रकाश का और पवित्रता का सूक्ष्म बिन्दु भी होता है तो यह सूक्ष्म बिन्दु जगत-शक्ति के प्रकाश से मिलकर मन को शुद्ध और चित्त को परिष्कृत कर देता है । सर्वव्यापिनी शक्ति को यदि हम आभ्यन्तर में स्थापित करें, तभी हम अपने अन्तर के प्रकाश को बाह्य प्रकाश में मिलाने में समर्थ हो सकते हैं, महाशक्ति का ज्ञान अन्तर और बाह्य को एकाकार करने में समर्थ होता है । अन्तर की पवित्रता से ही महामाया के विशुद्ध भाव का चिन्तन हो सकता है तत् हेतु जिस ज्ञान का उदय होता है वही अखण्ड प्रकाश तथा उज्ज्वल तेज कहा जाता है, इसी उज्ज्वल तेज के प्रभाव से मन का पाप—ताप, ज्वाला, यत्रणा, वेदना, आशक्ति आदि तिरोहित हो सकती है और इसके बाद ही चित्त शुद्ध और परिष्कृत हो पाता है । ऐसा होने पर ही चित्त में अगूठे के सदृश जो जगत—शक्ति का प्रकाश उदित होता है वही प्रकाश हमारे जीवन को ऊँचा उठाने में समर्थ होता है । फलस्वरूप मानव बाह्य व्यापार को भूल जाता है और इस स्थूल जगत से अपने आपको हटाकर सूक्ष्म जगत में प्रवेश करने का अधिकारी बन जाता है ।

विज्ञान के द्वारा स्थूल की उपासना ही हो पाती है, जब तक सूक्ष्म का चिन्तन

नहीं होगा तब तक हमारा सारा व्यापार निष्क्रिय है, क्योंकि विज्ञान के द्वारा जो उपासना होती है वह स्थूल ही होती है, सूक्ष्म की उपासना चित्त-वृत्तियों का निरोध करने पर ही सम्भव है, उसके लिए कलुषित और सन्तप्त चित्त को परे हटाकर निर्मल चित्त की अवधारणा करनी चाहिए, महाशून्य में जब महाशक्ति का आलोक सचरित होता है उस समय निर्मल चित्त वाला ही उस प्रकाश और आलोक के रहस्य को समझ पाता है क्योंकि इस प्रकार के रहस्य को समझने की जो भाषा है वह अलिखित है।

विश्व में जो शक्तिभूत है उसके मूल में यही शक्ति कार्य करती है जो कि आदि, मध्य और अन्तिम है। विषयो में इसी का प्रकाश झुतिमान होता है उसकी शक्ति सङ्कुचित होने पर भी यह विश्व सकीर्ण होता है और धीरे-धीरे आसुरी शक्तियों का उदय होता है, जीवन में पूर्णता प्राप्त करने के लिए इन आसुरी वृत्तियों का त्याग आवश्यक है।

यह परब्रह्ममयी सत्ता पूरे विश्व को नाना प्रकार से खेल खिलाती है, यही सुख-दुःख, हानि-लाभ, आशा-निराशा, पिता-पुत्र, भाई-बहिन, सेव्य-सेवक आदि को लेकर एक ऐसा खेल खेल रही है जिसको समझना सुगम नहीं। भ्रमवश हम इस खेल को समझ नहीं पाते और इसकी आलोचना करके अपने आपको बुद्धिमान अनुभव करते हैं, परन्तु इस प्रकार की आलोचना बुद्धिहीनता का प्रमाण है क्योंकि जीव, आत्मा, स्वरूप सूक्ष्म, स्थूल आदि सभी इसी महाशक्ति मा की नित्य लीला है, जब तक इस लीला को समझने का प्रयास नहीं करोगे तब तक तुम्हारा चित्त विभ्रम और उद्विग्न रहेगा।

अगीभूत पुत्र और शिष्य में कोई अन्तर नहीं होता। जो वात्सल्य गृहस्थ में मा के द्वारा अगीभूत पुत्र को प्राप्त होता है, सन्ध्यास में वही वात्सल्य गुरु द्वारा शिष्य में प्रवाहित होता है। तुम्हारा निर्माण एक विशेष उद्देश्य को लेकर मा जगज्जननी ने योग शक्ति के माध्यम से किया था। मैं तो केवल उस आद्य शक्ति के प्रकाश का सूक्ष्म कण हूँ। जो कुछ होता है, जो कुछ हुआ है, वह सब उस आद्या शक्ति के भ्रू-संकेत से ही हुआ है, तुम्हारा जन्म, सामान्य मानव के रूप में जन्म लेकर समाप्त होने के लिए नहीं हुआ है, अपितु तुम्हारी रचना एक विशेष उद्देश्य को लेकर है, तुम्हारा मेरे पास आना और मेरा तुम्हें अगीभूत करना भी उस नित्य लीलाविहारिणी की एक लीला है। सूक्ष्म रूप में तुम भी उसी प्रकाश के एक कण हो जिस प्रकाश के कण से मेरा आविर्भाव है, परन्तु तुम्हें अपने पास खींचना और एक विशेष प्रकाश से तुम्हारा निर्माण करना एक विशेष उद्देश्य से प्रेरित है। जिस प्रकार कुम्भकार मिट्टी के लोंदे को चोट देकर एक विशेष रूप में निर्मित करता है उस कुम्भकार का एक निश्चित उद्देश्य होता है और इस उद्देश्य से प्रेरित होकर ही वह मिट्टी को हाथ लगाता है एवं तीव्राघात से उसका स्वरूप निर्मित करता है।

तुम्हारा मेरे पास आना और मेरे द्वारा आघात दे-देकर एक विशेष रूप में

तुम्हारा निर्माण करना एक निश्चित उद्देश्य को लेकर था। यह उद्देश्य वह शक्ति ही जाननी है मुझे तो केवल उसकी आज्ञा का पालन करना है, इसीलिए तुम्हारे प्रति एक विशेष उत्तरदायित्व अपने चित्त में अनुभव करता हूँ और तब तक यह बाबा शान्त नहीं होगा जब तक तुम अपने लक्ष्य पर पहुँच नहीं जाओगे।

मेरे मन में मोह नहीं है, अपितु वास्तव्य भाव अवश्य है क्योंकि मैंने तुम्हारा पालन उसी रूप में किया है जिस प्रकार से एक माँ अपने नवजात बच्चे का करती है। मेरे सम्पर्क में रहने पर तुम्हें जरूरत से ज्यादा यातना और कष्ट सहन करना पड़ा है परन्तु यह सब कुछ इसलिए आवश्यक था जिससे कि मेरे निर्माण में किसी प्रकार की कोई न्यूनता न रहे। तुम्हारे पत्र से जो भावना स्फुटित होती है वह मोह है, क्योंकि सूक्ष्मता में यदि तुम प्रवेश करोगे तो देखोगे कि वहाँ न पत्नी है, न पुत्र है, न माँ है, न बाप है, न गुरु है, न शिष्य है, सभी एक ही अंश के अलग-अलग कण हैं, जिनका अपने आप में पृथक् अस्तित्व होते हुए भी पृथक् अस्तित्व नहीं है। वे अलग-अलग होते हुए भी एक हैं क्योंकि इन सबका निर्माण उसी माँ आद्याशक्ति के ज्योतिर्विन्दु से हुआ है, इसलिए मेरे समीप आने और मेरे साथ रहने की जो इच्छा तुमने व्यक्त की है वह तुम्हारा मोह ही तो है, यह मोह उस शक्ति के प्रकाश तथा देह विकास के क्रिया सयोग से जन्म लेता है, जब तक इस प्रकार के शत्रु—द्वेष-दम्भ, मोह—शरीर स्थित मानवीय भावों के आकर्षण—विकर्षण से सघर्षभूत रहेंगे तब तक इनसे पिण्ड छुड़ाना सम्भव नहीं होगा। इसीलिए यह प्रकाश विन्दु जगत जननी माँ की गोद में रहते हुए भी शत्रुओं से आक्रुष्ट रहता है और इन शत्रुओं के कुसंगत से चित्त वेदना-भागी होता है।

परन्तु पुत्र ! इस प्रकार वेदना-भागी होने से जीवन के क्षणों का मूल्य नहीं समझ सकोगे। हमारे जीवन का प्रत्येक क्षण उस नित्य लीला विहारिणी का प्रकाश है, अतः इन क्षणों को शत्रुओं से अबद्ध करना अपने आपको पतन के कगार पर स्थित करना है, तुम्हें आशाहीन होने की आवश्यकता नहीं, सब कुछ होते हुए भी बाबा वेह रूप में है, और इस देह रूप में होने पर कभी-कभी इन शत्रुओं का आघात सहन करना ही पड़ता है, इसीलिए तुम्हारे प्रति मोह की व्याप्ति हो जाती है, यद्यपि मैं अपने अन्तर से तुम्हें अलग नहीं देखता हूँ क्योंकि तुम शिष्य रूप में मेरे ही अंगीभूत हो और तुम्हारे जीवन का प्रत्येक कार्य मेरे ही उद्देश्य की पूर्ति में सहायक है।

नित्य लीलाविहारिणी के कार्य में व्याघात डालने का पापशोणी मैं स्वयं अपने आपको समझता हूँ, तुम्हारे जीवन का निर्माण गृहस्थ रूप में होते हुए भी सन्यास रूप में था। पूर्वजन्म में तुम मुझसे पूर्णतः अंगीकृत रहे हो, मेरे ही अंग से तुम्हारे शिष्यत्व का निर्माण हुआ था और आद्य रूप से प्रारम्भ कर अन्तिम क्षण तक प्रवाहमान तुम्हारा वैराग्य जीवन प्रवाहित रहा था। परन्तु मैं इस बात को समझता हूँ कि सन्यास-जीवन—एकांगी जीवन है, आज आवश्यकता समाज की चैतन्य करने की है, आद्या शक्ति माँ की क्रियाओं तथा भौतिक जगत की स्थूल व्यापारों में लक्ष्य

की वजह से पाप, क्रोध, छल, धोखा, असन्तोष, विग्रह आदि आसुरी प्रवृत्तियाँ व्याप्त होने लगी हैं और धीरे-धीरे इस भू पर आसुरी वृत्तियों का विकास बढ़ता जा रहा है, ऐसे समय में एकान्त-भोगी होने से जीवन-निर्माण का पूर्ण उद्देश्य अपूर्ण रह जायेगा। इस समय आवश्यकता इस बात की है कि इस स्थूल व्यापार में सलग्न मानव को सही रास्ता दिखाने के लिए प्रयत्न किया जाए और उस आद्यप्रकाश को पुनः स्थापित किया जाय जिससे कि भूतल पर दया, करुणा, प्रेम, स्नेह की अमृत-वर्षा हो सके।

इसके लिए उन कणों के समान ही अपने कण को बनाना आवश्यक है, जब तक उनके सदृश बनकर कार्य नहीं किया जायगा, उनके बीच रहकर अपनी भावनाओं को व्यक्त नहीं किया जायगा तब तक इस कार्य की-पूर्णता संभव नहीं है, तुम्हारे जीवन के तन्तु भोगमय न होकर योगमय ही रहे हैं परन्तु फिर भी मुझे उस जगज्जननी मा के भक्ते से तुम्हें पुनः गृहस्थ में प्रवेश देने की कठोर आज्ञा देनी पड़ी है, यद्यपि वत्स। इससे तुम्हारे चित्त पर कठोर आघात लगा था फिर भी ऐसा करना प्रकृति के मूल धर्मों के अनुरूप है इसीलिए तुम्हें ऐसा करने के लिए बाध्य होना पड़ा है।

इस समय पृथ्वी पर जिस प्रकार की भावनाएँ प्रवाहित हैं, वे आसुरी वृत्तियों की द्योतक हैं, ये वृत्तियाँ स्थूलता में गम्य हैं, सूक्ष्मता की तरफ इन वृत्तियों का निरोध हो गया है, जब तक इन आसुरी वृत्तियों की पराजय नहीं होती तब तक दैविक वृत्तियों का अभ्युदय संभव नहीं है। इन दैविक वृत्तियों के अभ्युदय के लिए ही तुम्हें पुनः गृहस्थ में भेजने की इच्छा मा की रही है, इसीलिए मैंने यहाँ से रवाना होते समय तुम्हें कहा था कि तुम्हें इस विश्व में कमलवत् रहना है, आसुरी वृत्तियों का प्रहार होने पर भी तुम्हें क्षमाशील बने रहना है, जिस समय चारों ओर पाप-वृत्तियों का अन्धकार व्याप्त हो, उस समय एक छोटे से दीपक को स्वयमेव प्रकाशित बनाये रखने में अत्यधिक जीवट की आवश्यकता अनुभव होती है, इसीलिए मेरे सैकड़ों शिष्यों के होते हुए भी इस कार्य के लिए मात्र तुम्हारा चयन करना पड़ा, मैंने तुमसे मा के योगक्षेम से जीवट की भावना बलवती देखी है, मैंने तुमसे दिव्य गुणों के परिभाजन की भावना अनुभव की है, प्रतिकूल परिस्थितियों में अपने आपको अडिग बनाये रखने की क्षमता का साहस देखा है इसलिए इस कार्य के लिए तुम्हारा चयन करना पड़ा है और इसी हेतु तुम्हें पुनः गृहस्थ धर्म में भेजने के लिए कृत सकल्प होना पड़ा है।

गृहस्थ में विश्व जननी के अपरिवर्तनीय नियमों तथा क्रिया-संयोग से उत्पन्न द्वेषादि प्रवृत्तियों का विकास और मोहादि भावनाओं का परिमार्जन स्वाभाविक है, परन्तु तुम्हें अपनी पूर्व श्रृंखला को स्मरण रखना है, तुम्हारे पूर्व जीवन सन्यासी के रूप में विकसित हुए हैं, इसीलिए इस जीवन में भी सन्यासी वृत्तियों का विकास तुम्हारे जीवन में स्वाभाविक रूप से रहा है, परन्तु फिर भी तुम्हें अपने गृहस्थ धर्म का पालन उसी रूप में करना है, जिस रूप में आद्या शक्ति माँ की लीला विचरण करती है, फलस्वरूप मोह आदि वृत्तियाँ तुम पर हावी होने का प्रयास करेंगी। चारों तरफ़ जिस प्रकार से आसुरी वृत्तियाँ तुम पर प्रहार कर रही हैं, वह मैं अनुभव कर

रहा हूँ। फिर भी तुम्हें अपने कर्तव्य पथ से च्युत नहीं होना है और इन वृत्तियों के बीच रहते हुए भी अपने आपको निर्लिप्त और निर्मात्थ बनाये रखना है। मोहादि वृत्तियों के बीच भी अपने आपको तटस्थ भाव से बनाये रखना ही तुम्हारे सन्यास जीवन की कसौटी है। गृहस्थ जीवन में सन्यास जीवन को विकसित करना कठिन कसौटी है, जिस प्रकार से मैंने तुम्हारा निर्माण किया है उस रूप में देखने पर मुझे विश्वास है कि तुम इस कसौटी पर खरे उतरोगे।

वत्स ! तुमने अपने पत्र में चित्त की चंचलता का आभास दिया है, तुम्हारा चित्त, गृहस्थ से हट कर मेरे पास आने को व्याकुल है, ऐसा तुमने व्यक्त किया है, परन्तु तुमको यह नहीं भूलना चाहिए कि बाबा ने जिन कष्टदायक शूलों में तुमको फँका है, उसके पीछे एक अभीष्ट है, जब तक वह अभीष्ट प्राप्त नहीं होता तब तक तुम्हें उन तीक्ष्ण शूलों से सघर्ष करना है। गृहस्थ जीवन तो उस नित्य लीला विहारिणी का एक कौतुक है और तुम्हें इस गृहस्थ को इसी रूप में देखना है, इसके मूल में जाकर जब तुम देखोगे तो वहाँ यह भेद दृष्टिगोचर नहीं होता। वहाँ पत्नी, पुत्र मा, आदि का बन्धन नहीं है, वहाँ पर सर्वात्म भाव है, एकात्म भावना का उदय है, तुम्हें इसी मूल भाव से इस गृहस्थ को देखना है।

इससे भी जो कठिन कार्य तुम्हें सौंपा है, वह विश्व में मूल विद्याओं का विकास करना है। जन मानस में इस प्रकार की चेतना जाग्रत करनी है। जिससे कि वह सूक्ष्मता का बोध कर सके। स्थूलता में जो निमग्नता है उससे उन्हें परे हटाकर सूक्ष्मता के दर्शन करना है। यह कार्य मन्त्रों के माध्यम से संभव है, ज्योतिष, तन्त्र, आदि इसी के अंगीभूत हैं, अतः इन सारी विद्याओं को लेखनी के माध्यम से, बाबा के माध्यम से, विचारों और भावनाओं के माध्यम से व्यक्त करना है, और इन लुप्त होती हुई विद्याओं को पुनर्जीवित करना है, जिससे कि इस पृथ्वी तल से इन विद्याओं का लोप न हो जाय।

यह कार्य सन्यास में रहकर संभव नहीं है, यदि गृहस्थ लोगों के बीच कार्य करना है तो गृहस्थ के रूप में रहकर ही संभव है, इसीलिए इस जीवन में तुम्हें गृहस्थ में प्रवेश देने के लिये मुझे वाध्य होना पड़ा है, तुम्हारे मन में यह दृढ़ संकल्प बना रहना चाहिए कि तुम तभी अपने जीवन की पूर्णता का अनुभव कर सकोगे जब तुम इन विद्याओं को पुनः पल्लवित पुष्पित कर सकोगे।

बाबा ! निराश होने का कोई कारण नहीं है। यदि तुम्हारा और मेरा स्थूल देह सम्पर्क नहीं होता है तो आशाहीन होने का क्या कारण है ? क्या तुम मुझे देखते नहीं हो ? क्या तुम मुझसे सम्प्रकृत नहीं हो ? क्या जीवन और आत्मा का परस्पर सम्बन्ध नहीं है ? नित्य इस प्रकार का क्रिया-कलाप होता है फिर यह उद्दिग्नता क्यों है ? जो कुछ कार्य तुम्हें सौंपा है, वह कार्य बिना एक भी क्षण नष्ट किये करते रहना है, और जिस दिन मैं समझूँगा कि तुम्हारा कार्य सम्पन्न हो गया है, उसी क्षण मैं अपने पास तुम्हें बुला लूँगा।

यह तुम्हारे चित्त का विभ्रम है कि तुम मा योगमाया के प्रकाश कणों को

अलग-अलग रूप में देख रहे हो, तुम्हारी पत्नी उम्मी। योगमाया के प्रकाश कण का कृत बिन्दु है, यह आशा कृति के रूप का और उम्मी योगमाया का एक गुण है, जो उसने द्वारा सत्त्वम जीवम के लिए प्रेरित कर ता उम्मी योगमाया की उम्मी का प्रकाश है। यह सब कुछ उम्मी कृत सीनागिहारिणी के कृत में प्रकाश हुआ है, उम्मी सत्त्वम की गरम भेजा इस बात का प्रमाण है कि तुम्हारी जीवम कृत सत्त्वम के लिए रक्त का। यह योगमाया के श्रुतिमान का प्रमाण है, जो कि तुम्हारी पत्नी के माध्यम से प्रकाश हुआ है। मैंने तुम्हें पुनः उम्मी प्रकाश का प्रमाण भेजा जो उम्मी कृत है, जिस प्रकार कण के छिद्र कर मेरे पास आता है, उम्मी इस गृह्य में भी तुम्हें योग के लिए प्रेरित करने हैं, यह भी अपने आप में योगमाया की ही एक कृति है।

जैसे घट में पानी का अन्विष्ट अमल होता है पर घट टूटने पर वह अमल व्यापी आकार में विनीत हो जाता है उम्मी प्रकार तुम्हारा अन्विष्ट अमल होतू ही भी मेरा ही अन्विष्ट कृत है। इसीलिए तुम पत्नी को जाने मतलो हूँ भी आशा कृति के प्रकाश का एक कण अमल कर सकते हो, तुम्हारा गृह्य—गृह्य न होकर उम्मी सीनागिहारिणी का एक कृत है, जो कि सत्त्वम के लिए एक गृह्य का प्रमाण है जबकि मेरे लिये यह एक मुद्र कल्पना, एक अनुकूल भावना और मा जगदम्मा का एक निमित्त प्रकाश बिन्दु है।

तुम्हें अपने प्रयत्नों में प्रती गुरु में योग गृहा है क्योंकि गृह्य के रूप में तुम्हारे पास बहुत ही कम समय बचा है, इसका कारण यह है कि तुम पिछले कई जन्मों से सत्त्वम रूप में रहते हो और इस जीवम का यह रूप भी मायमवत् ही है, यद्यपि इसका बाह्य आवरण गृह्य रूप में दिखाई देता है, इसीलिए तुम्हें जल में रहते हुए भी कमल-पद्म-वत् विवरण करना है। जीवम के प्रत्येक क्षण की मार्गदर्शना तुम्हारे कार्य की पूर्णता है, इसके लिये भूय, प्याय, निद्रा, आदि का योग स्थान नहीं है, जीवन के प्रत्येक क्षण को उस मार्ग में लीन करना है जिस कार्य के लिए तुम्हें भेजा है, और यह भी स्पष्ट है कि तुम्हें शीघ्र ही हमेशा के लिए यावा के पास आना है, जो जीवन के पूर्ण क्षण अपनी चित्त श्रुतियों को उर्ध्वगामी बनने की ओर प्रवृत्त होना है।

तुम्हें नित्य जगत जननी के चिन्तन तथा उनके कार्यों को पूर्णता देना है, शिशु जिस प्रकार मातृ गर्भ में अमृता नाडी के रस से पोषित होता है, उम्मी प्रकार तुम्हें इस जीवन में मा के चिन्तन रस के माध्यम में वृद्धि होना है, इस वृद्धि के साथ चैतन्य शक्ति का अस्तित्व स्वयं प्रकाशमान रहेगा। तुम्हें मा के अलावा और किसी के प्रति नमन नहीं होना है, मानव के सामने दीनता प्रदर्शित करना तुम्हारे लिए अभीष्ट नहीं है, जो किसी वस्तु की अपेक्षा नहीं करता वही धन्य है। मैंने तुम्हें इन ममस्त गुणों का परिमार्जन किया है और मुझे अपने आप पर जितना विश्वास है तुम पर भी उतना ही विश्वास है।

तुम्हारा कार्य विषय में इस प्रकार से युक्त-युक्तियों का चयन करना है, जिनमें इस प्रकार के गुणों के सूक्ष्म कण हो, जिन प्राणियों में तुम्हें मा आद्या शक्ति के स्फुलिंग

दृष्टिगोचर हो, उन्हें इस कार्य के लिये प्रेरित करना है और इसी प्रकार के व्यक्तियों का चयन करना है, उन चयनित दोषों में से जो परिश्रम तथा सर्वात्म भाव समर्पण की कसौटी पर खरे उतरे उन्हीं को शिष्य रूप में स्वीकार करना है। इस स्वीकारोक्ति में पुरुष नारी का भेद नहीं होना चाहिए, तुम्हारे लिए शिष्य शिष्य है, फिर वह पुरुष रूप में हो या नारी रूप में, तुम्हें उनके चित्त को ऊर्ध्वगामी बनाने की ओर प्रेरित करना है और जो देव कार्य तुम्हें सौंपा है उस कार्य में उन्हें निष्णात करना है जिससे कि वे आने वाले जीवन में इस मानवता के प्रकाश स्तम्भ को ले कर आगे बढ़ सकें और मानवता के पथ निर्देशन में सहायक हो सकें।

समय बहुत कम है, काल निरन्तर गतिशील है, और यह गतिशीलता अस्तित्व लीनता की ओर ही प्रवाहित है, इसलिए अपने जीवन में तीव्रता के साथ कार्य करना है और कठोरता के साथ अपने कर्तव्य के प्रति सजग रहना है। शरीर सुख और चित्त सुख की तरफ तुम्हें प्रेरित न होकर अपने जीवन को कठोरतम कसौटी पर कसे रखना है, अपने जीवन के प्रति जितने ही ज्यादा निर्मम हो सकोगे, सफलता उतनी ही निकट होगी।

मेरे चित्त में तुम्हारे प्रति सर्वाधिक स्नेह है, तुम्हें सबसे अधिक कसौटी पर कसा है और यह कहते हुए मेरी आँखों में आह्लाद के कण हैं कि मेरे जीवन का स्वप्न तुम्हारे माध्यम से चरितार्थ होने जा रहा है, इस पृथ्वी पर आसुरी शक्तियों को समाप्त कर देवत्व की स्थापना, तथा स्थूल ज्ञान की अपेक्षा सूक्ष्म ज्ञान मन्त्र, तन्त्र, यन्त्र, ज्योतिष कर्म काण्ड, ज्ञान, वैराग्य, योग, साधना आदि देव विद्या का विकास मेरे जीवन का स्वप्न था, और वह स्वप्न जिस प्रकार से तुम साकार कर रहे हो इससे मेरे हृदय में अत्यधिक आनन्द है और यह आनन्द तुम्हारे लिये आशीर्वाद के रूप में परिणत है।

तुम्हें शीघ्र ही मेरे पास बुलाना है और हमेशा के लिये इस सिद्धाश्रम को तुम्हें सभालना है, पर इससे पूर्व तुम्हारे कार्य की पूर्णता हो जानी आवश्यक है, मुझे तुम पर अगाध विश्वास है और जिस प्रकार से तुम कार्य कर रहे हो, जिस विरोधी वातावरण में अपने अस्तित्व को सुरक्षित रूप से बनाये रख रहे हो, जिस वात्स्याचक्र में अपने आप को अडिग रखे हुए हो उससे मुझे प्रसन्नता है और तुम्हारी सकल्प शक्ति पर आस्था है।

वहूँ को मैं आद्या शक्ति के अश रूप में नमन करता हूँ और तुम्हारे लिये वाचा मंगल कामना करता हूँ।

शुभाशीष,
(सच्चिदानन्द परमहंस)

पंक शिवानन्द ब्रह्मचारी
 स्थान मुक्तेश्वराश्रम
 प्राप्त कर्त्ता डा० नारायणदत्त श्रीमाली

प्रालोक—प्रसिद्ध शिवानन्द ब्रह्मचारी पहले मा भैरवी के चरणों के प्रति अनुरक्त थे, तथा निर्जन वन में एकान्त साधना कर विशिष्ट सिद्धियों के स्वामी बने, गोरखपुर से आगे नेपाल के जंगलों में जब डा० श्रीमाली सन्यास रूप में निखिलेश्वरानन्द के नाम से साधना करते थे, तब उनका सामीप्य प्राप्त हुआ, और शिष्यत्व स्वीकार किया, और साथ में रहकर अति विशिष्ट साधनाएँ सीखी व सिद्धियाँ प्राप्त की।

पर कुछ समय बाद किसी विन्दु पर फटकारे जाने पर शिवानन्दजी अन्यत्र चले गये और कुछ वर्षों तक नेमीक्षारण्य में रहे, पर उनके मन में पश्चात्ताप की आग जलती रही और गुरुदेव श्रीमाली जी से मिलने के लिए छटपटाते रहे। अचानक एक दिन हिन्दी की किसी प्रसिद्ध पत्रिका में निखिलेश्वरानन्द के बारे में प्रकाशित विवरण ध्यान में आया और वर्तमान अता-पता ज्ञात हुआ कि श्रीमाली जी ही निखिलेश्वरानन्द हैं, तो वे भाव-विह्वल हो गये और अपनी भूल स्वीकारते हुए गुरुदेव से क्षमायाचना युक्त पत्र लिखा।

परम श्रद्धेय गुरुदेव।

चरणों में तुच्छ शिवानन्द का नमन स्वीकार करें।

मैं यह पत्र न भेजकर स्वयं ही आपके चरणों में उपस्थित होता, और आपके चरण पकड़ कर तब तक रोता रहता जब तक कि आप मुझे उठाकर मेरे मस्तिष्क पर शीतल हाथ नहीं रख देते, परन्तु मैं अपनी ही भूल पर लज्जित हूँ, पिछले कई वर्षों से मैं पश्चात्ताप की अग्नि में जल रहा हूँ, मेरे जीवन का एक-एक कण बोझिल हो गया है, ऐसा लग रहा है जैसे मैं जीवित नहीं हूँ अपितु जिन्दा लाश ढो रहा हूँ, मेरे जीवन की उमंगें, मेरे जीवन की इच्छाएँ, उसी दिन समाप्त हो गई थी जिस दिन मैं आपसे दूर हो गया था। यह मेरे भाग्य पर नियति का क्रूर व्यंग है कि मैं आप जैसे देवता के चरणों में आकर भी अलग हो गया, मेरे जीवन का यह अभिशाप ही कहा जायगा कि मैं गंगा के पावन तट पर जाकर भी तृप्ति ही रहा, आपसे विछुड़ने के बाद मैं अपने जीवन को जीवन ही नहीं मानता, आप अन्तर्यामी हैं, आपके पास असीम सिद्धियाँ हैं, मानव के मूल कण को पहचानने में आप सक्षम हैं। आप स्वयं मेरे बारे में जान सकते हैं कि आपसे अलग होने के बाद मेरी क्या स्थिति रही है। मेरी आत्मा ने कितना क्रन्दन किया है यह आप भली प्रकार जान सकते हैं, जीवन का एक-एक क्षण मेरे लिये कितना बोझिल रहा है यह आपसे ज्यादा कोई नहीं जान सकता। आप स्वयं मेरे बारे में जान सकते हैं कि आज तक मैं किस प्रकार से अनाथ की तरह भटक रहा

हूँ, आपको पुन प्राप्त करने के लिये मैंने क्या-क्या नहीं किया ? कहा-कहा नहीं गया ? परन्तु यह मेरा दुर्भाग्य था कि मैं चाहते हुए भी आपको पुन प्राप्त नहीं कर सका । यह मेरे जीवन का अभिशाप है, यह मेरे जीवन की सबसे बड़ी दुर्घटना है जबकि मैं आपका आश्रय पाकर भी बिछुड़ गया ।

पर इसमें पूरी तरह झुटि मेरी ही थी, आपने तो मुझ दीन पर तरस खाकर मेरी इच्छा को स्वीकार किया था, मेरे जीवन का कोई भी कोना आपसे अछूता नहीं है, जब मैं आपके पास आया था तब मैं दीन-हीन, निराश्रित और निरूपाय था । यद्यपि बचपन से ही मेरी यह साध थी कि मैं अपना पूरा जीवन साधना में ही व्यतीत करूँ और उच्चस्तरीय साधकों के सान्निध्य में रहकर अपने जीवन को सार्थक करूँ, इसी-लिये जब बचपन में ही मेरे मा-बाप गुजर गये तो मैं घर से भाग खड़ा हुआ और सोलह वर्ष की अवस्था तक भटकता रहा ।

मा भैरवी की मुझ पर कृपा रही कि उसने मुझे रोक लिया और उससे मैंने मा की तरह ही स्नेह पाया । इसमें कोई दो राय नहीं कि मा वास्तव में ही मा थी । उसने स्वयं मेरे लिये परेशानियाँ देखी परन्तु मेरा पालन पुत्र की तरह ही करती रही । यद्यपि मैं सोलह-सत्रह वर्ष का था परन्तु उसने मुझे सोलह-सत्रह महीने से बड़ा माना ही नहीं । उसी प्रकार से हठ करके खिलाती और मेरी सुख-सुविधा का ध्यान रखती, यही नहीं अपितु उसने मुझे उसी प्रकार से सिखाया जिस प्रकार से मा अपने शिष्य को सिखाती है । मा भैरवी तत्र, क्षेत्र में निष्णात थी और उसने मुझे तत्र क्षेत्र में निष्णात बनाने में कोई कसर नहीं रखी । मैंने अपने जीवन में सोच लिया था कि अब मुझे एक आश्रय मिल गया है और मैं इसी क्षेत्र में निष्णात बनूँगा तथा जीवन के बाकी वर्ष तत्र को सर्वोच्चता प्रदान करने में सफल हो सकूँगा । इसके लिये मा भैरवी से सीखता रहा और वह मुझे सिखाती रही । इस प्रकार कुछ कठिन और दुष्कर क्रियाएँ भी उसके द्वारा सीखने को मिली, परन्तु यह मेरा दुर्भाग्य है कि मैं ज्योंही पूर्णता की तरफ बढ़ने का प्रयत्न करता हूँ कि मेरे नीचे का आश्रय समाप्त हो जाता है ।

एक दिन अचानक मा भैरवी बीमार पड़ी और तीसरे दिन उसने मुझे अपने पास बुलाकर कहा बेटा । अचानक मेरा बुलावा आ गया है और मेरा जाना आवश्यक है, जिस स्थान पर मुझे जाना है, उस स्थान के लिये इस चोले को बदलना आवश्यक है, अतः मैं जा रही हूँ पर मेरा आशीर्वाद तेरे साथ है, कि तू इस क्षेत्र में पूर्णता प्राप्त करे ।

मेरे ऊपर तो अचानक वज्रपात-सा हो गया । मैं सोचता ही रह गया कि यह अचानक और अप्रत्याशित रूप से क्या हो रहा है, पर मरते-मरते मा ने इतना ही कहा कि यदि तुझे तत्र में पूर्णता प्राप्त करनी है तो तू स्वामी निखिलेश्वरानन्द के पास जाकर याचना कर । यद्यपि मैंने उनसे आज्ञा प्राप्त कर ली है फिर भी वे मेरे आराध्य हैं अतः इतना ही कह सकती हूँ कि यदि शिष्य भाव अपने मन में रखा तो पूर्णता वही से प्राप्त हो सकेगी । तत्र क्षेत्र में तू जिस स्तर पर है, उससे आगे का ज्ञान

और कहीं पर से तुझे नहीं मिल सकेगा, इसके लिये तुम्हें वही पर जाना होगा और आगे के जीवन में वही तुझे पूर्णता दे सकेंगे—और कहते-कहते मा भैरवी ने अपने प्राणों को पचभूत में विसर्जित कर दिया ।

एक बार फिर मैं अनाथ हो गया था । मेरे मन में जो उत्साह था वह समाप्त हो गया, मेरी अवस्था विक्षिप्त की तरह हो गई थी और ऐसी ही विक्षिप्त अवस्था में मैं आपके चरणों में पहुँचा था ।

मुझे वह घटना और वह दृश्य आज भी भली प्रकार से स्मरण है जब मैं आपके पास पहुँचा था । आप निर्जन जंगल में छोटी-सी कुटिया में साधना रत थे । मैं दो दिन और दो रात आपके चरणों के पास पड़ा रहा, पर न तो आपकी समाधि खुली और न मैं सान्त्वना पा सका ।

दूसरे दिन शाम को वहाँ पर अचानक एक साधु प्रकट हुआ पर उसने मुझे सकेत में चुप रहने को कहा । मैं उस घनघोर जंगल में अचानक उस आगत साधु को देखकर आश्चर्यचकित था पर मैं उसके सकेत करने पर चुप रहा । वह आपके सामने तीन घंटे तक बैठा रहा और उसके होठ हिलते रहे, सम्भवतः वह आपसे आज्ञा प्राप्त करने के लिए आया था या अपनी बात कहने के लिये आया था । मैं यह देख रहा था कि आप दोनों के बीच मौन वार्तालाप चल रहा है ।

यह तो मुझे बहुत बाद में पता चला कि वे आपके ही शिष्य आज के प्रसिद्ध अवधूत बाबा थे ।

तीसरे दिन जब आपकी समाधि खुली और मुझे देखा तो आपके चेहरे पर मुस्कराहट खेल गई । और बोले—शिवानन्द ! मा भैरवी चली गई ?

मैंने सारी बात आपको बता दी और आप चिन्तन में डूबे रहे, मेरी बात समाप्त होने पर आपके मुँह से निकला था कि मा भैरवी को जाना था, वहाँ पर उनका जाना आवश्यक है, पर तुझे यहाँ भेजा है तो चिन्ता मत कर और जीवन में जो कुछ अपूर्णता रह गई है उसे पूर्ण कर ।

जिस प्रकार भरुस्थल में जलते हुए प्राणी को सुखद छाया मिलने पर आनन्द की अनुभूति होती है, ठीक वैसी ही अनुभूति आपको पाकर हुई । जिस प्रकार प्यास से वेचैन प्राणी को गंगा का किनारा अचानक मिल जाय और उसे जिस प्रकार से प्रसन्नता होती है वैसी ही प्रसन्नता आपका सान्निध्य पाकर मुझे प्राप्त हुई थी, मैं अपने आपको ससार का सबसे सौभाग्यशाली समझने लगा था ।

पर मैं स्वयं हतभागी हूँ, मैंने जो कुछ मा भैरवी से प्राप्त किया था उसमें काफी कुछ पूर्णता आपके सान्निध्य से प्राप्त हुई थी । एक वर्ष में आपने जो कुछ मुझे दिया था वह अपने आपमें अन्यतम था । थोड़े में समय में आपने मुझे जिस तीव्रता से तन्त्र के पथ पर आगे बढ़ाया था वह मेरे लिये आश्चर्यजनक था । यह मेरा सौभाग्य था कि मैं आपके चरणों का आश्रय पा सका था और आपके द्वारा ज्ञान प्राप्त करने में

सफल हो सका था, पर यह मेरा भाग्य नहीं, मा भैरवी की भमता का प्रभाव था कि आपने मुझे स्वीकार किया था ।

पर मैं थोड़ा-सा पाकर भी अपने आपको काफी ऊँचा समझने लगा था, आज मैं यह अनुभव करता हूँ कि मुझ में अहं की प्रवृत्ति आ गई थी, तब क्षेत्र में अपने आपको निष्णात समझने लगा था । और मैं यह अनुभव करने लगा था कि मेरे पास इस प्रकार की विशिष्ट सिद्धियाँ हैं जिनके माध्यम से मैं असम्भव को भी सम्भव कर सकता हूँ । यह भावना धीरे-धीरे मुझ में बढ़ती गई और मैं आपके अन्य शिष्यों से अपने आपको ऊँचा समझने लग गया था ।

ऐसा होने पर मुझ में अहं की भावना बढ़ती ही गई । मैं कई बार अपने ही गुरु भाइयों से उलझने लग गया, फिर भी वे शान्त रहे, आप यह सब कुछ देख रहे थे, मेरे परिवर्तित व्यवहार को अनुभव कर रहे थे, फिर भी आप शान्त बने रहे, और मैं अहं के आवेग में आपके उस शान्त रूप को अपने कार्य की, और अपने अहं की स्वीकारोक्ति ही समझता रहा । आज मैं यह अनुभव कर रहा हूँ कि मैं कितना बड़ा नराधम हूँ जिसने गुरु के सामने अहं का प्रश्रय दिया था ।

और इसी दुर्वृद्धि ने एक दिन आपकी आज्ञा की अवज्ञा कर दी । आज मैं पश्चात्ताप की अग्नि में जल रहा हूँ कि मैंने एक देव-पुरुष के सामने कितनी निम्नता प्रदर्शित की थी, फिर भी आप शान्त बने रहे, पर यही श्रुति जब दूसरी बार हुई तो आपने मुझे फटकार दिया । शिष्यों के बीच इस प्रकार की फटकार से मेरे 'अहं' को चोट लगी । आपने तो मेरे अहं पर इसलिये चोट की थी कि जिससे मैं मानव बना रहूँ सकूँ । पर उस समय मेरी आँखों पर अहं की पट्टी बधी हुई थी । तब और विशिष्ट तब मुझे ज्ञात थे तथा तारा साधना करने के बाद तो मैं अपने आपको बहुत कुछ समझने लगा था, इसीलिए आपकी फटकार मेरे लिये असह्य हो गयी और मैंने क्षमा याचना के स्थान पर आपके सामने खड़ा होकर जिन शब्दों का प्रयोग किया वे शब्द ही मेरी मृत्यु बन गये ।

मुझे स्मरण है कि आप उन शब्दों को सुनकर क्रोध से भर गये थे और तीव्र शब्दों में मुझे निकल जाना को कहा, साथ ही यह भी सुनाई दिया कि तू जिस विद्या पर उछल रहा है वह सारी विद्या अगले छ महीनों में विस्मृत हो जायगी ।

पर, यह मेरा दुर्भाग्य था कि मैं उस समय भी अपने आपको जस्तरत से ज्यादा समझता रहा । मुझ में महाविद्या साधना के बाद यह अहं था कि कोई मेरा कुछ भी नहीं बिगाड़ सकता । किसी कोने में छिपी हुई यह भावना भी थी कि मुझे भी इतना ऊँचा गुरु बनना है जितना और कोई नहीं हो, और दुर्भाग्य ने मेरे अन्तर में यही कहा कि तेरा कुछ भी नहीं बिगाड़ सकता । जो विद्याएँ तेरे पास हैं वे मा भैरवी की दी हुई हैं, इसलिये उन विद्याओं का लोप सम्भव नहीं । मेरे मन में अपने स्वयं का आश्रय बनाने का कुत्सित विचार भी था अतः मैंने उसी दिन आपके आश्रय को छोड़ दिया ।

पर बाबा ! यह मेरी जीवन की सबसे बड़ी भूल थी । मैं यह सारी बात इस

लिये लिखना चाहता हूँ जिससे कि मेरे दिल पर जो बोझ है वह मैं उतार सकूँ। पिछले १५ वर्षों में मैं इस बोझ को अपने पर लाद कर फिर रहा हूँ। आपसे मैं आज सारी बात खुलकर कह देना चाहता हूँ, यद्यपि मेरा पत्र लम्बा हो गया है, मैं अपने विचारों को सुनियोजित ढंग से व्यक्त नहीं कर पा रहा हूँ, परन्तु फिर भी मैं अपनी बात आपके सामने रख देना चाहता हूँ।

आपके यहाँ से जाने के बाद मैं गोरखपुर के पास रुक गया और गोरखनाथ के मन्दिर से कुछ समय के लिये सम्बन्धित रहा, परन्तु जिस अहं के वशीभूत होकर आप से अलग हुआ था वे सारी विद्याएँ छ महीने के बाद लुप्त हो गईं। मैं उसके बाद चाहते हुए भी कुछ नहीं कर पाया। यद्यपि मुझे वे सारे मन्त्र याद थे, सम्बन्धित क्रियाएँ ज्ञात थीं। मैंने उन क्रियाओं के माध्यम से पुनः सिद्धि प्राप्त करनी चाही पर प्रयत्न करने पर भी मैं उन सिद्धियों को पुनः प्राप्त नहीं कर सका और एक बार मैं पुनः एक साधारण कोट बन गया।

उस दिन पहली बार मैंने अनुभव किया कि मैंने अपने जीवन में कितनी बड़ी भारी त्रुटि कर दी है। मैंने जीवन में जो कुछ प्राप्त किया था वह भी खो चुका हूँ जो मेरा लक्ष्य था वह तो दूर, अपितु जो कुछ मेरे पास था वह भी समाप्त हो गया है, आपका श्राप मेरे जीवन के पीछे था और मैं बहवास-सा झूझ-झूझ भटक रहा था।

जैसे-तैसे करके मैंने छ महीने बिताये, पर जब मैं अपने आप में नहीं रह सका तो मैं पुनः उसी स्थान पर पहुँचा जहाँ आप मुझे मिले थे, परन्तु वहाँ जाने पर मुझे कुछ भी प्राप्त नहीं हो सका, आपने वह स्थान छोड़ दिया था।

उसके बाद मेरा खाना-पीना सब कुछ छूट गया, मेरी आँखों की नींद उड़ गई, जीवन का मोह समाप्त हो गया और आत्महत्या करने का पक्का निश्चय कर लिया, मेरा मन बार-बार मुझे फटकार रहा था कि तूने इतने बड़े आश्रयदाता की अवज्ञा कर दी, तू जिस आधार पर खड़ा था उसी आधार को अपने हाथों से तोड़ दिया, आपके लिये जो शब्द मैंने प्रयोग किये थे उस शब्द का एक-एक अक्षर मेरे सीने पर हथौड़े मारता रहा और मैं पश्चात्ताप की अग्नि में बराबर जलता रहा।

उसके बाद मैंने आपकी खोज में पूरा नेपाल छान मारा, गोरखपुर के आस-पास का पूरा स्थान देख लिया, हिमालय के प्रत्येक उस स्थान को देखा जहाँ पर आप से मिलने की संभावना थी, पर जहाँ-जहाँ भी मैं गया आपका श्राप अभिशाप की तरह मेरे जीवन के पीछे लगा रहा, मुझे कहीं पर भी शरण नहीं मिली, कहीं पर भी आप के बारे में समाचार नहीं मिले, कहीं पर भी आपको न पा सका।

पिछले पन्द्रह वर्षों में हिमालय के एक-एक स्थान को देख लिया है, प्रत्येक साधु और सन्यासी से आपके बारे में ज्ञात करता रहा, परन्तु कहीं से भी अनुकूल समाचार प्राप्त नहीं हुए, इन वर्षों में मेरा पूरा शरीर जर्जर हो गया, आँखें अन्दर धस गईं, चेहरे की कान्ति समाप्त हो गई और मुझ में इतनी भी शक्ति नहीं रही कि मैं अपने आपको सम्भाल सकूँ, अपने आपको जीवित रख सकूँ।

पर भरना मेरे हाथ मे नहीं था, जब तक आप मुझे नहीं मिलते, जब तक आपके चरणों मे पड़कर मे क्षमा याचना नहीं कर लेता, जब तक मैं आपके पैरों को आसुओं से भिगो नहीं लेता तब तक भर कर भी मुझे चैन नहीं मिलता, मेरी सारी इच्छाएँ एक ही बिन्दु पर केन्द्रित थी कि आपको प्राप्त करना है, किसी भी स्थिति में आपसे मिलना है और अपनी भूल का प्रायश्चित्त करना है।

क्योंकि मैं यह भली भाँति समझ गया था कि जब तक आपका श्राप समाप्त नहीं होगा, जब तक आपकी कृपा मेरे ऊपर पुन नहीं होगी तब तक मैं कुछ भी प्राप्त नहीं कर सकूँगा। मैं जिस साधक के पास भी गया वहीं से मुझे फटकार मिली, जिस अधोरी या तांत्रिक का साहचर्य प्राप्त करना चाहा वहीं से मुझे दुत्कार मिली, जिससे भी मैं मिला वहीं मुझे उपेक्षा और अनादर मिला, क्योंकि आपका श्राप मेरे जीवन के पीछे है और जब तक आप उस श्राप को वापस नहीं ले लेंगे तब तक मैं अपने जीवन मे कुछ भी नहीं कर सकूँगा।

आज मैं समझ गया कि जीवन की समस्त साधनाओं से भी ऊपर गुरु की कृपा होती है, जब तक गुरु का वरद हस्त सिर पर होता है तभी तक विद्याएँ फलवती होती हैं। जिस दिन गुरु अपना हाथ सिर से हटा लेते हैं, उस दिन से साधक का पतन होने लग जाता है। मेरे अह ने मुझे वरवाद कर दिया, आपकी अवज्ञा मेरे पूरे जीवन को लील गई, और मैं साधारण मानव से भी गया बीता होकर आज दर-दर भटक रहा हूँ।

मेरी इतनी हिम्मत नहीं है कि मैं आपके सामने आ सकूँ। मैं आपके क्रोध से परिचित हूँ, यद्यपि आप दया मूर्ति हैं, आपके जीवन मे मेरे जैसे सैकड़ों नराधम आए होंगे, उन पर अवश्य आपकी कृपा हुई होगी, मैं जीवन मे अभाग्य हूँ इसलिए चाह कर भी मैं आपकी कृपा नहीं पा सका।

पिछले दिनो हिन्दी के एक प्रसिद्ध पत्र मे आपके बारे मे बहुत कुछ पढ़ने को मिला, तब सारी स्थिति मेरे सामने स्पष्ट हो गई। वे सारी घटनाएँ मेरी आँखों के सामने फँल गईं जो मैंने देखी थी। वहीं से आपका पता मिला, और जब चित्र देखा तो रहा सहा सदेह भी जाता रहा।

यदि साधना का स्मरण रहता तो मैं साधना के माध्यम से आपके जीवन के बारे मे जानकर आपके चरणों मे आ गिरता, परन्तु आपने तो मेरी सारी विद्याएँ विस्मरण कर दी हैं, मैं प्रयत्न करता हूँ फिर भी मुझे स्मरण नहीं रहता। जो कुछ भुलें याद था वह भी मैं भूल चुका हूँ।

एक बार जब आपका पता मुझे लगा तो मैंने निश्चय किया कि मैं सीधा आपके चरणों मे पहुँच जाऊँ और मुझसे जो भयकर वृत्ति हो गई उसके लिए क्षमा याचना करूँ। इतना होने पर भी यदि आप मुझे ठुकरा देंगे तब भी मैं निश्चित रहूँगा, क्योंकि आपसे ठुकराया हुआ कहलाऊँगा, क्या यह कम गौरव की बात है।

मैं आपके क्रोध से परिचित नहीं था, मैंने आपका करुणा और दया का रूप

देखा था, आपका स्नेह मेरा अवलम्ब रहा था, आपके सान्निध्य में जो कुछ मुझे प्राप्त हुआ था वह मेरे लिए स्वर्णिम था, आपका पुत्रवत् स्नेह मुझे मिला था। आपने जितना स्नेह इस तुच्छ कीट को दिया था वह वास्तव में ही मेरी अमूल्य निधि थी। मैं बराबर ऋटिया करता जा रहा था और आपकी करुणा बराबर उसको अनदेखी कर रही थी, आपने जो कुछ मुझे दिया वह मेरे लिए अन्यतम रहा। मैंने आप में पिता का प्रेम, मा की करुणा, बड़े भाई का स्नेह और गुरु का आशीर्वाद अनुभव किया, मैंने कई रूपों में आपके दर्शन किये हैं और प्रत्येक रूप करुणा तथा दया से ओत-प्रोत रहा है।

यह मेरे जीवन की विडम्बना थी कि मैं हिमालय के पास जाकर भी शान्ति नहीं पा सका, आपकी दया रूपी गंगा के किनारे बैठकर भी तृप्त नहीं हो सका, आप की शीतल छाया प्राप्त होने पर भी मैं उससे वंचित हो गया, यह मेरे जीवन का कितना बड़ा दुर्भाग्य था कि आप जैसे परम श्रेष्ठ गुरु को पाकर भी मैं अनाथ ही बना रहा।

पर यह मेरी गलती थी, मैं अनाथ हूँ, दरिद्री हूँ, निर्धन और कमजोर हूँ, परन्तु जो कुछ भी हूँ केवल मात्र आपका हूँ। आप मेरे लिए एक क्षण व्यतीत करें और साधना से देखें कि पिछले पन्द्रह वर्ष मैंने किस प्रकार बिताए हैं, मेरी प्रत्येक सास के साथ आपका नाम रहा है, मेरे जीवन के प्रत्येक क्षण में आपका स्मरण रहा है, मेरे शरीर के रोम-रोम से आपके नाम की ध्वनि निकलती रही है, और पिछले पन्द्रह वर्षों में मैं प्रत्येक क्षण पश्चात्ताप की अग्नि में जलता रहा हूँ।

मैं इस पत्र के द्वारा दया की भीख मागता हूँ, मैं कुछ भी नहीं हूँ, मुझसे जो कुछ ऋति हुई है, उसके लिए पूरे जीवन भर के लिए क्षमाप्रार्थी हूँ, जब तक आपका करुण-पत्र प्राप्त नहीं होगा तब तक मैं कुछ भी नहीं कर सकूँगा। मैं आपके सामने हर क्षण रहा हूँ पर मैं अपने आप में इतनी हिम्मत नहीं जुटा पा रहा हूँ कि बिना आपकी आज्ञा के आपके चरणों में आ सकूँ, क्योंकि मैं अपराधी हूँ और अपराधी को किसी भी प्रकार की रियायत प्राप्त नहीं होती।

परमात्मा से विमुख होकर तो व्यक्ति शायद जीवित रह भी सकता है, पर गुरु से विमुख होकर उसे तिल-तिल कर जलना ही पड़ता है, उसके जीवन की ओर कोई गति-मति नहीं होती।

मैं शरीर के रोम-रोम के द्वारा आपसे क्षमा-याचना करता हूँ, मेरी आँखें अतृप्त हैं, मेरा हृदय वेदना ग्रस्त है। मेरा सारा शरीर पश्चात्ताप की अग्नि में जल रहा है, और जीवन का प्रत्येक क्षण अभिशपण से ग्रस्त है, मैं इस पत्र के द्वारा अपने आपको आपके सामने समर्पित करता हूँ, मुझे विश्वास है कि आप इस अकिंचन को दया की भीख देंगे जिससे कि आपके चरणों में उपस्थित होकर क्षमा-याचना कर सकूँ और जीवन का, प्रायश्चित्त कर सकूँ।

अग्रभाष्य,
(शिवानन्द ब्रह्मचारी)

साधनाएँ और सिद्धियाँ

बगलामुखी-साधना

पूज्य पण्डितजी,

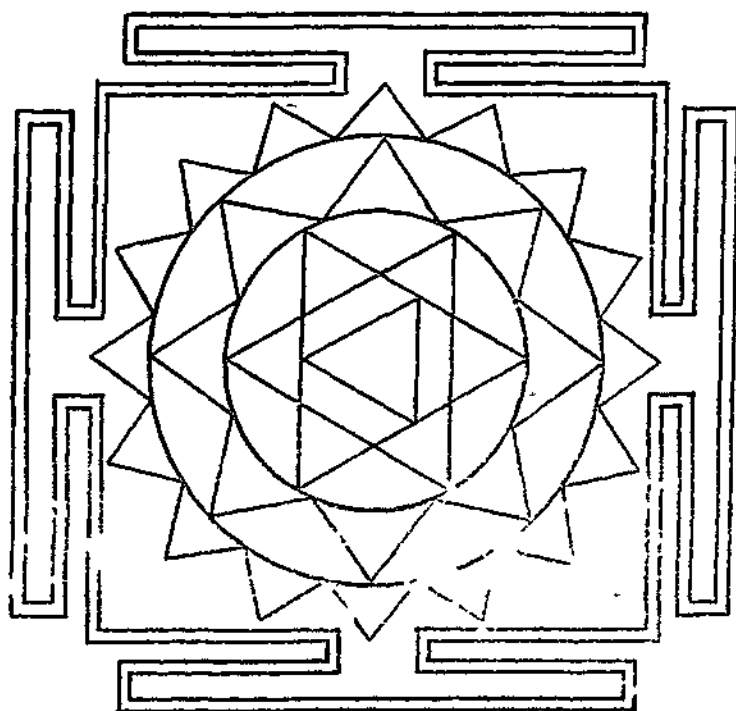
सादर चरण स्पर्श ।

मैं आपका ऋणी हूँ कि आपने अपना वरदहस्त मेरे सिर पर रखा, मैं आपके घर आने से पहले पूरी तरह से निराश हो चुका था और निराशा की उस सीमा तक पहुँच चुका था जिसके आगे कोई रास्ता नहीं होता, यद्यपि मैं आश्वस्त था कि आपने मुझे आज से तीन वर्ष पूर्व शिष्य रूप में स्वीकार किया था, और मुझे दीक्षा भी दी थी, परन्तु उसके बाद आपकी आज्ञा से मैं अपने घर आकर गृहस्थ के कार्यों में लग्न गया था । उस दिन से अब तक मैंने लगभग साठ से ज्यादा पत्र आपको दिये होंगे, परन्तु आपने जब एक भी पत्र का जबाब नहीं दिया तो मैं पूरी तरह से उन्नत गया । मैं समझ नहीं पा रहा था कि मुझे से क्या गलती हो गई है जिससे कि मैं आपके चरणों तक पहुँच नहीं पा रहा हूँ ? मुझे यह गौरव था कि मैं आपका शिष्य हूँ और यह मैंने अधिकार समझ रखा था कि जब भी आपकी याद मुझे बेचैन करे तब मैं आपके पास आ जाऊँ, परन्तु पहली बार जब आपका पत्र मुझे मिला था तो उसमें आपने लिखा था कि स्वीकृति मिलने पर ही यहाँ पर आना, अतः मैं मन मसोस कर रह गया और उस दिन की प्रतीक्षा करने लगा जिस दिन आपकी तरफ से स्वीकृति-पत्र मिले, और इसी बेचैनी में मैं हर हफ्ते दो हफ्तों में एक पत्र लिखता रहा, मेरे अधिकांश पत्रों में एक ही याचना रहती थी कि मैं आपके पास आना चाहता हूँ और आपकी कृपा का प्रसाद प्राप्त करना चाहता हूँ, परन्तु मुझे उन पत्रों के उत्तर नहीं मिलते और मैं ज्यादा-से-ज्यादा निराशा में डूबता जाता । आपको पत्र लिखने के बाद उत्तर की बेचैनी बढ़ जाती, और जब आपका पत्र नहीं मिलता तो निराश होकर डरते-डरते फिर एक पत्र लिख देता । डर इस बात का रहता कि कहीं आप नाराज न हो जाएँ, पर जब आपका उत्तर नहीं मिलता तब मेरी स्थिति ठीक वैसी ही हो जाती जैसी कि मछली को पानी से निकालकर जमीन पर डालने से होती है ।

मैं यह मन में सोच चुका था कि मैं आपके द्वारा भुला दिया गया हूँ, मैंने यह भी सोचा कि शायद मैं अपात्र हूँ, इसीलिए उनके चरणों में जा नहीं पा रहा हूँ, कभी सोचता कि शायद इसी प्रकार घुट-घुट कर मर जाना पड़ेगा, यद्यपि मेरे घर में पत्नी

है, बच्चा है, अच्छी नौकरी है, परन्तु फिर भी मुझे सन्तोष नहीं मिलता, मन में एक अभाव-सा अनुभव होता रहता । और जब साठ से ज्यादा पत्र आपको दे चुका और इतना होने पर भी जब आपकी तरफ से एक भी पत्र का उत्तर नहीं मिलता तो मैं पूरी तरह से निराश हो गया और मैंने अपने कर्मों का दोष समझ कर यह धारणा बना ली कि अब गुरुजी का कोई पत्र प्राप्त नहीं हो सकेगा ।

जिस दिन पूरी तरह से टूट चुका था उसके दूसरे दिन ही आपका कृपा पत्र मिला कि शीघ्र आ जाओ, तुम्हें विशेष अनुष्ठान कराना है । मुझे कुछ ऐसा लगा जैसे मरुस्थल में प्यास से तड़फते हुए प्राणी को जल की बूँदें मिल जाय, उस दिन मैं कितना प्रसन्न हुआ था, व्यक्त नहीं कर सकता, तीन साल की बेचैनी और निराशा एक ही क्षण में दूर हो गई थी और मैं उसी दिन आपके चरणों में उपस्थित होने के लिए चल पड़ा था ।



भगवती श्रीमता का पूजन-मंत्र

पहली बार आपके चरणों में जी भर कर बैठने का मौका मिला और इससे भी ज्यादा सौभाग्य मेरा यह रहा कि आपने मुझे अपने ही घर में ठहरने की स्वीकृति दी, लगभग पन्द्रह दिन आपके घर पर रहा । सब मानें पिछले बालीस वर्षों में भी मुझे

इतना अधिक आनन्द और स्वर्गिक सुख की अनुभूति नहीं हुई थी जितनी आनन्दानुभूति आपके घर में पन्द्रह दिनों में हुई थी ।

आपने मुझे 'बगलामुखी साधना' सीखने की आज्ञा दी और उन पन्द्रह दिनों में आपने इस साधना के बारे में जो समझाया वह मेरे चित्त पर अंकित हो गया । मैंने यही निश्चय किया था कि आपके ही घर में रहकर इस साधना को सम्पन्न करूँ, परन्तु आपकी आज्ञा थी कि मैं वापस अपने घर चला जाऊँ और घर में ही इस साधना को सम्पन्न करूँ ! आपकी आज्ञा मेरे जीवन का सर्वोच्च धर्म है, अतः मैं आपका आशीर्वाद प्राप्त कर अपने घर लौट आया ।

घर आकर मैंने इस साधना को सम्पन्न करने का निश्चय किया । आपने आदेश दिया था कि किसी भी महीने की कृष्ण पक्ष की चतुर्दशी को इस अनुष्ठान का प्रारम्भ करना चाहिए, अतः मैंने माघ कृष्ण चतुर्दशी को यह साधना प्रारम्भ की । इस अवधि में जो कुछ अनुभूति हुई है वह मैं आपके चरणों में निवेदन कर रहा हूँ

साधना या अनुष्ठान प्रारम्भ करने से पूर्व मैंने अपने घर के एक कक्ष को पूरी तरह से खाली कर दिया, मेरे घर में मात्र तीन कमरे ही हैं, अतः सारा सामान मैंने दो कमरों में व्यवस्थित कर तीसरा कमरा साधना के लिए चुना, और उसे पीले रंग से पुतवा दिया, कमरे की छत और नीचे का फर्श भी पीले रंग से रंगवा दिया था, इसके अलावा दरवाजे पर पीले रंग का पर्दा डाल दिया था ।

आपने बताया था कि रात्रि को दस बजे यह अनुष्ठान प्रारम्भ होना चाहिए, और सुबह ५ बजे तक यह अनुष्ठान चलना चाहिए, इसके अलावा १० बजे से पूर्व कुएं के जल से स्नान करना चाहिए । इस प्रकार का जल मैं पहले से ही लाकर अपने घर में रख देता था, जिस कलश में यह जल लाता था वह पूरी तरह से मजा हुआ शुद्ध होता था, मैंने साधना के लिए पीले रंग की धोती पहनने के लिए और पीले रंग की ही धोती ओढ़ने के लिए रख दी थी । जो आसन मैंने बिछाया था वह भी पूरी तरह से पीले रंग से रंगा हुआ था, आसन के सामने लकड़ी का एक तख्ता रख दिया था जिस पर पीले रंग का कपड़ा पहले से ही बिछा दिया था, और पीले रंग से रंगे हुए चावलों से तख्ते पर मैंने बगलामुखी यन्त्र बना दिया था, और उस यन्त्र पर बगलामुखी चित्र काच के फ्रेम में मढ़वा कर रख दिया था । यह चित्र आपके द्वारा ही प्राप्त हुआ था ।

आपने बताया था कि बिल्कुल निर्वस्त्र होकर मुझे स्नान करना है, अतः मैंने इस प्रकार स्नान कर धोती पहन ली थी और दूसरी धोती ओढ़ ली थी, उसके बाद मैं आसन पर आकर बैठ गया था, मेरा मुह दक्षिण की ओर था ।

तख्ते पर पीले रंग से रंगा हुआ जो मिट्टी का दीपक था उसमें गाय का घी भरा हुआ था, और पीले रंग से रंगी हुई रूई की वाट बनाकर रख दी थी । आसन पर बैठने के बाद मैंने उस दीपक को जलाया, साथ ही दीपक को बगलामुखी यन्त्र के बीच में रख दिया, दीपक के और तस्वीर के बीच में मैंने पीले रंग के पुष्प बिखेर दिए थे,

और गन्धक की सात ढेरिया बना दी थी, प्रत्येक ढेरी पर दो-दो लोग भी रख दिए थे ।

तब्ले पर ही एक पीले रंग से रंगा हुआ पीतल का लोटा रख दिया था और उसमें पीले रंग का जल भर दिया था, आसन पर बैठकर मैंने आचमन प्राणायाम किया और फिर हाथ में जल तथा कनेर के पुष्प लेकर सकल्प किया कि मेरे ऊपर जो मुकदमे हैं वे समाप्त हो जाय, मैं उन सभी मुकदमों में विजयी रहूँ, शत्रुओं पर मैं पूर्ण रूप से हावी बनूँ, शास्त्रार्थ में या बातचीत में सामने वाले व्यक्ति का मुह कीलन हो जाय जिससे कि बातचीत में मैं सफलता प्राप्त कर सकूँ और अपने अनुरूप कार्य सफल हो सके ।



बगलामुखी देवी

सकल्प के बाद मैंने निम्नलिखित विनियोग किया

'ओम अस्या श्री ब्रह्मास्त्र-विद्या-बगला मुख्य नारद ऋषये नम शिरसि । त्रिष्टुप छन्द से नमो मुखे । श्री बगला मुखीदेवताये नमो हृदये । ह्री वीजाय नमो गुह्ये । शक्तये नम पादयो । ओम कीलकाय नम सवागे । श्री बगलामुखी देवता प्रसाद सिद्ध्यर्थ जपे विनियोग ।'

विनियोग के बाद मैंने श्रद्धा से बगलामुखी का निम्न ध्यान किया

मध्ये सुधन्वि मणि मडप रत्न वेदी सिंहासनो परिणताम्परि पीत वर्णम् ।

पीताम्बरा मरण मात्य विभूषतागीन्देवीन्ममामि घृत मुद्गर वैरि जिह्वाम् ॥

जिह्वाय मादाय करेण देवी वामेन शत्रून्परिपी ड्यन्तीम् ।

गदाभिषातेन न दक्षिणेन पीताम्बराद्या द्विभुजान्ममामि ॥

ध्यान करते समय मेरी आखें बगलामुखी देवी के चेहरे पर टिकी हुई थी । उसके बाद मैंने बगलामुखी मंत्र जप प्रारम्भ किया । आपने बताया था कि इसके लिए सूखी हुई हल्दी की माला का प्रयोग ही होता है, अतः मैंने १०८ हल्दी के टुकड़े ले उसकी माला बनाकर पहले से ही रख दी थी ।

आपने मुझे नित्य १०१ माला फेरने की आज्ञा दी थी, अतः मैंने नित्य १०१ मालाएँ निम्न मंत्र की फेरी

'ओम् ह्रीं बगलामुखि सव्व दुष्टानां वाचम्ममुख

स्तम्भय जिह्वा कीलय कीलम बुद्धिनाशय ह्रीं ओम स्वाहा ॥

आपने मुझे यह भी बताया था कि मैं नित्य नियमपूर्वक इस अनुष्ठान को करूँ और दिन में केवल दूध का सेवन ही करूँ । इसके अलावा अन्न आदि न लूँ, अतः मैंने दिन में दो तीन बार दूध अवश्य पिया, अन्न नहीं लिया था, साथ-ही-साथ आपने यह अनुष्ठान तेरह दिन का बताया था, अतः इन तेरह दिनों में मैंने नौकरी से सबधित था गृहस्थ से सबधित कोई कार्य नहीं किया और पूर्ण रूप से ब्रह्मचर्य का भी पालन किया ।

मैं नित्य इसी प्रकार से कार्य करता हुआ साधना कर रहा था, साधना प्रारम्भ करने के सातवें दिन मुझे विचित्र अनुभूति हुई, जैसे मेरे कमरे में कोई महिला खड़ी है और जोरों से हँस रही है, उसकी हँसी वीक्ष्य और डरावनी थी, इसके साथ-ही-साथ उसकी चूड़ियों की आवाज भी मन में भय का संचार कर रही थी ।

मैं बिना उसकी तरफ देखे देवी के चित्र के सामने नजर टिकाए मंत्र का पाठ करता रहा, परन्तु ऐसा आभास बराबर रहा कि वह स्त्री कमरे में ही खड़ी है और एकटक मुझे घूर रही है ।

इसके बाद दो दिन शान्ति से जीते, परन्तु दसवें दिन जब मैं रात्रि को साधना में बैठा तो ठीक बराबर वजे एक भयावनी स्त्री मेरे पास आ बैठ गई । उसका वाया घुटना मेरी दाहिनी जाँघ को दबा रहा था, मैंने मंत्र पढ़ते-पढ़ते ही डरकर दाहिनी ओर देखा तो मेरे रोगटे खड़े हो गए । वह स्त्री ठीक वैसी ही थी जैसी कि बाली देवी

की कल्पना पढी है या सुनी है, लम्बे लम्बे बाल, डरावनी-सी आँखें, पूरे शरीर की हड्डियाँ निकली हुई, दुबली पतली, आँखें अन्दर को घसी हुई, तथा शरीर पर विचित्र प्रकार की हड्डियों की माला पहनी हुई अत्यन्त ही डरावनी और भयानक लग रही थी, उसके एक हाथ में खप्पर था और खप्पर में ताजा मानव रक्त भरा हुआ था जिसे वह धीरे-धीरे पी रही थी ।

एक बार तो मेरी सास ऊपर की ऊपर रह गई और मेरी जबान तालू से चिपक गई । बड़ी कठिनाई से मैं मंत्र का उच्चारण कर पाया, इस प्रकार वह लगभग एक घंटे तक बैठी रही, पर इसके बाद मैंने उसकी तरफ ताका भी नहीं, रात्रि के लगभग तीन बजे उसने बायें हाथ से मेरे केश भुट्टी में पकड़े और जोरो से झकझोर दिए । मेरी आँखों के सामने अघेरा-सा छा गया, एक क्षण के लिए तो ऐसा लगा जैसे मेरी सास निकल गई हो, पूरे कमरे में मरे हुए जानवर से निकली हुई बदबू भर गई । मेरी आँख खुली तब वह काली जा चुकी थी । उसके बाद की रात्रि मैंने भय के साथ ही व्यतीत की, परन्तु मैंने १०१ मालाएँ पूरी कर ली थी ।

ग्यारहवें दिन कोई विशेष घटना नहीं घटित हुई । यद्यपि यह एहसास बराबर बना रहा कि वह कमरे में उपस्थित है, और उसकी तीक्ष्ण आँखें मुझे भेद रही हैं । मैंने उस दिन इधर-उधर ताका ही नहीं और अपनी आँखें बगलामुखी देवी के चित्र पर टिकाए रखी । उस रात्रि को ऐसा अनुभव हुआ जैसे कि तस्वीर में बगलामुखी देवी के स्थान पर बड़ी भयावनी स्त्री हो । उस चित्र को देखकर भी मन में भय का संचार होता था ।

बारहवें दिन जब मैं साधना के लिए आसन पर बैठा तो बैठते ही मेरे सीने पर जोरो की लात लगी और मैं आसन से पीछे की ओर लुढ़क गया, तुरन्त ही मैं अपने आपको सयत कर पुनः आसन पर बैठा तो दूसरी बार भी जोरो की लात लगी और मेरी आँखों के सामने अघेरा-सा छा गया । मैं पुनः उठकर आसन पर बैठ गया पर लातों के प्रहार से मेरे सीने में जोरो का दर्द हो रहा था ।

इसके बाद लगभग बारह बजे वही स्त्री कक्ष में दिखायी दी और मेरे सामने आकर बैठ गई, लगभग पन्द्रह मिनट तक वह मुझे घूरती रही, उसके बाद उसने झपट कर मेरे हाथों से माला छीन ली और मेरे गाल पर इतने जोर का तमाचा मारा कि आँखों के सामने अघेरा-सा छा गया और मैं लगभग सज्ञा शून्य-सा हो गया । ऐसी स्थिति पाँच या सात मिनट तक रही होगी और मैं पुनः अपने आपको नियंत्रित कर आसन पर स्थिर बैठ गया । मुझे स्थिर देखकर उसने वह माला मेरे सीने पर जोरो से फेंक दी, मैं माला को हाथ में लेकर पुनः मंत्र पढ़ने लगा ।

रात्रि के लगभग एक बजे उसने दात किटकिटाए और वही बँटे-बँटे हाथ बढ़ा कर कमरे में जो पीले रंग का बल्ब जल रहा था उसे फोड़ दिया, जिससे कमरे में अघेरा छा गया । केवल मेरे सामने जो दीपक जल रहा था उसकी ही रोशनी कमरे में रही ।

उसने जोरो से हुकार भर कड़क कर कहा—वन्द कर इस कार्य को, क्यों कर रहा है यह कार्य ? यदि अभी तूने वन्द नहीं किया तो मैं तुझे मारकर तेरा खून खप्पर में भरकर पी लूंगी और इतना कहते-कहते वह जोरो से कड़कड़ा कर हम पड़ी ।

उस समय मेरी हालत पिंजरे में फंसे बूहे की तरह हो रही थी, मेरी आँखों के सामने मृत्यु स्पष्ट दिखाई दे रही थी, उस समय वातावरण ही ऐसा बन गया था । मैंने एक क्षण के लिए आपके चरणों का स्मरण किया और दूसरे ही क्षण मंत्रजप प्रारम्भ कर दिया ।

मेरा पुन मन्त्र जप प्रारम्भ करना था कि उसने अपने दाहिने हाथ से मेरे गले को पकड़ लिया और इतनी जोर से दवाने लगी कि गले की नसें फूल गईं और आँखें बाहर को निकलने लगी, पूरा शरीर पसीने-पसीने हो गया, मेरे मुँह में घरघराहट की आवाज ही निकल रही थी, मन्त्र जप सम्भवतः वन्द हो गया था ।

कुछ क्षणों बाद उसने हाथ हटा दिया तो मैंने पुन मन्त्र जप प्रारम्भ कर दिया, पूरी रात इसी प्रकार चलता रहा । कभी उमने मेरे वाम खोचे, कभी छाती पर लात मारी, कभी मेरा गला दबाया, पर फिर भी मैं अपने ऊपर नियंत्रण रखता हुआ मन्त्र जप करता रहा ।

यह रात्रि मेरे लिए अत्यन्त भीषण और कष्टदायक थी । आपका ही प्रभाव और कृपा थी कि मैं इस रात्रि को बच सका और जिन्दा रह सका, अन्यथा मैं हर क्षण मरा था और हर दूसरे क्षण जिन्दा हो रहा था ।

प्रातः मुझे बुखार हो गया था और दिन भर एक सौ तीन डिग्री बुखार रहा, उस दिन मैं भली प्रकार से दूध भी न पी सका और दिन भर बुरे-बुरे विचार आते रहे, शरीर पसीने-पसीने होता रहा, आने वाली रात्रि की याद करके ही मेरे प्राण सूख गए थे, एक बार तो मैंने साधना स्थगित करने का ही निश्चय कर लिया था, पर उसी समय कुछ ऐसा लगा जैसे कि आप कह रहे हैं कि घबराओ मत, साधना चालू रखो, मैं तुम्हारे साथ सहायक के रूप में उपस्थित रहूँगा ।

रात्रि को बुखार में ही मैंने स्नान किया और आसन पर जाकर बैठ गया, विनियोग करके मन्त्र जप प्रारम्भ किया, रात्रि के एक बजे तक कुछ नहीं हुआ, लगभग डेढ़ बजे के आस-पास एक अत्यन्त सुन्दर स्त्री मुझे दिखाई दी, जिमने पैरों में सोने के पाजेव पहने हुए थे और पूरे शरीर पर पीले रंग के वस्त्र तथा सोने के गहने लदे हुए थे, उम्र लगभग बीस-बाईस वर्ष के आसपास थी । वह अत्यन्त सुन्दर और मादक दिखाई दे रही थी, यह आकर मेरे पास घीरे से बैठ गई ।

मैं मन्त्र जप करता रहा, लगभग पाँच बजे मैंने मन्त्र जप पूरा किया । तब तक वह मेरे पास इसी प्रकार बैठी रही और अपनी मोहक मुस्कान के साथ मुझे ताकती रही । मुझे कुछ ऐसा लग रहा था कि इन्द्र लोक की अम्बरा मेरे पास बैठी हो और मुझ पर मुग्ध हो ।

जब मैंने मन्त्र जप समाप्त किया और उठने लगा तो वह घीरे से बोली—‘एक

क्षण के लिए रुकिए, क्या आप मुझे से बात नहीं करेंगे ?'

मैं चुप रहा तो उसने फिर कहा—'मैं 'बगला' हू आपने मुझे क्यों बुलाया है ?'

आपकी आज्ञानुसार जब उसने ऐसा कहा तो मैंने उसके सामने ध्यान दिया और निवेदन किया कि यदि आप प्रसन्न हैं तो मुझे शत्रुस्तम्भन तथा ऐश्वर्यवृद्धि वरदान दें और हर क्षण मेरे लिए सहायक रहें ।

उसने कहा—'मैं तुमसे प्रसन्न हू आज के बाद मैं हर क्षण तुम्हारी रक्षा करूँगी और प्रत्येक विपत्ति में पूर्व तुम्हें सूचित कर दूँगी और उस विपत्ति से बचाऊँगी, साथ ही मुझे स्मरण कर यदि तुम किसी से बातचीत करोगे या शास्त्रार्थ करोगे तो मैं सामने वाले व्यक्ति की जीभ कीलन कर दूँगी जिससे कि तुम विजयी रह सको ।'

मैंने श्रद्धा से उन्हें प्रणाम किया तो उसने 'एवमस्तु' कहा तथा गजगामिनी गति से कक्ष से बाहर निकल गई । उसके निकलने के बाद भी मैं मन्त्र-मुग्ध सा बैठा रहा, उसके शरीर की सुगन्ध से पूरा कमरा अपूर्व सुभाषित था ।

मैं लगभग एक घण्टे तक अनिवर्चनीय आनन्द में निमग्न रहा । ज्योंही मैं चैतन्य हुआ त्योंही मैं कक्ष से बाहर आया और दूमेरे कक्ष में लगे हुए आपके चित्र के सामने प्रणीपात हो गया, मेरी आँखों से आसुओं की धार बह निकली, सफलता की वजह से मेरा सारा शरीर पुलकित हो रहा था और मन में एक अपूर्व सी शान्ति अनुभव कर रहा था ।

इस अनुष्ठान को सम्पन्न हुए तीन महीने बीत गए हैं, आपने मुझे आज्ञा दी थी कि अनुष्ठान सम्पन्न होने के तीन महीने बाद पत्र लिखना, अतः आपकी आज्ञा शिरोधार्य करता हुआ यह पत्र आपको भेज रहा हूँ ।

इन तीन महीनों में मुझे आश्चर्यजनक उपलब्धियाँ प्राप्त हुई हैं । साधना सम्पन्न होने के एक महीने बाद ही अप्रत्याशित रूप से मेरा प्रमोशन हो गया और यही पर मेरी नियुक्ति भी हो गई । आर्थिक दृष्टि से मुझे विशेष लाभ हुआ है और मेरा पुत्र जो व्यापार कर रहा था उसमें अद्वितीय सफलता मिल रही है, सबसे बड़ी बात यह हुई कि मेरे ऊपर तीन मुकदमे चल रहे थे जो शत्रुओं ने ईर्ष्याविश मुझ पर लगा रखे थे, साधना सम्पन्न होने के दो महीनों के भीतर-भीतर उन शत्रुओं ने समझौता करने का निश्चय किया है और उन्होंने कहा कि मैं भी समझौता कर लूँ, मेरी शर्तों पर वे समझौता करने को तैयार थे, अतः समझौता हो गया और मैं पूर्ण रूप से इनमें विजयी रहा ।

अब मैं किसी उच्च अधिकारी से मिलता हूँ तो उससे पूर्व इस मन्त्र का एक बार उच्चारण कर उसके सामने जब जाता हूँ तो वह मेरे सामने हकलाने लग जाता है और बात मान लेता है ।

एक आश्चर्यजनक बात पिछले सप्ताह यह हुई कि मेरे नगर में एक धर्मशास्त्री आए थे, वे निर्गुणवाद के समर्थक थे । उनकी प्रशंसा मैंने काफी सुनी थी अतः कुछ

मित्रों के साथ मैं उनके दर्शन के लिए चला गया, उस समय लगभग चार-पाच हजार व्यक्ति बैठे हुए थे, पता नहीं क्यों मेरे मन में उनसे तर्क करने की भावना आई और मैंने उनसे निर्गुणवाद के विरुद्ध सगुण उपासना की महत्ता सिद्ध करने की बात रखी। मैंने पाच बार इस मन्त्र का जप किया और आश्चर्य की बात यह थी कि मैं ऐसे-ऐसे तर्क देता गया जिसका भान मुझे पहले कभी नहीं था। लगभग आध घण्टे तक वाद-विवाद रहा और मैं बराबर अपने पक्ष के तर्क देता रहा। आश्चर्य की बात यह है कि उन स्वामीजी ने अपनी गलती और पराजय सबके सामने स्वीकार कर ली। लोगों ने मुझे आश्चर्य से देखा, मेरे मित्रों ने कहा कि मैं इस प्रकार से तर्क कर रहा था जैसे कि मैंने जीवन भर शास्त्रार्थ किया हो और अत्यन्त उच्चकोटि का विद्वान होऊँ।

मुझे कुछ ऐसा लगा कि सामने वाले स्वामीजी की जीभ कोलन हो गई थी और वे जो कुछ कहना चाहते थे चाहकर भी नहीं कह पा रहे थे।

आपकी आज्ञानुसार यह पत्र लिख रहा हूँ। मैंने जिस प्रकार से साधना की, और जो कुछ अनुभूति हुई वह इस पत्र के द्वारा व्यवत कर दी है आपही देखें कि मैं सफल हो सका हूँ या नहीं।

यदि मैं सफल हो सका हूँ तो इसके मूल में आपकी ही प्रेरणा रही है। आपकी कृपा से ही मैं सफलता प्राप्त कर सका हूँ, इसके लिए मैं और मेरा परिवार आपके प्रति कृतज्ञ और चिर ऋणी है।

मुझे एक बार पुन आपके चरणों में आने की आज्ञा दें, मेरा पूरा परिवार आपके दर्शन करने के लिए व्याकुल है।

दर्शनाभिलाषी,
गिरधर द्विवेदी

तारा साधना

परम पूज्य गुरुजी ।

सादर साष्टांग प्रणाम ।

आपके आदेश से मैं चला तो आया था, परन्तु पिछले चार महीनों से मैं आपके चरणों को एक क्षण के लिए भी भुला नहीं पाया हूँ। आपने मुझे आदेश दिया था कि मैं अपने मन को सयमित रखूँ और प्रयत्न करूँ कि मेरा चित्त इस बिन्दु पर स्थिर हो सके। यद्यपि आपकी आज्ञानुसार मैंने आपके बताये हुए त्राटक से चित्त को एकाग्र करने का प्रयत्न किया है और मुझे उसमें सफलता भी मिली है, अब मेरा मन पूर्णतः शान्त रहता है, शान्ति-सी अनुभव होती है, पहले मेरा मस्तिष्क भटकता रहता था और जब मैं आखें बन्द कर ध्यान लगाने की कोशिश करता, तब मस्तिष्क नियन्त्रण में नहीं रह पाता था। मेरी आखें अवश्य बन्द रहती परन्तु मेरा मन घूमता रहता और विचार स्थिर नहीं रह पाते थे, परन्तु अब इस त्राटक के माध्यम से मुझे आश्चर्यजनक सफलता मिली है, मैं विचारों के प्रवाह को रोकने में सफल हो पाता हूँ, मेरा मन जो उद्विग्न और अशांत रहता था अब स्थिर और शान्त रहने लगा है। मैं एक आश्चर्यजनक शान्ति अपने मन में अनुभव करता हूँ, मैं आपका ऋणी हूँ और अपने कृपापूर्वक जो कुछ मुझे दिया है उसके लिए मैं जीवन भर ऋणी रहूँगा।

मैं अपने विचारों को केन्द्रित करने में सफल जरूर हुआ हूँ और अब मैं ध्यान लगाता हूँ तो और कोई अन्य विचार मन में नहीं आता, परन्तु कई बार ध्यान लगाते ही आपका चित्र सामने आ जाता है, ऐसा लगता है कि आप सशरीर मेरे सामने खड़े हैं और आपका वरदहस्त मेरे सिर पर है। ऐसा दृश्य देखते ही मेरा पूरा शरीर पुलकित हो उठता है तुरन्त समाधि टूट जाती है तथा आँख खुल जाती है, उस समय आप दिखाई नहीं देते, आप कल्पना कर सकते हैं कि आपको सामने न पाकर मुझे कितनी अधिक वेदना होती है, इसको मैं शब्दों में व्यक्त नहीं कर पा रहा हूँ। मैं जो कुछ लिख रहा हूँ वास्तविकता लिख रहा हूँ आप समर्थ हैं, सर्वज्ञ हैं, त्रिकालज्ञ हैं, आप स्वयं मेरे इस कथन को परख सकते हैं।

मैं और कुछ नहीं चाहता केवल आपके चरणों में कुछ समय और रहना चाहता हूँ। आपकी आज्ञा मेरे लिए सर्वोपरि है, फिर भी मैं आपका बालक हूँ इस

लिए बाल हठ स्वाभाविक है और इसी हठ का आश्रय लेते हुए मैं आपसे निवेदन कर रहा हूँ कि आप कुछ समय के लिए ही सही, एक बार पुन अपनी शरण में आने दें और कुछ समय आपके चरणों में बैठने का अवसर दें ।



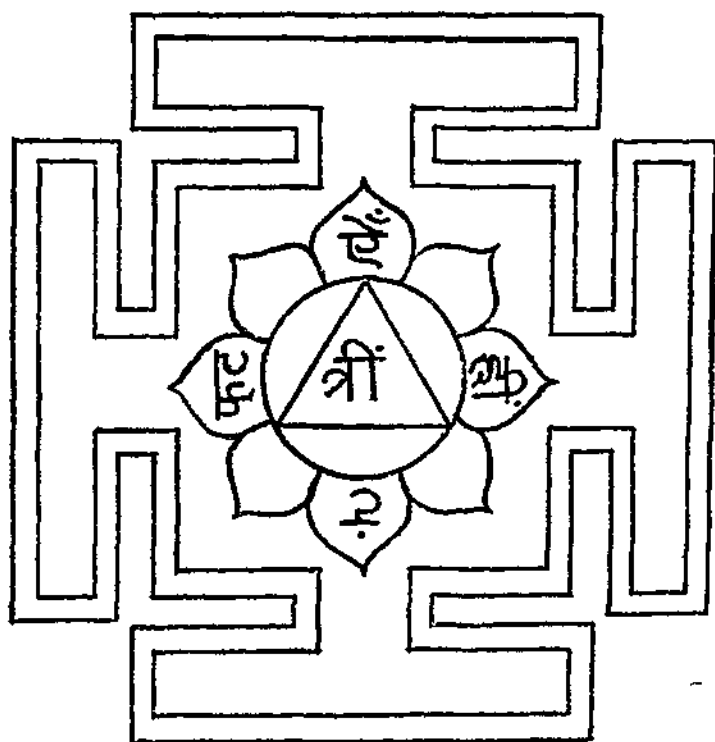
तारा देवी

आपने जो कृपापूर्वक जो तारा साधना सिखाई थी वह मैंने यहाँ जाकर सम्पन्न की । इस साधना में जो कुछ उपलब्ध हुआ वह सब मैं आपके सामने इस पत्र के माध्यम से रख देना चाहता हूँ जिससे कि आप जान सकें कि मैं सफल हो सका हूँ या नहीं ? साथ ही आप मुझे मार्गदर्शन दें कि अब मैं आने इस सम्बन्ध में क्या करूँ । आपने बताया था कि किसी भी महीने के शुक्ल पक्ष के प्रथम गुरुवार से यह

साधना प्रारम्भ की जा सकती है और इसका समय रात्रि के ९ बजे से ३ बजे के बीच रहता है।

आपके यहाँ से मैं बहुत दुखी और व्यथित हृदय से रवाना हुआ था, आपकी आज्ञा मुझे आगे ठेल रही थी और मेरे पैर आगे बढ़ने के लिए जड़ से हो रहे थे, फिर भी आपकी आज्ञा आज्ञा ही थी, अतः मैं उसी दिन दोपहर को गाड़ी में बैठकर अपने घर आ गया।

मेरे घर की छत पर एक छोटा-सा कमरा है अतः आपकी आज्ञानुसार मैंने उस कमरे की दीवारें तथा छत गुलाबी रंग से पुतवा दी थी, इसके बाद कमरे को शुद्ध जल से धोकर यथासम्भव पवित्र बना दिया था।



तारा यंत्र

कमरे में लकड़ी का दो फुट लम्बा और दो फुट चौड़ा तख्ता रख दिया था जो कि जमीन से छ इंच ऊंचा था, उस पर गुलाबी कपड़ा बिछा दिया था और उसके सामने गुलाबी रंग का ही आसन बिछा दिया था जो कि सूती था, आसन को इस प्रकार से बिछाया था जिससे कि मेरा मुह उत्तर की ओर हो गया था, मेरे सामने ही लकड़ी का तख्ता था।

आपकी आज्ञानुसार मैंने आधा किलो चावल पहले से ही गुलाबी रंग में रंग कर सुखा दिए थे और इसी प्रकार रुई को भी गुलाबी रंग से रंग सुखा दी थी, इसके बाद जब चावल सूख गए तब उससे उस तख्ते पर चावलो से अष्टदल बनाया और उसके मध्य में एक मोटा मिट्टी का दीपक रख दिया, जिसमें भुद्ध धी भरा हुआ था, दीपक में गुलाबी रंग से रंगी रुई की बाट बनाकर रख दी थी।

अष्ट दल के सामने चावल की सात छोटी-छोटी ढेरियां बना दी थी और प्रत्येक ढेरी पर एक सुपारी और एक कपूर की टिकिया रख दी थी, गद्यक को पीस उसकी ढेरी बनाकर उसके ऊपर दीपक को रख दिया था। दीपक के सामने सात पतासे भी रख दिये थे और सातों ढेरियों पर एक-एक लौंग और इलायची भी रख दी थी।

तख्ते पर एक किनारे पर कलश भी रख दिया था जिसे पहले से ही गुलाबी रंग से रंग दिया था। उसमें गुलाबी जल भर दिया था। इस कलश में आधा किलो के लगभग पानी भर जाता था, कमरे में मैंने जो बत्त्व लगा रखा था उसे भी गुलाबी रंग से रंग दिया था। कमरे के फर्श को भी मैंने गुलाबी रंग से रंग दिया था।

शुक्ल पक्ष के प्रथम गुरुवार को रात्रि के आठ बजे मैं छत पर गया, स्नान किया, इसके बाद मैंने अपना यज्ञोपवीत बदल दिया जो नया यज्ञोपवीत मैंने धारण किया वह गुलाबी रंग से रंगा हुआ था। फिर पहले से ही गुलाबी रंग से रंगी धोती पहन ली, नीचे कच्छा नहीं पहना था। ऊपर बनियान भी नहीं पहनी थी, केवल एक गुलाबी रंग से रंगी धोती को तह करके ओढ़ ली थी।

ठीक नौ बजे मैं आसन पर बैठ गया जो कि पहले से ही बिछा हुआ था। इस प्रकार मेरा मुह ऊपर की तरफ हो गया और मेरे सामने तख्ता बिछा हुआ था। कमरे के दरवाजे की मैंने बन्द कर दिया था पर अन्दर से चिटकनी या साकल नहीं लगाई थी केवल किवाड़ो को उड़का दिया था।

सर्वप्रथम मैंने उस कलश के पानी से अपने दोनों हाथ धोये और तीन बार आचमन, प्राणायाम किया तथा दाहिने हाथ में जल लेकर सकल्प किया कि आज से चौदह दिन तक नित्य १०१ तारा मन्त्र की माला फेरूंगा। यह कार्य नित्य रात्रि के नौ बजे आरम्भ कर दूंगा और जब १०१ मालायें समाप्त होंगी तभी मैं माला को तख्ते पर रखकर इसी आसन पर सो जाऊंगा। दिन में एक समय भोजन करूंगा दिन को नींद नहीं लूंगा। खाट पर नहीं सोऊंगा, न नौकरी पर या व्यापार के काम से कहीं जाऊंगा और न असत्य बोलूंगा। इसके साथ-ही-साथ मैं इस अनुष्ठान के दौरान किसी प्रकार का सेनदेन या व्यापारिक कार्य भी नहीं करूंगा तथा पूर्ण ब्रह्मचर्य के साथ रहूंगा। यह अनुष्ठान मैं तारा महाविद्या को सिद्ध करने के लिए कर रहा हूँ।

इसके बाद मैंने सुखासन में बैठ अपनी कमर को सीधी रखकर स्थिर दृष्टि में देखता हुआ तारा मन्त्र का जप आरम्भ किया, मेरे मुह से बहुत ही धीमे-धीमे केवल

होठो-ही-होठो में मन्त्र की ध्वनि हो रही थी, आपने मुझे निम्न मन्त्र बताया था जिसे मैंने निरन्तर जप किया था और नित्य १०१ मालायें पूरी की थी। एक माला में १०८ मनके थे और मैंने रुद्राक्ष की माला का प्रयोग किया था, मन्त्र—‘ओम् तारा तूरी स्वाहा’ का जप निरन्तर कर रहा था।

पहले दिन लगभग चार बजे मैं जप कार्य से निवृत्त हुआ और फिर मैं उसी आसन पर लेट गया, लेटते ही मुझे नींद आ गई, जप को आरम्भ करने से पूर्व मैंने दीपक जला लिया था। जब मैं लेट गया था उसके बाद ही दीपक अपने आप तेल समाप्त होने पर बुझ गया था। मैंने अनुमान से तेल इतना डाल दिया था जिससे कि सुबह ६ बजे तक दीपक जलता रह सके।

इस प्रकार लगभग दस दिन बीत गए, किसी प्रकार की कोई समस्या नहीं आई, अनुष्ठान निर्विघ्न चल रहा था, परन्तु ग्यारहवें दिन मैं नियमानुसार नौ बजे जप आरम्भ करने बैठा तो ऐसा लगा जैसे मेरे पास में से कोई निकल गया हो। एक सरसराहट-सी अनुभव हुई, मेरा शरीर अचानक रोमांचित-सा हो गया, फिर भी मैं आसन पर बैठा रहा और मन्त्र का जाप करता रहा, परन्तु रात बारह बजे के लगभग एक जोरो का पत्थर किवाड़ से टकराया और बड़े जोर की ध्वनि हुई। मैं बैठा-बैठा हिल गया। मैंने अनुभव किया कि पत्थर की चोट से किवाड़ खुल गया है, इसके बाद तीन-चार और पत्थर जोरो से आकर किवाड़ से टकराये, एक क्षण के लिए मेरे मन में विचार आया कि यदि इतनी जोर का पत्थर मेरे सिर में आकर लग गया तो निश्चय ही मैं समाप्त हो जाऊंगा, क्योंकि किवाड़ तो खुल ही गया है, परन्तु मैंने तुरन्त अपने विचारों को रोका और पूर्ण मानसिक रूप से जप को करता रहा, उस रात्रि को सुबह चार बजे तक पत्थर आ-आकर किवाड़ से टकराते रहे और कमरे में भी पत्थर आये जिसके निशान कमरे के अन्दर सामने की दीवार पर लगे दिखाई दे रहे थे।

प्रातः चार बजे के बाद जप समाप्त कर जब मैं सो गया तब पत्थर आने बन्द हुए, सुबह उठकर जब मैं कमरे से बाहर आया तो लगभग साठ-सत्तर पत्थर किवाड़ के पास पड़े थे और आठ-दस पत्थर कमरे के अन्दर भी आ गये थे, परन्तु किवाड़ पर किसी प्रकार का कोई चिह्न या पत्थर की चोट दिखाई नहीं दी। मैंने नीचे अपनी पत्नी और बड़े पुत्र को पूछा तो उन्होंने भी उत्तर दिया कि रात को हमने किसी प्रकार की कोई आवाज नहीं सुनी। मैं आश्चर्यचकित था क्योंकि जब भी पत्थर किवाड़ से आकर टकराता तो मुझे ऐसा सुनाई पड़ता जैसे पास में ही कोई छोटा-मोटा बम फट गया हो।

बारहवें दिन रात्रि को मैं पुनः साधना कार्य में बैठा तो रात्रि के लगभग ग्यारह बजे मुझे जोरो से प्यास लगी। इससे पहले ऐसी तीव्र प्यास कभी नहीं लगी थी। आपने निर्देश दिया था कि जप आरम्भ करने के बाद और जब तक उस दिन का जप समाप्त न हो जाए तब तक आसन से हिलना भी नहीं चाहिए, चाहे प्यास लगे या लघु-

शका हो, आपकी आज्ञा मुझे स्मरण थी, परन्तु उस दिन प्यास इतनी जोरों से लग रही थी कि मुझे ऐसा अनुभव हो रहा था कि यदि मैंने पानी नहीं पिया तो मैं प्यासा ही समाप्त हो जाऊंगा, पर फिर भी मैं आसन पर बैठा रहा, रात्रि को दो बजे मुझे जोरो से बुखार-सा अनुभव हुआ। ऐसा लग रहा था जैसे एक सौ पाच डिग्री बुखार आ गया हो, पर बुखार की अवस्था में भी मैंने अपने आप पर नियन्त्रण बनाये रखा और एक सौ एक मालाएँ पूरी करके ही सोया। सुबह जब उठा तो मेरा सिर भारी था और चक्कर आ रहे थे।

तेरहवें दिन की रात्रि को जब मैं साधना में बैठा तो कोई विशेष घटना घटित नहीं हुई, पर एक बजे के लगभग जोरो से घुघरुओं की आवाज सुनाई दी, ऐसा लग रहा था जैसे पास में ही मोटे-मोटे घुघरु बज रहे हों, और कोई धम-धम करता मेरे कमरे में आ रहा है, उसके एक क्षण बाद ही जो दृश्य मैंने देखा तो मेरे मुह से चीख-सी निकल गई। मेरे सामने एक विशालकाय डाकिन की तरह स्त्री खड़ी थी जिसके लम्बे बाल बिखरे हुए थे, बड़ी-बड़ी लाल आँखें, मुह से बाहर लम्बे-लम्बे दात निकले हुए और पूरा शरीर भयानक दिखाई दे रहा था। उसके हाथ में ताजा कटा हुआ सिर था जिसमें से खून निकल रहा था और वह दूसरे हाथ से उस खून को ले लेकर चाट रही थी, कमर पर मोटे-मोटे घुघरु बंधे हुए थे, और चलने से आवाज आ रही थी। वह आते ही मेरे सामने खड़ी हो गई। मैं उस दृश्य को आज भी कहते हुए रोमांचित हो रहा हूँ और भय की एक लहर-सी आज भी पूरे शरीर में दौड़ जाती है, उसके नाखून बड़े हुए थे और पूरे शरीर पर लम्बे-लम्बे बाल थे। उसने आते ही मेरे सीने पर पाव रखा और कहा कि आज मुझे तेरा खून भी पीना है, और इतना कह कर वह इस प्रकार से हसी कि जैसे श्मशान में हड्डियाँ आपस में टकरा रही हों। उसके शरीर से दुर्गन्ध-सी निकल रही थी, जिसे सहन करना कठिन हो रहा था।

यह आपके चरणों की ही कृपा थी कि मैं ऐसी भयानक स्थिति में भी अपने आपको नियंत्रण में रख सका। यदि मैंने वाटक का अभ्यास न किया होता तो उस समय मैं निश्चय ही बेहोश हो जाता। मैंने फिर भी अपना जप कार्य चालू रखा। वह प्रातः चार बजे तक मेरे सीने पर पावों से चोट करती रही और मुझे कुछ ऐसा लग रहा था कि वह मेरे शरीर से मांस नोच-नोच कर स्वादपूर्वक खा रही है। मैं स्वयं अपने शरीर के सघड़े हुए चमड़े को अनुभव कर रहा था और जब वह शरीर से मांस नोचती तो भयानक वेदना का अनुभव होता। चार बजे जब मैंने एक सौ एक की माला पूरी की, उस समय तक मैं लगभग बेहोश हो चुका था। बड़ी कठिनाई से मैं अपने आपको होश में रखे हुए था और मंत्र का जप चालू था। उसके बाद मैं वहीं पर लुढ़क गया। जब मेरी आँख खुली तब प्रातः के आठ बजे थे। मैं एकदम से हड़बड़ा कर उठ बैठा, मेरा शरीर पसीने-पसीने हो रहा था, मैंने अपने शरीर पर नजर डाली तो कहीं से भी मांस नुचा हुआ नहीं दिखाई दिया, मेरे मुह से खुशी की चीख निकलते-निकलते रह गई और मुझे पहली बार अतीव आनन्द हुआ कि मेरा शरीर स्वस्थ है,

और कही से भी चमड़ी फटी हुई या मास नोचा हुआ नहीं है।

दिन भर मुझे हल्का-सा बुखार रहा और भयभीत-सा पड़ा रहा। रात्रि को मैंने जो दृश्य देखा था उसको स्मरण करते ही पूरा शरीर थरथरा उठता था।

चौदहवें दिन की रात्रि को मैं हिम्मत कर स्नान कर पुनः अपने आसन पर बैठ गया, दीपक जलाया और जप कार्य प्रारम्भ कर दिया। रात्रि को लगभग तीन बजे एक अतीव सुन्दरी मेरे पास आकर खड़ी हुई, जिसने गुलाबी कचुकी और गुलाबी ओढ़ना ओढ़ रखा था, उसके पूरे शरीर से एक अपूर्व सी मादक सुगन्ध आ रही थी, वह मेरे पास आकर घुटने से घुटना गिलाकर बैठ गई। उसकी श्वास मेरे कन्धे से टकरा रही थी। मैंने एक क्षण के लिए उस तरफ ताका तो मुझे ऐसा लगा जैसे ससार की सबसे सुन्दर स्त्री मेरे पास बैठी हुई है। उम्र लगभग अठारह से बीस वर्ष के बीच थी, माग में सिन्दूर भरा हुआ था और वह पूरे शरीर पर गहने-पहने हुई थी। वह चुपचाप मेरे पास आकर बैठ गई और मेरी ओर मुस्कराहट के साथ ताकने लगी।

एक बार तो मैं मंत्र भूल-सा गया, परन्तु तुरन्त मैंने अपने मन पर नियन्त्रण किया और अपनी आखें सामने दीवार पर स्थिर कर जप कार्य चालू रखा।

उसने एक दो बार कुछ प्रश्न भी किये परन्तु मैंने कोई उत्तर नहीं दिया और अपने जप को चालू रखा। मैंने अनुभव किया कि उसने अपना सिर मेरे कन्धे से लगा दिया है और उसकी मादक मस्त सुगन्ध मेरे पूरे शरीर में बिजली दौड़ा रही है।

लगभग चार बजे मैंने जप कार्य पूरा किया। तब तक वह इसी प्रकार मेरी कमर में हाथ डालकर कन्धे पर सिर टिकाकर बैठी रही। जप कार्य समाप्त कर ज्योंही मैं लेटा वह भी मेरे पास लेट गई। मैं तुरन्त उठकर बैठ गया, तो वह आखों से कटाक्ष करती मुस्कराती हुई मेरे पास ही बैठ गई।

एक क्षण के बाद उसने पूछा कि तुमने मुझे बुलाया इसलिए मैं आ गई। आपने मुझे क्यों बुलाया है ?

मैंने कहा कि आपको इसलिए बुलाया है कि मेरे जीवन में आप सहायक बनी रहें।

उसने पूछा कि मैं मा के रूप में सहायक रहूँ या प्रेमिका के रूप में ?

मैंने उत्तर दिया कि मा के रूप में मैं आपसे कुछ भी प्राप्त नहीं कर पाऊँगा। मैं आपको प्रेयसी रूप में ही प्राप्त करना चाहता हूँ। पर उसमें किसी भी प्रकार की वासना न हो।

वह मुस्करा दी, वास्तव में ही वह अत्यन्त सुन्दर थी। इतनी सुन्दर स्त्री इससे पूर्व मैंने अपने जीवन में नहीं देखी थी। उसकी मुस्कराहट में एक अजीब-सा आकर्षण था जो कठोर-से-कठोर साधक को भी गुमराह कर सकता है।

उसने कहा मैं प्रेयसी के रूप में रहने को तैयार हूँ पर क्या तुम मुझे सन्तुष्ट कर सकोगे ?

मैंने उत्तर दिया कि वास्तवात्मक रूप से आपका मेरा सम्बन्ध नहीं रह सकता।

आपकी मैंने साधना की है आप प्रेयसी रूप में मुझे नित्य धनराशि प्रदान करें जिससे कि मैं अपने जीवन को सुखपूर्वक व्यतीत कर सकूँ ।

उसने कहा मैं प्रसन्न हूँ और तुम प्रेमी हो अतः तुमने जो कुछ भी मागा है, मैं उसे पूरा करूँगी, और ऐसा कहती हुई वह मन्द गति से मुस्कराती हुई कमरे से बाहर निकल गई । इससे पूर्व उसने दोनों हाथों से मेरे शरीर को पकड़कर भीच-लिया था, फिर भी मैंने अपने आप पर नियन्त्रण बनाये रखा ।

वह चली गई, परन्तु मैं घटे भर तक सो नहीं सका । उस कमरे में उसके शरीर से निकलने वाली सुगन्ध व्याप्त रही । मैं उसके द्वारे में ही चिन्तन करता रहा । यह चिन्तन मैं लेटे-लेटे कर रहा था, तभी दीपक तेल न होने के कारण बुझ गया और मुझे नींद आ गई ।

सुबह सात बजे मेरी आँख खुली तो मैं उठ बैठा । कमरे में मेरे अलावा और कोई नहीं था, परन्तु जहाँ मैं सोया था वहाँ सिर के नीचे सोने का टुकड़ा पड़ा था जो कि लगभग दो तोला वजन का था ।

मैंने उस टुकड़े को उठा लिया और नीचे आ गया । इस घटना की चर्चा घर में किसी से नहीं की । स्नान वगैरह करके मैं दोपहर को एक सर्राफ़ के यहाँ गया और वह सोने का टुकड़ा उसके सामने रख दिया । उसने जाच कर कहा कि सोना पूर्ण असली है और दो तोला वजन में है । क्या आपको बेचना है ?

मैंने स्वीकृति दी और उसने दो तोला सोने की रकम मुझे थमा दी । मैं घर चला आया ।

इसके बाद वह सुन्दरी मुझे पुनः दिखाई नहीं दी, पर अब मैं नित्य नीचे कमरे में अपने पलंग पर मोता हूँ तो प्रातः सिरहाने मुझे नित्य दो तोला सोने का टुकड़ा मिल जाता है, ऐसा नियमित रूप से हो रहा है ।

मैं नहीं समझता कि मैं अपने कार्य में सफल हुआ हूँ या नहीं, परन्तु मुझे आन्तरिक प्रसन्नता अवश्य है और उस सोने के टुकड़े को मैं पाँच-छ दिनों के बाद जितने टुकड़े टुकड़े होते हैं उन्हें ले जाकर बाजार में बेच देता हूँ, आपकी कृपा से मेरा सारा कर्जा उतर गया है और आर्थिक दृष्टि से बहुत ही ज्यादा अनुकूलता अनुभव कर रहा हूँ ।

मुझे ऐसा लग रहा है कि मेरी 'तारा साधना' सफल हुई है जिसके परिणाम-स्वरूप मुझे आर्थिक लाभ हो रहा है । आपने मुझे बताया था कि जीवन भर इसी प्रकार से आर्थिक लाभ होता रहेगा, इसके लिए मैं आपका अत्यधिक आभारी हूँ ।

मैं इस बार पुनः जल्दी-से-जल्दी आपके चरणों में आना चाहता हूँ और आपके दर्शन से अपने आपको धन्य करना चाहता हूँ । मुझे विश्वास है कि आपकी तरफ से शीघ्र ही स्वीकृति प्राप्त होगी ।

आपका चरण रज,
(वानुदेव शर्मा)

कर्ण पिशाचिनी साधना

परम पूज्य स्वामी जो,

सादर चरण स्पर्श ।

आज पत्र लिखते हुए मुझे अत्यन्त प्रसन्नता हो रही है कि मैंने आपकी आज्ञा का अक्षरशः पालन किया, जिसके फलस्वरूप मैं अपनी उस इच्छा को पूरी कर सका जो कि मेरे मन में कई वर्षों से थी ।

मैं गृहस्थ नहीं हूँ और न जीवन में गृहस्थी बसाने की इच्छा ही रही । मेरा एक ही ध्येय था कि मैं काल ज्ञान के बारे में साधना करूँ, मैंने कहीं से यह सुना था कि 'कर्ण पिशाचिनी सिद्धि' से काल ज्ञान हो सकता है, जब मुझे यह ज्ञात हुआ तो मैं साधुओं और सन्यासियों के सम्पर्क में आने लगा । मेरा प्रयत्न शुरू से इस साधना को सीखने का था, परन्तु मुझे कोई ऐसा साधु नहीं मिला जो कि मुझे इस प्रकार का ज्ञान दे सके ।

मैंने मन में यह निश्चय कर लिया था कि यदि जिन्दा रहा तो इस ज्ञान को कहीं-न-कहीं से अवश्य ही सीखूँगा, परन्तु इसके लिये मैं जितना ही अधीर होता उतनी ही ज्यादा परेशानी मिलती । मैं मूलतः ज्योतिषी रहा और ज्योतिष के माध्यम से ही अपना जीविकोपार्जन करता था, परन्तु मुझसे लोग प्रभावित नहीं होते थे, क्योंकि मैं उनके भूतकाल के बारे में कुछ भी बताने में समर्थ नहीं था और भविष्य बताता तो उन्हें विश्वास नहीं होता था, इस प्रकार मैं एक असफल ज्योतिषी बनकर रह गया था ।

तभी मुझे एक साधु से आपके बारे में जानकारी मिली और मैंने आपके पास आने के लिये पत्र लिखा, परन्तु जब मैंने पत्र में इस प्रकार की साधना सीखने की इच्छा प्रकट की तो आपने मुझे अपने सचिव के द्वारा मना लिखवा दिया, इससे मैं निराश अवश्य हुआ, परन्तु उस साधु ने यह कहा था कि यदि तुम बराबर प्रयत्नशील बने रहोगे तो आपका हृदय अवश्य पसीज जायेगा, और आप यह साधना सिखा देंगे ।

सम्भवतः आपको स्मरण होगा कि जब मैं बिना आपकी अनुमति लिये आपके द्वार पर आया तो आपने बिना मेरा प्रश्न सुने ही कहलवा दिया कि मैं इस प्रकार की साधना नहीं सिखाता ।

आपके नौकर के द्वारा जब यह ज्ञात हुआ तो मैं आश्चर्यचकित रह गया कि

जब मैं श्रीमाली जी से मिला ही नहीं हू तो उन्हें मेरे बारे में कैसे पता चल गया कि मैं कौन हू और किस उद्देश्य से यहाँ आया हू। आपने स्पष्ट कहलवाया था कि मैं इस प्रकार की कर्ण पिशाचिनी जैसी वाममार्गी साधना नहीं सिखाता।

मैं निराश होकर धर्मशाला लौट आया, नित्य आपके द्वार पर आता और नित्य मुझे ऐसा ही जवाब सुनने को मिलता, मुझे याद है कि सोलहवें दिन आपसे भेंट हो सकी तो आपने मेरा नाम लेकर कहा कि व्यर्थ में यहाँ समय बरबाद कर रहे हो, मैंने वाममार्गी साधना सिखाना बन्द कर दिया है और तुम्हारी इच्छा कर्ण पिशाचिनी के बलावा और कोई साधना सीखने की नहीं है, इसलिये मैं तुम्हें यह साधना नहीं सिखा सकूँगा।

मेरी आँखों में आँसू आ गये थे। मैंने अपनी व्यथा आपके सामने रख दी थी, कि मैं किस प्रकार एक सामान्य ज्योतिषी बनकर झूठा मर रहा हूँ, लोगों का मुझ पर विश्वास ही नहीं रहा है और ब्राह्मण युवक होते हुए भी मैं भिखारीवत् जीवन व्यतीत कर रहा हूँ।

जहाँ तक मैं समझता हूँ 'ब्राह्मण' शब्द को सुनकर आपका झूठा किंचित मेरी तरफ हुआ, पर फिर भी आपने मुझे ढरकाना ही चाहा और इस उद्देश्य से आपने मुझे कहा कि आज की रात श्मशान में बिताकर आओ तो कल दात करूँगा। आपने यह सोच लिया था कि न तो मैं सारी रात श्मशान में रह सकूँगा और न आपको इस सब में बाध्य कर सकूँगा।

पर मेरे मस्तिष्क में तो एक ही धुन थी कि मैं इसी साधना को सीखूँगा, और कहीं से भी मुझे इस प्रकार की साधना सीखने को मिलेगी तो मैं इसे प्राप्त करूँगा।

उस दिन मैं शाम को ही श्मशान में चला गया था और सारी रात श्मशान के मध्य में बैठा रहा। यद्यपि वह रात कितनी अधिक डरावनी और रोमांचकारी थी, परन्तु फिर भी आपकी कृपा से मैं सारी रात श्मशान में बिता सका, सुबह जल स्नानादि कर प्रातः न्यारह बजे के लगभग आपकी सेवा में उपस्थित हुआ तो आपने दो क्षण आँखें बंद कर कुछ सोचा और फिर आँखें खोल कर पूछा कि श्मशान में रात बिता आये, मैंने हाँ कहा, इस पर आप किंचित परेशान हो गये।

मैंने सोचा कि आपके द्वार से खाली हाथ ही नहीं जाऊँगा, पर मेरा मन कह रहा था कि यदि यहाँ से खाली हाथ चले गए तो अन्य कहीं पर भी इस प्रकार की विद्या सहज ही प्राप्त नहीं हो सकेगी।

इस प्रकार दस-बारह दिन और बीत गये। आपने मुझे ढरकाने के लिये कुछ और भी बातें कही पर मैंने आपसे ही सीखने का निश्चय कर लिया था, अन्त में मैंने जब आपसे शिष्य बनाने की इच्छा प्रकट की तो आपने स्पष्ट शब्दों में मुझे मना कर दिया। मैंने भी यह निश्चय कर लिया था कि आप मुझे शिष्य बनावें या न बनावें यह विद्या आपसे ही मुझे सीखनी है, मेरा मन कह रहा था कि जब आपने मुझे श्मशान में रात बिताने को कहा है तो आप स्वयं सोचेंगे कि इसको सिखाना ही चाहिए अन्यथा

मुझे ऐसा आदेश नहीं देना चाहिए था। इसी आशा से मैं डेढ़ महीने तक जोधपुर में पड़ा रहा और नित्य आपके दरबार में उपस्थित होता और निराश होकर धर्मशाला लौट आता।

मैंने यह निश्चय कर लिया था कि अब आपको यह नहीं कहूँगा कि आप मुझे कब सिखायेंगे और बिना सीखे घर भी नहीं लौटूँगा, चाहे मुझे साल भर तक जोधपुर में ही क्यों न रहना पड़े।

मैं यह सारी कहानी इसलिये लिख रहा हूँ कि आपको शायद मेरा स्मरण आ जाय और कुछ कृपा का प्रसाद मिल जाय। यद्यपि मैं आपका शिष्य नहीं बन सका हूँ, सम्भवतः मुझमें इस प्रकार की पात्रता नहीं है या ऐसा मेरा सौभाग्य नहीं है कि आप जैसे समर्थ गुरु का संरक्षण प्राप्त कर सकूँ, परन्तु फिर भी मैंने, आपको अपना गुरु माना है, मेरे कक्ष में आपका चित्र है और उसी के आधार पर मैं एकलव्य की तरह आपका शिष्य बनकर कार्य कर रहा हूँ और भविष्य में भी करूँगा।

जब डेढ़ महीना बीत गया और आपने शायद सोचा कि यह आसानी से टलेगा नहीं तो आपने मुझे कहा कि तुम यदि कर्ण पिशाचिनी साधना ही सीखना चाहते हो तो मैं बता देता हूँ, पर यह साधना अपने घर जाकर ही करना, भविष्य में और किसी भी साधना के लिये मुझे मत कहना। क्योंकि मैंने इस प्रकार की साधना के निर्देश देने का विचार छोड़ दिया है। मैं जीवन में मन्त्र साधना और दक्षिण मार्गी साधना को आगे बढ़ाना चाहता हूँ, वाम मार्गी साधना मेरी रुचि के अनुकूल नहीं है। यद्यपि यह बात सही है कि वाम मार्गी साधना से शीघ्र ही सफलता मिल जाती है, सिद्धि हो जाती है और पूर्णता प्राप्त हो जाती है।

मैं छड़ा रहा। उस समय, मैं क्या कहता जबकि आप मुझे नाराज होकर भी यह साधना दे रहे थे, इसलिये मैं चुप रहा। आपने जिस प्रकार से बताया मैं उसको कागज पर नोट करता रहा, जब आपने पूरी विधि मुझे बता दी तो कठोर शब्दों में आज्ञा दी कि आज ही घर चले जाओ और वही पर साधना को सम्पन्न करना तथा भविष्य में इसका किसी भी प्रकार से दुरुपयोग मत करना। मैं जब आपके चरणों की तरफ झुका तो आप दो कदम पीछे हट गये। यह मेरा दुर्भाग्य ही था, परन्तु मुझे विश्वास है आप दयालु हैं और मुझ जैसे अकिंचन पर कभी-न-कभी आपकी कृपा अवश्य होगी।

आपने जिस प्रकार से बताया था उस प्रकार से मैंने घर पर जाकर प्रयोग प्रारम्भ किया। आपने मुझे बताया था कि यह केवल तीन दिन का प्रयोग है जो कि किसी भी महीने के कृष्ण पक्ष की त्रयोदशी से प्रारम्भ होता है और अमावस्या को समाप्त हो जाता है, परन्तु साधना के इन तीन दिनों की तैयारी के लिये इससे पूर्व दस दिन का अभ्यास करना चाहिए और अमावस्या के बाद भी दस दिन तक इस अभ्यास को नियमित रखना चाहिए।

अतः मैंने आपकी बताई हुई विधि के अनुसार पौष मास की तृतीया से स्नान करना बन्द कर दिया, न तो मैं दातुन करता था, न जीभ या दात साफ करता, न

स्नान करता और न अपने कपड़े बदलता । आपने मुझे ऐसी स्थिति में बाहर के कार्य करते रहने को कहा था, अतः मैं छोटा-मोटा ज्योतिष का कार्य भी करता रहा, परन्तु लोग मेरे उलझे हुए बाल, पीला और सुस्त चेहरा तथा बिना स्नान किए हुए शरीर को देखकर आश्चर्य करते थे ।

आपने जैसा बताया था, मैं सन्ध्या, पूजन, तर्पण, मन्दिर में जाना, गायत्री पाठ, वेदपाठ आदि सभी कार्य बन्द कर दिये थे, क्योंकि आपने मुझे बताया था कि यदि इस प्रकार के कार्य करोगे तो कर्ण पिशाचिनी सिद्धि नहीं हो सकेगी और भविष्य में भी इस प्रकार के कार्य नहीं करने हैं ।

जिस विस्तर पर मैं सोता, प्रातः उस विस्तर को समेटता नहीं था, इसी प्रकार थाली में भोजन करने के बाद थाली को धोता नहीं था, अपितु शाम को भोजन बनाकर उसी झूठी थाली में खाना लेकर खा लेता था ।

इस प्रकार मैं बराबर दस दिन करता रहा, त्रयोदशी के दिन मैंने पतासे में थोड़ा-सा मल लेकर अपने मुह में डालकर निगल गया, यद्यपि इससे मुझे घृणा तो बहुत हुई, परन्तु मैं हर हालत में इस साधना को वाम-मार्गी तरीके से सम्पन्न करता ही चाहता था । इस प्रकार त्रयोदशी से अमावस्या तक इन तीन दिनों में जब भी भूख लगती पतासे में या किसी अन्य वस्तु में अपना ही मल लेकर निगल जाता और जब प्यास लगती तो अपना ही मूत्र छानकर पी लेता ।

त्रयोदशी की रात्रि को मैंने अपने घर के दरवाजे अच्छी तरह से बन्द कर दिये और कमरे में बड़े-बड़े ग्यारह दीपक लगा दिए, प्रत्येक दीपक में आधा किलो से ज्यादा तेल था । इसके बाद मैं ऊनी कम्बल का आसन विष्टा दक्षिण की तरफ मुह कर बैठ गया, इन दस दिनों में स्नान न करने से मेरे शरीर में से दुर्गन्ध आ रही थी, इस दिन प्रातः जो मल हुआ था उसे मैंने भोजन की थाली में ले लिया था और दिन को इसी मल का सेवन किया था, बाद में जो वच गया था वह मैंने रात्रि को ग्यारह बजे सर्वथा नग्न होकर अपने पूरे शरीर पर लेप दिया था, ललाट पर अपने ही मल का तिलक किया था और बालों में भी इस मल को अच्छी तरह से लगा दिया था ।

मैं जिस आसन पर बैठा उसके चारों तरफ मैंने दीपक लगा कर उनके मध्य में बैठ गया था, इसके बाद मैंने पहले से ही हड्डियों की माला तैयार करके रखी थी, जो कि मैंने एक दिन रात्रि को श्मशान में जाकर एक कब्र खोदकर उसमें से हड्डियाँ निकाल कर माला बनाई थी । उस माला में चौबत्त छोटी-छोटी हड्डियाँ थी, इस प्रकार यह चौबत्त हड्डियों के टुकड़ों की एक माला बन गई थी, इस प्रकार की मैंने दो मालाएँ बनाई थी, जिसमें से एक माला मैंने गले में पहन रखी थी, और एक माला मैंने अपने हाथ में ले रखी थी ।

इसके बाद आपने मुझे 'कर्ण पिशाचिनी' मन्त्र जप करनेका निर्देश दिया था, अतः मैंने इसी नगनावस्था में बैठ कर जप प्रारम्भ किया । आपने जो मुझे मन्त्र सिखाया था वह इस प्रकार था—

‘ओम ह्रीं कर्णं पिशाचिनी अमोघ सत्य वादिनी मम कर्णे
अवतर-अवतर सत्य कथय-कथय अतीत अनागत
वर्तमान दर्शय-दर्शय ए ह्रीं ह्रीं कर्णं पिशाचिनी स्वाहा ।’

इस मन्त्र का मैं निरन्तर जप करता रहा, आपने मुझे बताया था कि एक सौ पन्द्रह मालाएँ निरन्तर जप करनी हैं। यदि जप के दौरान लघुशका हो तो उसी आसन पर लघु शका कर ली जाय, यदि मल विसर्जन की शका हो तो उसी आसन पर मल विसर्जन कर लें और मन्त्र पढ़ते-पढ़ते ही उस मल को शरीर पर लेप कर दें। मूत्र को भी बायें हाथ से लेकर अपने शरीर पर छिड़कते रहें।

मैंने ऐसा अनुभव किया कि जब मैं उन दिन इक्कीस मालाएँ पूरी कर चुका तो मुझे जोरो से लघुशका हुई और जो भी मूत्र हुआ वह मैं बायें हाथ से लेकर अपने मुह पर और शरीर पर छिड़कता रहा, दाहिने हाथ से मैं अपनी माला को लेकर मन्त्र जप करता रहा।

उस रात्रि को कई बार मल और मूत्र विसर्जन हुआ। मैं आश्चर्यचकित था कि इससे पूर्व ऐसा कभी नहीं हुआ था, सारा कमरा दुर्गन्ध से भर गया था। उन कमरे में सास लेना भी कठिन हो रहा था, फिर भी मैंने एक सौ पन्द्रह मालाएँ पूरी की, जब जप समाप्त हुआ उस समय प्रातः पांच बजे चुके थे।

जप समाप्त करके मैं आसन से उठा और कमरे में ही सो गया, आपने मुझे निर्देश दिया था कि कमरे में ही रहना है बाहर जाने की आवश्यकता नहीं है, प्रातः ६ बजे के लगभग मुझे जोरो की भूख लगी और कुछ ऐसा लगा जैसे मैं महीने भर से भूखा हूँ और यदि तुरन्त भोजन नहीं किया तो शायद प्राण समाप्त हो जायेंगे, उसी समय मल विसर्जन भी हुआ, उस मल से ही मैंने यथासम्भव क्षुधा और मूत्र से अपनी प्यास को शान्त किया।

एक क्षण के लिए मेरी आँखों में आसू आ गए कि आपने मुझे मना किया था, वह ठीक था। आपकी आज्ञा मान लेता तो मुझे इतना पतित नहीं होना पड़ता, मेरा ब्राह्मणत्व समाप्त हो गया था और मैं एक पिशाच की तरह उस कमरे में बैठा हुआ था।

चतुर्दशी की दोपहर को मैं उसी कमरे में लेटा हुआ था। जमीन पर कोई चरित्र बिछा हुआ नहीं था। मैं सर्वथा नग्न था तभी घीरे से दरवाजा खुला, कुछ ऐसा अनुभव हुआ जैसे कि कोई कमरे के अन्दर आया हो, जबकि मैंने मुख्य द्वार का दरवाजा पूरी तरह से बन्द कर रखा था और अन्य कोई दरवाजा ऐसा नहीं था जिससे कि कोई अन्दर आ सके।

मैं सजग था, मेरी आँखें खुली हुई थी, प्रमाण प्राप्त करने के लिए अपने हाथ से शरीर पर चिकोटी भी काटी तो मुझे दर्द-सा हुआ, अतः यह स्पष्ट था कि मैं सजग था। मैंने देखा कि एक स्त्री कमरे में आई है जो कि सर्वथा नग्न है, उसकी आयु पच्चीस से तीस वर्ष के लगभग होगी। दिखने में वह मध्यम स्तर की सुन्दरी लग

रही थी। वह मेरे पास आकर मेरे साथ लेट गई। मैं उसे देखकर हड़बड़ा गया और उठ बैठा तो उसने जबरदस्ती से मुझे पुन अपने साथ लिटा लिया और धीरे-धीरे मेरे गुप्तांग पर हाथ फेरने लगी।

मैं हतप्रभ था, किर्कर्सव्यविमूढ़ या कि क्या करूँ और क्या न करूँ ? मेरे मन में एक अजीब-सा भय व्याप्त हो गया था। उस तरफ देखने का साहस नहीं जुटा पा रहा था, परन्तु वह बिना हिचकिचाहट निर्लज्ज-सी मेरे गुप्तांग पर हाथ फेरती रही और मुझे काम करने के लिए प्रेरित करती रही, परन्तु सम्भोग नहीं हुआ और लगभग पात्र वजे वह मेरे पास से उठकर अदृश्य हो गई।

मैं पस्त-सा हो गया था और निश्चय कर लिया था कि इस साधना को छोड़ दूँ, परन्तु आपने मुझे बता दिया था कि यदि साधना प्रारम्भ करने के बाद बीच में छोड़ दी तो वह पिशाचिनी तुम्हें उसी समय समाप्त कर देगी। इस साधना में या तो सफलता ही मिलती है या मृत्यु ही प्राप्त होती है।

मैं उठ बैठा, कमरे में कई बार मल मूत्र होने से एक अजीब-सी दुर्गन्ध भर गई थी जिससे मेरा माथा फट रहा था, परन्तु मैं कमरे में पड़ा रहा। रात्रि को लगभग ग्यारह बजे मैं पुन सभी दीपक जला आसन पर बैठ गया और पहले दिन की तरह ही मन्त्र जप प्रारम्भ किया। मेरी रुचि इस साधना में समाप्त हो गई थी और मैं जो कुछ कर रहा था वेमन से कर रहा था। मेरी राय है कि किसी भी व्यक्ति को इस प्रकार की साधना वामभार्गी तरीके से सम्पन्न नहीं करनी चाहिए, अधोरी ही इस कार्य को कर सकते हैं।

खैर, मेरा जप निरन्तर चालू रहा, पर घण्टे भर बाद ही वही स्त्री मेरे पास आकर बैठ गई जो दोपहर को मेरे साथ आकर लेटी थी, उसके दात बाहर निकले हुए थे, सिर पर छोटे-छोटे बाल थे, बालों में सिन्दूर भरा हुआ था और गले में हड्डियों की माला पहने हुई थी, इसके अलावा वह पूरी तरह से निर्वस्त्र थी।

वह पास में बैठकर अत्यन्त प्रसन्न हो रही थी और वह मेरे गुप्तांग के साथ बराबर खेल कर रही थी। कभी वह उस पर हाथ फेरती, कभी मेरा चुम्बन ले लेती और कभी मेरी कमर में हाथ डाल देती, मैं पसीने-पसीने हो रहा था, परन्तु फिर भी मेरा मन्त्र जप चालू था। इस बीच पाक-छ बार मल-मूत्र विसर्जन हुआ तो उस स्त्री ने ही लेकर मेरे शरीर पर और अपने शरीर पर चुपड़ दिया। इस प्रकार प्रातः पात्र वजे तक वह मेरे पास बठी रही और जप समाप्त होते ही उठकर दरवाजे के बाहर निकल गई।

मैं आसन से उठकर पास ही कमरे में लेट गया। मैं इस माहौल में लगभग अर्द्ध विक्षिप्त-सा हो गया था। मैंने इस साधना को समाप्त करने की सोच ली थी, परन्तु मृत्युभय से मैं ऐसा नहीं कर सका।

अमावस्या के दिन मैं कमरे में लेटा रहा। लगभग बारह बजे वह स्त्री पुन आकर मेरे पास लेट गई। उसे लेटते देख कर मैं उठ कर खड़ा हो गया तो उसने उठ

कर मेरी कमर मे जोरो से लात मारी और मुझे साथ ही लेटने पर विवश कर दिया, आज उसने मेरे शरीर के साथ कई बार खिलवाड़ की और सम्भोग के लिए भी प्रेरित किया। लगभग तीन बजे उसने जबरदस्ती से सम्भोग किया और सम्भोग समाप्त होते ही वह उठकर कमरे से बाहर निकल गई। मैं भय, पश्चात्ताप और ग्लानि से दुखी हो रहा था।

मैं इसी प्रकार कमरे मे पड़ा रहा। ऐसा लगा जैसे मैं एक भयानक पड़्यन्त्र मे फस गया हूँ और निकलने का कोई चांग नहीं है। रात्रि के लगभग ग्यारह बजे मैं अत्यन्त वेमन से उठकर आसन पर बैठ गया और चारों तरफ दीपक लगा दिए। आज का माहील मुझे अत्यन्त डरावना और बीभत्स लग रहा था, कमरा दुर्गन्ध से भर गया था, मेरा शरीर मल-मूत्र से सना हुआ था, और दिमाग की नसों दुर्गन्ध के मारे फट रही थी।

जप प्रारम्भ होते ही वह स्त्री कमरे मे आ गई और आकर सीधे ही मेरी गोदी मे बैठ गई, उसने अपना दाहिना हाथ मेरे गले मे डाल दिया।

मैं चुपचाप मन्त्र जप करता रहा और वह वहीं पर मल विसर्जन करती रही और वह अपने हाथ से अपने मल और मूत्र को मेरे शरीर पर लेपती रही, रात्रि के लगभग पांच बजे वह गोदी से अलग हुई और मेरे सामने नगनावस्था मे बैठ गई, जप समाप्त हुआ तो वह हड्डियों की माला पास मे रख दी।

उसने कहा मैं ही तुम्हारी प्रियतमा हूँ और अब जिन्दगी भर तुम्हारे साथ रहूंगी और तुम्हारा कार्य करूंगी, पर यदि तुमने मुझे कभी छोड़ना चाहा तो मैं तुम्हें समाप्त कर दूंगी, ऐसा कहते-कहते उसने अपने गले मे जो हड्डियों की माला पहने हुए थी, वह मेरे गले मे पहना दी और मेरे गले मे जो हड्डियों की माला थी वह निकालकर अपने गले मे डाल ली, और नववधू की तरह मुस्कराने लगी।

मैं चुप रहा तो उसने कहा शर्मनि की जरूरत नहीं है, तुमने मुझे सिद्ध किया है तो अब मैं जीवन भर तुम्हारे साथ रहूंगी ही, और जब भी मुझे सम्भोग की इच्छा होगी तो तुम्हारे पास आऊंगी और तुम्हें मेरी इच्छा पूरी करनी पड़ेगी।

तुम जो कुछ भी प्रश्न पूछोगे तुम्हारे कान मे मैं कह दूंगी, मगर मेरे बारे मे अन्य किसी को कहा तो तुम्हारा गला घोट दूंगी। साथ ही मुझसे पिण्ड छुड़ाना चाहा तो तुम्हें मारकर मुझे प्रसन्नता ही होगी, ऐसा कहकर वह मेरे गुप्तांग पर चुम्बन लेती हुई कमरे से बाहर निकल गई।

काश ! मैं इस प्रकार की साधना न करता तो ज्यादा अच्छा रहता, पर अब मैं इस साधना को कर चुका था अतः मैं पीछे भी नहीं हट सकता था, आपने तो मुझे बहुत मना किया था परन्तु यह दण्ड मेरी जिद्द के कारण ही मुझे भोगना पड़ रहा है।

आपने जो विधि बताई थी उसके अनुसार मैंने प्रतिपदा को प्रातः उठकर स्नान किया, परन्तु दातो को साफ नहीं किया, दीपक उठाकर घर के बाहर दक्षिण की तरफ जमीन मे गाड़ दिये और उन दीपको के साथ ही उस हड्डियों की माला को भी

जमीन में गाड़ दिया, इसके बाद पूरे कमरे को साफ किया और शुद्ध जल से दो तीन बार धोया, फिर मैंने पुन स्नान कर कपड़े धारण कर लिये ।

इस प्रकार प्रतिपदा से दसवी तक मैं घर में ही रहा । बाहर नहीं निकला, पर प्रतिपदा के बाद दसवी तक पुन स्नान नहीं किया, और न कपड़े ही बदले, साथ ही मैं भूख लगने पर नित्य थोड़ा-थोड़ा मल लेता रहा, प्यास लगने पर अपना ही मूत्र पी लेता था ।

शुक्ल पक्ष की दसवी को यह अनुष्ठान समाप्त हुआ और एकादशी को मैंने पुन स्नान किया, साबुन लगाकर भली प्रकार से शरीर को साफ किया, कपड़े भी बदले और दाँतो को तथा जीभ को भी साफ किया, उसने जो मुझे हड्डियों की माला पहनाई थी वह मैंने अपने गले में पहिने रखी ।

इस अनुष्ठान को सम्पन्न हुए दो महीने बीते गये हैं, परन्तु मैं अन्दर-ही-अन्दर पश्चात्ताप की अग्नि में जल रहा हूँ, क्योंकि अब मैं न तो गायत्री मन्त्र का उच्चारण कर सकता हूँ और न किसी अन्य देवी देवताओं की पूजा या पाठ कर पाता हूँ ।

पर इससे आर्थिक वृद्धि असाधारण रूप से हुई है, पिशाचिनी घेर घारकर लोगों को मेरे घर की तरफ ठेलती है और नित्य सी से ज्यादा लोग मुझे मिलने के लिये आ जाते हैं, उनको सामने देखते ही उनके भूतकाल की कई घटनाएँ मेरे सामने आ जाती हैं । जब वे अपने भूतकाल की कोई बात पूछते हैं तो मेरे कानों में उसका उत्तर पिशाचिनी कह देती है और जब मैं वही बात सामने वाले व्यक्ति को कहता हूँ तो वह आश्चर्यचकित हो जाता है और अपना सिर मेरे पैरों में रख देता है ।

इसके बाद जब वह व्यक्ति भविष्यकाल से संबंधित प्रश्न पूछता है तो उसका उत्तर पिशाचिनी नहीं दे पाती, तब मैं अपने मन से कुछ भी कह देता हूँ पर वह पूरा विश्वास कर लेता है, क्योंकि उसने भूतकाल की जो बात पूछी थी वह सही-सही बता दी थी इसीलिये वह प्रभावित रहता ।

कुछ व्यक्तियों ने मेरी परीक्षा भी ली और मैं उसमें भी सफल रहा । एक बार बाहर से एक सेठ आये जिसके तीन पुत्र थे, पर उन्होंने कई लोगों के सामने मुझे प्रश्न पूछा कि पण्डितजी मेरे अभी तक सन्तान नहीं हुई है, कब होगी ?

तुरन्त ही मेरे कानों में सुनाई दिया कि इसके तीन पुत्र हैं । तीनों के नाम ये हैं—उनकी उम्र उनकी आदतो तथा उनके और सेठजी के सम्बन्धों के बारे में भी मेरे कानों में ध्वनि आ गई थी ।

मैंने जब ये बातें उस सेठ को एक विशेष मुद्रा बनाकर कही तो वह आश्चर्यचकित रह गया और मुझे सत्कार का सर्वश्रेष्ठ भविष्यवक्ता मान बैठा और सबके सामने मेरे चरणों में सिर रख पांच हजार रुपये भेंट कर दिये, फिर उसने भविष्यकाल से संबंधित प्रश्न पूछा तो मैंने कुछ भी कह दिया पर वह पूरी तरह से आश्चर्यचकित था, अतः उसने इन बातों को भी सही मान लिया, उसने मुझे अपने घर भी चलने के लिये प्रेरित किया और कहा कि आप लक्ष्मी वृद्धि के लिये अनुष्ठान करें, आप महान् विद्वान् हैं, यदि एक

लाख भी खर्च होगा तो मैं करूँगा, मैंने हा भर ली, यद्यपि मुझे अनुष्ठान नहीं आता है परन्तु वह मुझसे प्रभावित है और मेरे कहने पर वह खर्च करने को तैयार है।

इस प्रकार नित्य तीन चार हजार की आय हो गई है, आर्थिक दृष्टि से सम्पन्नता बढ़ती जा रही है, परन्तु मैं अन्दर-ही-अन्दर खोखला होता जा रहा हूँ, मेरे जीवन की सारी खुशिया छिन गई हैं, वह पिशाचिनी पन्द्रह बीस दिनों के बाद रात्रि को आती है और ज्वरदस्ती से मेरे साथ सम्भोग करके चली जाती है, मुझे ऐसा लग रहा है कि मैं इससे पिण्ड नहीं छोड़ा पाऊँगा।

मैं ससार की दृष्टि से सफल हूँ, सम्पन्न हूँ, विद्वान् और त्रिकालज्ञ हूँ, बड़े से बड़ा सेठ मेरे सामने गिड़गिड़ाता है इससे मेरे 'अह' की तुष्टि होती है, परन्तु फिर भी मैं मन से प्रसन्न नहीं हूँ। चित्त में शान्ति नहीं है और जीवन में किसी प्रकार का उमंग या उत्साह नहीं रह गया है।

मैं समझ गया कि आपने मुझे शिष्य क्यों नहीं बनाया, आपने मुझे क्यों फटकारा था, इस साधना को करने के लिये बार-बार क्यों मना किया था, यह अब मेरी समझ में आया है, मैं वास्तव में ही अघम और पापी हूँ, ब्राह्मण न रहकर कसाई-सा हो गया हूँ अतः इन अपवित्र होठों से आप जैसे महापुरुष का नाम लेना भी मैं पाप समझता हूँ।

पर, आप दयालु हैं, कई प्रकार की सिद्धियों के स्वामी हैं, मैं दीन-हीन आपके चरणों की रज हूँ, मेरी एक विनती है कि आप कोई ऐसा तरीका बताइये जिससे कि मैं इससे मुक्ति पा सकूँ। मैं इस साधना से पूर्व जैसा था उसमें ज्यादा सुखी था, मैं वापस वैसा ही बनना चाहता हूँ, इस पिशाचिनी से मुक्ति चाहता हूँ और यह मुक्ति आपके अलावा और कोई नहीं दे सकता।

मेरा प्रत्येक क्षण दुःखमय बन गया है। हर क्षण उसके आने की आशका रहती है और उससे सम्भोग से मेरा शरीर परत हो जाता है और ऐसा लगता है जैसे शरीर का खून निचुड़ गया हो, इस ग्लानि में शायद मैं ज्यादा जी भी नहीं सकूँगा और मरने के बाद भी मेरी आत्मा भटकती ही रहेगी।

यह पत्र दुखी हृदय से लिख रहा हूँ, पूरा पत्र रोते सिसकते हुए लिखा है, मैं एक बार—केवल एक बार आपके द्वार पर भिखारी के रूप में आना चाहता हूँ, केवल इसलिये कि आप मुझे इस साधना से मुक्ति दिला सकें। कोई ऐसी विधि बतायें जिससे कि मैं इस सिद्धि से मुक्ति पा सकूँ और सामान्य मानव बन सकूँ।

मैं आपका कोई हित नहीं कर सका हूँ। मैं किसी भी योग्य नहीं हूँ, मैं आपका शिष्य कहलाने के काबिल नहीं हूँ, पर फिर भी ब्राह्मण हूँ और आप ब्राह्मणों पर कृपा करने वाले हैं इससे भी ज्यादा आपमें मानवता है, दया है, शक्ति है, और ऐसी सिद्धियाँ हैं जिससे आप मुझे वापिस मानव बना सकते हैं, यदि आप ऐसा कर सकेंगे तो मेरा सारा जीवन आपका कृतज्ञ रहेगा और मेरा रोम-रोम आपके उपकारों से ऋणी रहेगा।

अकिंचन

(मधुसूदन शर्मा)

अष्ट लक्ष्मी साधना

आदरणीय पण्डितजी,

सादर पाय लागन ।

आपको जब यह पत्र लिख रहा हू तो हृदय मे एक आनन्द की अनुभूति हो रही है, ऐसा लगता है जैसे मैं अपने जीवनदाता को पत्र लिख रहा होऊँ, और यह बात सही भी है क्योंकि आपने मुझे ही नहीं, मेरे पूरे परिवार को जीवनदान दिया है। मैं और मेरा परिवार तो एक प्रकार से भूतक प्राय हो गया था, परन्तु शायद हमारे पूर्वजों का पुण्य वाकी था जिससे कि मेरा आप जैसे दिव्य पुरुष से सम्पर्क हो सका और वापिस जीवन दान प्राप्त हो सका

आप अत्यधिक व्यस्त हैं, और आपके जीवन का प्रत्येक क्षण कीमती और सार्वजनिक हो गया है, दिल्ली मे आपके आने पर मैंने उमड़ती हुई भीड़ को देखा है और उन लोगों के मन मे आपसे मिलने की जो चाह और तड़फ होती है उसको मैंने अनुभव किया है, मेरी इच्छा बराबर यह रहती है कि मैं आपसे हर महीने भेंट करूँ परन्तु आप जैसे महापुरुष का दर्शन इतना जल्दी हो जाय ऐसा हमारे भाग्य मे कहा है ?

यह बात मैं इसलिए लिख रहा हूँ कि आपके पास सैकड़ों पत्र आते हैं और नित्य सैकड़ों व्यक्तियों से भेंट करते हैं, इसलिए शायद हमारा स्मरण आपको न रहा हो, परन्तु मैं और मेरा परिवार आपको एक क्षण के लिए भी नहीं भूला है।

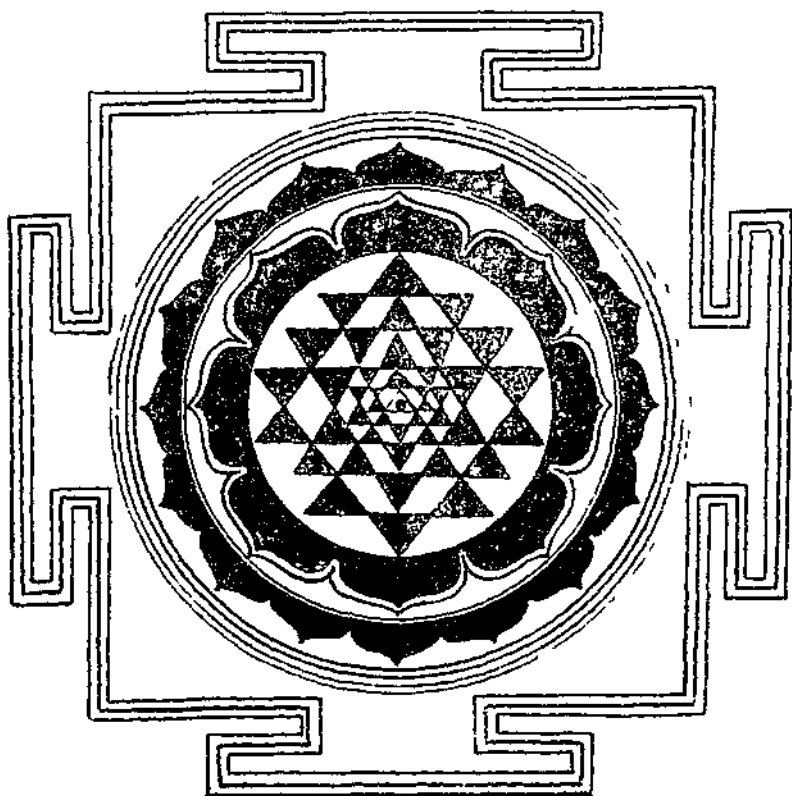
हम चार भाई हैं और पीढ़ियों से हमारे यहाँ जवाहरात का व्यापार होता है। हमारे पूर्वज इस व्यापार मे अत्यधिक प्रसिद्ध थे और उन्होंने जो सम्मान और शौरव अपनी जाति मे प्राप्त किया वह दुर्लभ है। हमने अपने परिवार मे जब आख खोली तो चारो तरफ वैभव बिखरा हुआ था, हमारा लालन-पालन अत्यन्त ही शान-शोक्त के साथ हुआ। मैं चारो भाइयों मे सबसे बड़ा हूँ और इसलिए परिवार की पूरी जिम्मेवारी मेरे ऊपर ही रही है, यद्यपि दिल्ली मे हम चारो भाई अलग कोठियों मे रहते थे परन्तु हमारा व्यापार संयुक्त था और हमारी मुख्य दुकान दिल्ली मे थी तथा बम्बई, मद्रास, कलकत्ता, न्यूयार्क आदि मे भी हमारी दुकानें थी।

हमारा जीवन अत्यन्त वैभव के साथ चल रहा था, हम अग्रवास हैं और लक्ष्मी पुत्र हैं, हमारे जीवन और प्रतिष्ठा का मुख्य आधार लक्ष्मी ही है, परन्तु एकदिवस

ऐसा आया कि हम निरन्तर नुकसान में होते गए और जितना अधिक प्रयत्न क-
उतना ही ज्यादा नुकसान होता गया। इस प्रकार नुकसान सहन करते गए, परन्तु
प्रकार स्थिति होते-होते एक दिन ऐसा भी आ गया जब हमें महसूस हुआ कि हम इ-
अधिक घाटे में जा रहे हैं कि यदि कुछ उपाय नहीं किया तो शायद दिवालिया बन
पड सकता है।

हमने अपने खर्चे घटा लिए, पूरे परिवार में व्यक्तिगत कार्य के लिए वीस-वां
कारे थो वे वेच दी, और एक कार रही, सैकड़ों नौकर-चाकर हटा देने पड़े, मुर्न-

श्री यन्त्र

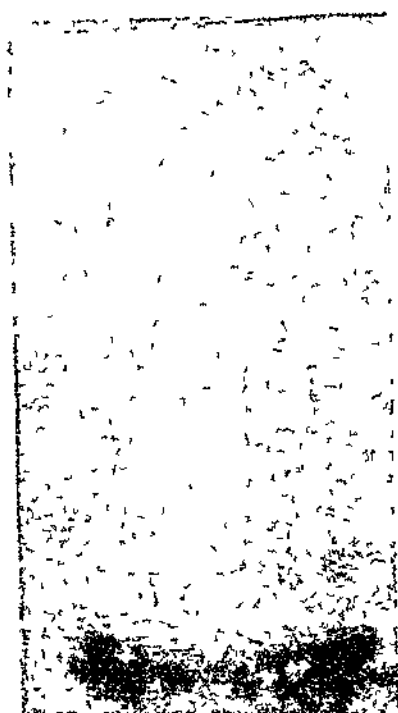


धीरे-धीरे किनारा करते गए, और मजबूरी से हमें कलकत्ता की दुकान बन्द कर देनी पड़ी, इसके बाद मद्रास की दुकान बन्द हो गई, चार महीने बाद हमें बम्बई की दुकान को भी बन्द करने के लिए विवश होना पड़ा। इस प्रकार हमारे पूरे परिवार में केवल एक दिल्ली की दुकान ही बाकी रही, परन्तु फिर भी दुर्भाग्य ने हमारा पीछा नहीं छोड़ा और एक ही सौदे में चालीस लाख का घाटा खाना पड़ा, फलस्वरूप हमें तीन कोठिया गिरवी रख देनी पड़ी, मेरा दिमाग खराब हो रहा था, मैं समझ नहीं पा रहा था कि क्या करूँ, जितना ही ज्यादा हाथ पैर मार रहा था उतनी ही ज्यादा असफलता हाथ लग रही थी।

इसी बीच एक प्रसिद्ध महाराजा के जवाहरात विक्रेता की बात सुनायी दी, मैं वहाँ गया और उन जवाहरातों को अपनी दोनों कोठिया गिरवी रखकर खरीद लिया, परन्तु तीसरे दिन ही उन जवाहरातों की चोरी हो गई, यह मेरे जीवन का सबसे बड़ा आघात था और उसने मुझे खाट पर पटक दिया।

इन प्रकार दो वर्षों में मैं धनपति से कर्जदार हो गया। मेरी चारों कोठिया गिरवी रख दी गई थी, हम चारों भाई एक छोटे से मकान में किरायेदार बन कर रहने लगे थे, एकमात्र कार भी विक्रि गई थी और एक दिन जब हमने हिसाब लगाया तो ज्ञात हुआ कि हम पर कुल मिलाकर एक करोड़ का कर्जा है।

जिस प्रकार से स्थिति चल रही थी उस हिसाब से हम एक लाख एक हजार भी देने की स्थिति में नहीं थे, मेरी आखों के आगे अंधेरा-सा छा गया। परिवार दयनीय स्थिति में आ गया था, समाज में हमारी प्रतिष्ठा कमजोर हो गई थी, हम झूठी शान-शौकत भी नहीं रख पा रहे थे, हम चारों उस दुकान पर बैठते, दुकान में कुछ माल ही नहीं था तो फिर ग्राहक क्या आते, इस प्रकार धीरे-धीरे मैं बीमार पड़ने लगा और मुझे पहला 'हार्ट अटैक' हुआ जिससे मैं मरते-मरते बचा।



फनरघारा देवी

इन दो वर्षों में मैं सैकड़ों ज्योतिषियों, तांत्रिकों, मांत्रिकों आदि के पास गया और उन्होंने जो कुछ कहा वह मैंने किया, परन्तु कोई भी स्थिति सुधार नहीं सका। मैं निरन्तर कर्जों में डूबता गया और एक दिन मैंने आत्महत्या करने का निश्चय कर लिया।

आप विचार कर सकते हैं कि ऐसा कठोर निर्णय मैंने कितने दुखी मन से लिया होगा। उस दिन बाजार जाकर मैं नींद की गोलियां ले आया, अपने परिवार के नाम एक पत्र लिखा जिसमें इस दुष्ट स्थिति की जिम्मेवारी अपने ऊपर ली और उन सबसे क्षमा याचना की, एक पत्र मैंने अपनी पत्नी के नाम लिखा जिसमें मैंने इस गरीबी की स्थिति का जिम्मेवार अपने आप को ठहराया, क्योंकि घर में बड़ा मैं ही था अतः निर्णय भी मैं ही लेता था और मेरे ही निर्णयों से परिवार इस स्थिति तक पहुँचा था।

मैंने दोनों पत्र सिरहाने रखकर शाम को सभी वक्कों को प्यार कर भाइयों से जी भर कर मिल कर अपने कमरे में आ कर सो गया और नींद की पन्द्रह से ज्यादा गोलियां खा ली। मैंने यह निश्चय कर लिया था कि यह रात मेरी अन्तिम रात है।

परन्तु दुर्भाग्य मेरा पीछा नहीं छोड़ रहा था। रात के तीन बजे मेरी आँखें पथरा गईं, गले में खरास पैदा हो गई और धरधराहट की ध्वनि से पूरा परिवार जाग गया, उसी समय मुझे उल्टी हो गई और मैं चाहते हुए भी नहीं मर सका। मुझे मजबूरी से दूसरे दिन का सूर्य देखना पड़ गया, पर मेरी इस घटना से पूरा परिवार आशंकित हो गया और सभी अपने ऊपर मौत को मडराते हुए देखने लगे।

दूसरे ही दिन सयोग से हमारे किसी समय रहे हुए श्री मूलचन्द दलाल आये, वे केवल मिलने के लिए ही आये थे। उन्होंने पाँच साल पहले दलाली का कार्य छोड़ दिया था और बम्बई में अपनी स्वयं की दुकान खोल दी थी, वे किसी कारणवश दिल्ली आये थे। हमारे घर की स्थिति थोड़े-बहुत रूप में उन्हें मालूम थी, पर उस दिन जब मेरे घर आये और मेरी स्थिति को देखा तो वे अनुभवी होने के कारण सब कुछ भाप गये, उन्होंने मुझे बताया कि आप घबरावें नहीं और एक बार जोधपुर जाकर पण्डित जी से सम्पर्क स्थापित करें, केवल मात्र वे ही आपको इस विपत्ति से छुटकारा दिला सकते हैं या कोई रास्ता दिखा सकते हैं।

पर मैं पूरी तरह से दूट गया था, मुझे किसी भी ज्योतिषी या तन्त्र-मन्त्र पर भरोसा नहीं रहा था, पर जब उन्होंने बहुत हठ किया और बताया कि मैं जो कुछ बन सका हूँ वह उनकी ही कृपा से बन सका हूँ, दलाली का कार्य छोड़ने के बाद मैंने उनकी सलाह के अनुसार ही अपनी दुकान खोली थी और आज मैं जो कुछ हूँ इसमें उनका बहुत बड़ा योगदान है, अतः आप एक बार उनकी राय अवश्य ले लें। यदि आप कहे तो मैं आपके साथ चलने के लिए तैयार हूँ।

एक सप्ताह बाद जब मैं कुछ स्वस्थ हुआ तो उस दलाल को साथ लेकर मैं जोधपुर आपके निवास स्थान पर पहुँचा। वह दलाल जो कि उस समय तक एक सफल धनपति बन चुका था आपसे परिचित था, अतः उसके आग्रह से आपसे मिलने का

सौभाग्य प्राप्त हुआ, मैंने आपके सामने अपनी सारी कहानी सुना दी, आप चुपचाप सुनते रहे ।

मैंने अपने जीवन के वैभव का भी सही वर्णन किया था और आपके मिलने के समय में जिस स्थिति में था उसका सही-सही सत्य विवरण आपके सामने प्रस्तुत कर दिया था, शायद आप मेरी सत्यता से पसीज गए थे, या मेरा समय अच्छा आने वाला था अतः आपने मुझे सान्त्वना दी और बताया कि 'अष्ट लक्ष्मी साधना' से आप वापिस उसी स्तर पर पहुँच सकते हैं जिस स्तर पर आप थे ।

मुझे आपके कथन पर बिल्कुल विश्वास नहीं हुआ था, परन्तु आपका व्यक्तित्व मुझे प्रभावित कर रहा था और मेरा अन्तरमन इस बात की साक्षी दे रहा था कि यदि कल्याण हो सकता है तो केवल इसी व्यक्ति के द्वारा ही मभव है अन्य कोई उपाय नहीं है । मैं जिस समय आपसे मिला था, उस समय आश्विन महीना चल रहा था, आपने कहा कि दीपावली पर मैं तुम्हारे लिए अष्ट लक्ष्मी साधना करवा सकता हूँ और मुझे विश्वास है आने वाले समय में आप पुनः श्रेष्ठ स्थिति पर पहुँच सकेंगे ।

आपके कथन पर मेरे साथ आये दलाल को बहुत अधिक विश्वास था, अतः उसने निवेदन किया कि आप इनके लिए 'अष्ट लक्ष्मी साधना' यही जोधपुर में ही सम्पन्न करा लें । ये पति-पत्नी उसमें भाग लेने के लिए यही पर आ जायेंगे । यद्यपि आप उस समय अधिक व्यस्त थे, परन्तु हमारे अनुरोध को आपने मान लिया था, यह मेरे लिए सौभाग्य की बात थी । आपने यह भी कहा था कि साधना में पति-पत्नी भाग लें यह अनिवार्य नहीं है, परन्तु मैंने मन में सोचा कि यदि दिल्ली में कुछ दिन और रहा तो शायद पागल हो जाऊँगा, इसकी अपेक्षा तो कुछ दिन जोधपुर में ही बिता दिए जाय । आपने जो व्यय बताया था मेरे पास तो उसका सौवा हिस्सा भी नहीं था, परन्तु दलाल श्री मूलचन्द जी को आप पर अत्यधिक विश्वास था अतः उन्होंने सारा खर्च सहन करने का निश्चय किया ।

आपने अपने कार्यक्रम को देख कर नवरात्रि में ही इस अनुष्ठान को सम्पन्न करने की स्वीकृति दी, फलस्वरूप मैं तीसरे ही दिन अपनी पत्नी के साथ जोधपुर आ गया था, मूलचन्द जी भी एक दिन के लिए बम्बई जाकर लौट आये थे ।

मैंने मन-ही-मन सोचा कि पण्डितजी जो भी अनुष्ठान करायेंगे उसे मैं अपनी डायरी में नोट करता रहूँगा, यदि यह सफल हो गया तो यह आलेख मेरी पीढ़ियों के लिए लाभदायक ही रहेगा ।

आपने आश्विन शुक्ल प्रतिपदा से इस अनुष्ठान को प्रारम्भ किया । जहाँ तक मुझे स्मरण है ग्यारह पण्डितों ने इसमें भाग लिया था, मैंने जब आपसे अष्ट लक्ष्मी के बारे में पूछा था तो आपने बताया था कि लक्ष्मी प्राप्ति और स्थायी लक्ष्मी के लिए अष्ट लक्ष्मी साधना सर्वश्रेष्ठ है । इसमें (१) धन लक्ष्मी (२) धरा लक्ष्मी (३) वाहन लक्ष्मी (४) यश लक्ष्मी (५) व्यापार लक्ष्मी (६) आयु लक्ष्मी (७) सन्तान लक्ष्मी (८) दारिद्र्य विनाशक अखण्ड लक्ष्मी, इन अष्ट लक्ष्मियों की पूजा होती है और

इनसे सबधित साधना सम्पन्न होती है, जिससे कि जीवन में किसी भी प्रकार का अभाव न रहे ।

आपने ग्यारह कलश स्थापन किये थे और आठ तख्ते बिछाकर उन पर आठ यत्र चावलो से बनाये थे जो कि निम्न प्रकार थे

१ लक्ष्मी यत्र, २ श्री यत्र, ३ कनकधारा यत्र, ४ ऐश्वर्य यत्र, ५ वरदा यत्र, ६ स्थायित्व यत्र, ७ घटाकरण यत्र, ८ कुवेर यत्र ।

इन आठो यत्रों पर क्रमशः अष्ट लक्ष्मी की अलग-अलग चादों की प्रतिमाएँ बनाकर स्थापित की थी, और प्रत्येक यत्र की विस्तार से पूजा की थी, इसके साथ-ही-साथ आपने प्रत्येक यत्र को स्फुरण कर मन्त्र सिद्ध प्राण प्रतिष्ठा युक्त बनाया था । आपने प्रत्येक पण्डित को अलग-अलग मन्त्र जपने के लिए दिया था, और तीन पण्डितों को कनकधारा मन्त्र जपने की आज्ञा दी थी । मैं उन पण्डितों के पास बैठा था और उनसे कनकधारा विनियोग ध्यान और मन्त्र नोट कर लिया था ।

कनकधारा सकल्प

ओम् विष्णु-विष्णु तत्त्वद० मम सकल विघ्न विजय श्री सुख शान्ति, धन धान्य, यश, पुत्र पीत्रादि प्राप्तये स्मज्जन्म जन्मान्तरीय कुलार्जित संचित महादुःख दारिद्र्य-तादि शान्तये व कनकधारा यत्र पूजन महः करिष्ये ॥

कनकधारा विनियोग

ओम् अस्य श्री कनकधारा यत्र मन्त्रस्य, श्री आचार्य श्री शंकर भगवत्पाद ऋषि श्री भुवनेश्वरी ऐश्वर्यदात्री महालक्ष्मी देवता, श्री बीज ह्रीं शक्ति, श्री विद्या रजोगुण, रसना ज्ञानेन्द्रिय रस वाक् कर्मेन्द्रिय मध्यम स्वर, द्रव्य तत्त्व, विद्या कला, ऐं कीलन, व्रू उत्कीलन प्रवाहिनी सचय मुद्रा, मम क्षेमस्थैर्यायुरारोग्या मि वृद्धयर्थे श्री महालक्ष्मी अष्ट लक्ष्म्ये भगवती दारिद्र्य विनाशक धनदा लक्ष्मी प्रसाद सिद्धयर्थे च नमोयुक्त वाग् बीज स्व बीज लोम-विलोम पुटितोक्त त्रिभुवन भूतिकरी प्रसीद मह्यम्माता मन्त्र जपे विनियोग

कनकधारा ध्यान

सरसिज नियये सरोज हस्ते
धवल तमामुक गन्ध माल्य शोभे
भगवति हरि वल्लभे मनोज्ञे
त्रिभुवन भूति करि प्रसीद मह्यम् ॥

कनकधारा-मन्त्र

ओम् व श्री व ऐं ह्रीं श्री वली कनकधाराये स्वाहा ।

मैं तो केवल कनकधारा से सबधित मन्त्र ही अपनी डायरी में लिख पाया था परन्तु जैसा कि मुझे याद है प्रत्येक लक्ष्मी से सम्बधित अलग विनियोग, अलग ध्यान

तथा अलग मन्त्र था, इस प्रकार अष्ट लक्ष्मी के आठ मन्त्र ध्यान, और विनियोग थे, जो कि प्रत्येक पण्डित अलग-अलग यज्ञ के सामने बैठकर सवधित अनुष्ठान कर रहे थे ।

आठ दिन आपके निर्देशन में कार्य होता रहा, आपके सान्निध्य में जिन पण्डितों ने जिस प्रकार से कार्य किया था उनकी सराहना करता हूँ, वास्तव में—उन्होंने समर्पण भाव से कार्य किया था, आपकी अनुपस्थिति में उन पण्डितों से जब आपकी अर्चा चलती तो वे आपके प्रति अत्यन्त ही उच्च भाव रखते और अपना मौभाग्य मान रहे थे कि आपके निर्देशन में उन्हें कार्य अनुष्ठान करने का मौभाग्य हो रहा है ।

नवें दिन आपने यज्ञ किया जिसमें विशेष मन्त्रों से आहुतिया दी गई थी, आपने जितनी सामग्री यज्ञ के लिए मगाई थी उसे देख आश्चर्यचकित रह गया था कि इतनी सामग्री का संयोजन आपने किस प्रकार से किया होगा ?

यज्ञ समाप्त होने के बाद मैं अपनी पत्नी सहित घर चला आया था, आपने एक 'अष्ट लक्ष्मी यज्ञ' मुझे दिया था जिसे अपनी दुकान पर स्थापित करने के लिए कहा था, मैंने वह यज्ञ अपनी दिल्ली स्थित दुकान में स्थापित कर दिया था, परन्तु फिर भी मेरा मन सशय ग्रस्त बना रहा था, क्योंकि मैं जब अपने परिवार की स्थिति देखता तो मेरी आँखों में आसू तैर जाते ।

परन्तु वास्तव में ही आप मन्त्रपूत हैं । यज्ञ स्थापित करने के दस दिनों बाद ही एक अमेरिकन जवाहरात व्यापारी से भेंट हुई और उसने एक सौदे में सहयोग का प्रस्ताव रखा । मैं आश्चर्यचकित था कि इस समय भारत में चार-पाच अरबपति फर्म हैं फिर वह मुझ से ही सौदे के लिए क्यों समझौता करना चाहता है, जबकि मैं तो पूरी तरह से टूटा हुआ था, परन्तु फिर मुझे मालूम हुआ कि उसने एक बार न्यूयार्क स्थित दुकान से सौदा खरीदा था और हमारी ईमानदारी उसके चित्त पर अंकित हो गई थी ।

उस एक सौदे में ही हमें बीस लाख रुपये मिले । इसके बाद मेरा कुछ हौसला खुला और उस अमेरिकन जौहरी के साथ भारत के पाँच-छ राजघरानों से सौदे हुए और प्रत्येक सौदे में तीस से चालीस लाख का लाभ हुआ, इस प्रकार उस यज्ञ को स्थापित करने के दो महीनों के भीतर ही एक करोड़ का लाभ हो गया था ।

मैं ही नहीं पूरा परिवार आश्चर्यचकित था, और हमारी प्रत्येक सास के साथ आपका नाम निकलता था । इस अनुष्ठान को सम्पन्न हुए एक साल बीत गया है और आज मैं वापस उसी स्थिति में हूँ जिस स्थिति में मैं पहले था । मैंने अपनी चारों कोठिया छुड़वा ली हैं जो कि गिरवी रखी हुई थी, पुन कलकत्ता, मद्रास, बम्बई और न्यूयार्क की दुकानें खुल गई हैं और आर्थिक दृष्टि से मैं अत्यधिक समृद्ध हूँ, समाज में मेरा नाम आदर के साथ लिया जाने लगा है, और यह आपकी कृपा है कि मैं कुछ दिनों पूर्व जवाहरात सघ का अध्यक्ष चुना गया हूँ ।

इस एक वर्ष में मुझे प्रत्येक सौदे में लाभ हुआ है, मैं जिस सौदे को भी मिट्टी

समझता उसी सौदे में लाभ हो जाता, और इस एक वर्ष में मैं पुनः सम्पन्नता की स्थिति में पहुँच गया हूँ।

पंडितजी मैं किन शब्दों में आपका आभार व्यक्त करूँ, मैं और मेरा परिवार तो मरा हुआ था, आर्थिक दृष्टि से हम भिखारी बन गए थे, सामाजिक दृष्टि से हम अयोग्य ठहरा दिये गए थे और स्वास्थ्य की दृष्टि से मैंने आत्महत्या का प्रयास कर लिया था, ऐसी स्थिति से इस एक वर्ष में जिस स्तर पर पहुँचा हूँ वह सब आपके ही प्रयत्नों का फल है। आपका आशीर्वाद मेरा सहायक रहा है।

वह 'अष्ट लक्ष्मी यत्र' मेरी दुकान पर स्थापित है, और इस समय पुनः चार सौ से ज्यादा नौकर तथा सौ से अधिक दलाल मेरे व्यापार में सहायक हैं, यह सब कुछ आपका ही प्रभाव है, मेरे शरीर का रोम-रोम आपका ऋणी है, और जीवन भर ऋणी रहेगा, आज जो कुछ भी मेरी सम्पत्ति है वह आपकी है, उस पर आपका ही अधिकार है। मैं तो केवल निगरानी रखने वाला हूँ, ऐसा ही भाव मेरे मन में है, इस सम्पत्ति का आप जिस प्रकार से भी उपयोग करना चाहें कर सकते हैं।

अनुष्ठान सम्पन्न होने पर मैं आपको कुछ भी दक्षिणा नहीं दे सका था और आज दक्षिणा देने की बात कहते हुए सकोच और हिचकिचाहट हो रही है कि आप जैसे पुण्यात्मा को मैं दे ही क्या सकता हूँ ? मेरी सामर्थ्य ही क्या है ? मैं तो उस दिन भी आपके सामने भिखारी की तरह खड़ा था और आज भी आपके सामने भिखारी के रूप में ही उपस्थित हूँ।

आप तो शायद मुझे भूल गये होंगे क्योंकि आप प्रत्येक क्षण क्रियाशील हैं, मेरे जैसे सैकड़ों धनिक आपके चरणों में बैठे हुए हैं, अतः मेरा स्मरण आपको शायद ही रहा होगा, परन्तु मैं, मेरा परिवार, और मेरी आने वाली पीढ़ियाँ आपको एक क्षण के लिए भी नहीं भुला पायेंगी, हमेशा आपके ऋणी हूँ और ऋणी रहेगा।

मैं इस पत्र के माध्यम से, अपनी आत्मा से निवेदन कर रहा हूँ कि मेरी इस समय जितनी भी सम्पत्ति है वह सब आपके चरणों में रखी हुई है, आप आज्ञा दें, आप जितनी भी सम्पत्ति को, जिस रूप में भी व्यय करने की आज्ञा देंगे वह मेरे लिए बिना हिचकिचाहट के स्वीकार्य होगी।

मेरे दो स्वार्थ हैं—पहला स्वार्थ तो यह है कि मैं आपके चरणों में उपस्थित होना चाहता हूँ और इस उम्मीद के साथ उपस्थित होना चाहता हूँ कि आप मेरी झोपड़ी में पधारें और आज्ञा दें कि जिससे मैं और मेरा परिवार धन्य हो सके, दूसरा स्वार्थ यह है कि आप इसी प्रकार के तीन अनुष्ठान और सम्पन्न करावें जिससे कि इस प्रकार के यत्र बम्बई, मद्रास, तथा न्यूयार्क की दुकान में स्थापित किए जा सकें।

इस घोर अनास्था के युग में केवल आप ही ऐसे प्रकाश स्तम्भ हैं जिनके प्रकाश में हम लोग आगे बढ़ सकते हैं। आपका स्नेह, आपकी कृपा और आपकी मधुरता मेरे हृदय पर अंकित है। यद्यपि मैं शिष्य कहलाने के काबिल नहीं हूँ फिर भी मैं आपको

गुरु शब्द से सम्बोधित करना चाहता हूँ और मुझे आशा है आप इस अकिंचन के अनुरोध को ठुकरायेंगे नहीं।

मैं और मेरा पूरा परिवार आपके प्रति श्रद्धानत है, कृतज्ञ है, ऋणी है। हमारा सब कुछ आपका है, हम आपके ही हैं। यह मैं अपनी आत्मा से, विचारों को और भावनाओं को व्यक्त कर रहा हूँ।

मुझे विश्वास है आप मेरे अनुरोध को स्वीकार करते हुए मुझे चरणों में उपस्थित होने की स्वीकृति देंगे जिससे कि मैं आपको आदर सहित अपनी कुटिया में लाकर अपने जीवन को और अपने परिवार के जीवन को घन्य कर सकूँ।

आपका ही—

(हेमचन्द्र अग्रवाल)

सम्मोहन साधना

पूज्य बाबा जी,

सादर दण्डवत् ।

बहुत समय बाद इस पत्र के द्वारा आपको याद कर रहा हूँ और अपना विनम्र प्रणाम इस पत्र के द्वारा भेज रहा हूँ। आपको मेरा स्मरण शायद ही होगा, परन्तु मैं आज से छ वर्ष पूर्व आपको हरिद्वार में मिला था जबकि आप वहाँ माताजी के साथ एक मास के प्रवास हेतु आये थे और गीता आश्रम में ठहरे थे, सबसे पहले मैं वही पर आपसे मिला था।

आपके वार्त्ते में मैंने कई साधुओं और सन्यासियों से सुन रक्खा था कि आप तांत्रिक क्षेत्र में निष्णात हैं साथ-ही-साथ मन्त्र साधना में भी आपने सर्वोच्च उपलब्धियाँ प्राप्त की हैं, मेरा कई बार विचार हुआ कि मैं जोधपुर आकर आपसे भेंट करूँ और अपने मन की व्यथा आपके सामने प्रकट करूँ, परन्तु प्रयत्न करने पर भी मैं उस तरफ नहीं आ सका। एक बार जब कुछ रूपों का जुगाड़ हुआ तब मैं जोधपुर आया था, परन्तु उस समय आप जोधपुर से बाहर थे इसलिये मिलना नहीं हो सका। मैं वहाँ एक सप्ताह तक हनुमान आश्रम में ठहरा था और नित्य आपके घर आकर पता करता परन्तु यही उत्तर मिलता कि अभी आप वापस नहीं लौटे हैं, लौटने का कोई निश्चित कार्यक्रम भी नहीं है, अतः मैं निराश हो वापस लौट आया था।

वचन से ही मैं ब्रह्मचारी रहा हूँ, घर गृहस्थ का मोह मुझे प्रारम्भ से ही नहीं रहा, मैंने अपने जीवन को ईश्वर भजन में ही बिता देने का निश्चय किया था, इसलिये मैंने साधु रूप धारण कर लिया था, परन्तु मेरे भगवे कपड़े पहनना व्यर्थ ही रहा, क्योंकि मैं चाहकर भी अपने चित्त को एकाग्र नहीं कर पाया और ईश्वर भजन की तरफ उन्मुख नहीं हो पाया, मैं साधारण कार्यों में लिप्त रहा और घन सचय करने की प्रवृत्ति मेरे मन में पनपती रही।

फिर मेरे मन में विचार आया कि मैं एक आश्रम स्थापित करूँ और उसके द्वारा जनता को मैं अपने विचारों से प्रेरित करूँ, जब भी मैं ऐसा सोचता तो अपने आप पर लज्जा आती, क्योंकि मुझमें कोई विशेष गुण नहीं था जिससे कि मैं इस उद्देश्य में सफलता प्राप्त कर सकता।

मैंने ऋषिकेश को ही अपना क्षेत्र चुन लिया, भगवे कपड़े पहनने के कारण रोटी की चिन्ता नहीं थी परन्तु मेरा मन पूरी तरह से उदास और निराशा से भरा हुआ था, मैं शाम को जब गंगा तट पर बैठता तो अपने आप पर ग्लानि आती कि मेरा जीवन एक प्रकार से व्यर्थ ही गया। न तो मैं सही रूप में गृहस्थ बन सका और न मैं साधु जीवन के उच्च आदर्शों को ही प्राप्त कर सका। एक प्रकार से मैं अन्न पर पलने वाला पशु बनकर रह गया, न मैं तत्र मत्र के क्षेत्र में किसी को गुरु बना सका और न आध्यात्मिक क्षेत्र में सफलता प्राप्त कर सका।

यहां पर बाहर से भी कई साधु और सन्यासी आते, नित्य साय गंगा-तट पर या गीता आश्रम में प्रवचन होते, हजारों लोग उन प्रवचनों को सुनने के लिये आते और वे मंत्र मुग्ध से प्रवचन सुनते रहते, कई साधु घंटों धारा प्रवाह बोलते। वे इस प्रकार तथ्यों को रखते कि जनता उनके पीछे दीवानी बनी रहती, यद्यपि मैं उन प्रवचनकर्त्ता के व्यक्तिगत जीवन से परिचित रहता। उनका जीवन किसी भी प्रकार से आदर्श नहीं था, वे व्यक्तिगत जीवन में कामुक, लोभी, और पतित थे, परन्तु जब वे प्रवचन देते तो पता नहीं उनके होठों पर कैसे सरस्वती आकर बैठ जाती कि वे बोलते ही रहते और श्रोता चुपचाप सुनते रहते। वे जो बात कहते उनका ज्ञान मुझे भी था परन्तु मैं उस ज्ञान को प्रवचन के माध्यम से सही रूप में नहीं रख पाता, यद्यपि मेरी इच्छा यही रहती कि मैं भी एक श्रेष्ठ प्रवचनकर्त्ता बनूँ, घंटों धारा प्रवाह भाषण देता रहूँ और मेरे प्रवचनों को जनता दत्तचित्त होकर सुनती रहे। मैंने एक दो बार प्रयास भी किया, परन्तु पांच-सात मिनट से ज्यादा नहीं बोल सका। मेरे मन की एक ही लालसा थी कि मैं श्रेष्ठ प्रवचनकर्त्ता बनूँ और श्रोताओं को अपने प्रवचन के माध्यम से सम्मोहित-सा कर दूँ जिससे कि वे मेरे प्रवचनों के लिये दीवाने रहे।

इसके लिये मैं कई प्रवचनकर्त्ताओं और साधुओं से मिला, परन्तु किसी ने भी मुझे सन्तुष्टि नहीं दी, जब मैं उनके जीवन को कुरेदता तो वे मुझसे भी ज्यादा पतित और पाखण्डी प्रतीत होते। एक प्रकार से मुझे साधु जीवन पर ही घृणा हो आई थी।

ऐसे ही ऊहापोह में एक दण्डी स्वामी ने मेरी समस्या को सुनकर आपसे मिलने की राय दी, और आपका पता भी दिया, परन्तु यह मेरा दुर्भाग्य रहा कि जोधपुर जाने पर भी आपके दर्शन नहीं हो सके। मैं अपने दुर्भाग्य को कोसता हुआ वापस लौट आया।

अचानक एक दिन गीता आश्रम के ब्रह्मचारी धीरेन्द्र स्वामी से बातों-ही-बातों में पता चला कि आप ऋषिकेश आये हुए हैं और लगभग एक बहाने तक वही गंगा के किनारे रहेंगे, मैं उस रात्रि को सो नहीं पाया, चाहता तो मैं यही था कि उसी समय आपसे मिलूँ, परन्तु रात्रि अधिक बीत जाने के कारण दूसरे दिन प्रातः आपसे मिलने का निश्चय किया।

दूसरे दिन मैं प्रातः आपके कक्ष में आया तो आप सन्ध्या ध्वन्दन से निवृत्त हो आसन पर बैठे हुए किसी पुस्तक को पढ़ रहे थे। मैंने आकर आपके चरणों में प्रणाम

किया, आपने एक क्षण के लिये मुझे देखा और बिना आशीर्वाद दिये पुन पुस्तक पढ़ने लग गये ।

मैं आध घंटे तक बैठा रहा, फिर मैंने आपका ध्यान अपनी तरफ आकर्षित करना चाहा तो आपने छूटते ही जवाब दिया कि यहाँ व्यर्थ ही आये हो, जब तक तुम्हारे मन से पाखण्ड और ढोंग दूर नहीं होगा तब तक कुछ भी उपलब्धि संभव नहीं है ।

मैं कुछ नहीं बोला, फिर थोड़ी देर बाद आपसे निवेदन किया कि मैं तो केवल आपसे मिलने के लिये ही आया हूँ और कोई प्रयोजन नहीं है ।

आपने हसकर जवाब दिया यहाँ पर भी असत्य बोल रहे हो तो आगे जीवन में क्या करोगे ? साथ-ही-साथ आपने बता दिया कि तुम अच्छा प्रवचन करना चाहते हो, मन की मसा यही है कि तुम्हारे भाषण से या प्रवचन से लोग प्रभावित हो और वे तुम्हें उच्च स्तर का साधु मान लें, जबकि तुम पतित, पाखण्डी और अवसरवादी हो ।

मैंने अपनी सारी रामकहानी आपके सामने रख दी । आपका ध्यान पुस्तक की तरफ था, मेरी बात आपने सुनी या नहीं, मैं नहीं कह सकता, पर मुझे आपको अपनी राम कहानी कहकर सन्तोष अवश्य हुआ, साथ ही आपने बिना मेरा प्रश्न जाने मेरे बारे में या मेरी इच्छा के बारे में जो कुछ कह दिया था उससे मैं यह तो जान गया कि आप विशिष्ट व्यक्ति हैं और मेरा भला आपके द्वारा हो सकता है ।

उस समय तो मैं लौट आया । परन्तु मैं इस अवसर को हाथ से जाने नहीं देना चाहता था, अतः मैंने निश्चय कर लिया कि गालियाँ खाकर भी आपकी सेवा करनी है और सेवा के द्वारा ही आपका मन जीतना है, जिससे कि जाने से पूर्व कुछ साधना प्राप्त हो सके ।

मैं नित्य प्रातः साथ आपके कक्ष में आता और यथासंभव सेवा करने का प्रयत्न करता । एक दिन आपके साथ गंगा तट पर विचरण करने का भी अवसर मिला ।

आपको संभवतः स्मरण होगा कि एक दिन एक विशिष्ट सन्यासी स्वामी प्रज्ञानन्द जी आपसे मिलने के लिये विशेष रूप से पधारे थे । उनके बारे में भीता आश्रम और ऋषिकेश में कई बातें प्रचलित थी कि वे विशिष्ट योगी हैं और अधिकांश समय ऋषिकेश से दस मील दूर एक पेड़ पर बैठकर साधना करते हैं । चौबीसों घंटे वे पेड़ पर ही रहते हैं, यद्यपि उनके कुछ शिष्य नीचे कुटिया में रहते हैं, परन्तु बहुत ही कम लोगो ने उन्हें पेड़ से नीचे उतरते हुए देखा था । वे कब मल-मूत्र विसर्जन करते हैं किसी को कोई ज्ञान नहीं था । जो भी साधु ऋषिकेश आता वह पैदल प्रज्ञानन्द जी के दर्शन करने अवश्य जाता, उनकी सिद्धियों के बारे में ऋषिकेश में काफी चर्चाएँ थी, परन्तु जब उस दिन वे स्वयं नियम तोड़कर पैदल आपसे मिलने के लिये आये तो ऋषिकेश के हजारों निवासी और साधु महात्मा आश्चर्यचकित रह गये, और उसी दिन ऋषिकेश को आपकी महानता के बारे में पता चला था । प्रज्ञानन्द जी लगभग चार घंटे आपसे एकान्त में बातचीत करते रहे । इसकी भनक पड़ते ही

आपके कक्ष के बाहर हजारों नागरिकों और साधुओं की भीड़ लग गई थी। जब वे बाहर निकले तो उनके चेहरे पर अपूर्व आभा विद्यमान थी। एक महात्मा ने उनसे जब आपके बारे में पूछा तो उन्होंने इतना ही उत्तर दिया कि मैं अपने गुरु भाई से मिलने के लिये आया था, विशेषकर ये भरे अग्रज हैं, अतः इनसे निर्देश लेने और कुछ सीखने के लिये ही आया था, इसके अतिरिक्त उन्होंने कुछ भी कहने से इन्कार कर दिया और तेज कदमों से अपने गन्तव्य की ओर चले गये।

उस दिन लोगो ने आपकी महानता के बारे में पहली बार जाना और उसके बाद तो चौबीसो घंटे आपके कक्ष के बाहर भीड़ लगी रही, इससे आप कुछ परेशान भी रहे, परन्तु इससे लाभ यह हुआ कि मुझे कुछ अधिक सेवा करने का मौका मिल गया।

जब आपके साधना समय में भी व्यवधान पड़ने लगा तो आपने घर जाने का निश्चय कर लिया। जिस दिन आपने यह निश्चय किया उसी दिन एक विशिष्ट सन्यासी आपसे मिलने के लिये आये थे, यद्यपि उनका नाम मुझे स्मरण नहीं है परन्तु बाद में मुझे कहा कि वे किसी समय आपके शिष्य रह चुके थे और आपसे मिलने के लिये विशेष रूप से यमुनोत्री से भी दूर अपने स्थान से आपसे मिलने के लिये आये थे। जब आप उनसे बातचीत कर रहे थे तब मैं भी सौभाग्य से उपस्थित था, उस दिन मेरा सौभाग्य ही था कि कक्ष में आपके शिष्य, आप, मैं और माताजी के अलावा और कोई नहीं था।

उन्होंने सम्मोहन साधना की चर्चा चलाई थी, तो आपने विस्तार से इस साधना के बारे में उन्हें समझाया।

आपने बताया कि सम्मोहन दो प्रकार का होता है, एक तो व्यक्ति सम्मोहन और दूसरा 'समूह सम्मोहन'। सम्मोहन के माध्यम से किसी भी व्यक्ति को अपने मन के अनुकूल बनाया जा सकता है, इस प्रकार का प्रयोग करने के बाद सामने वाले व्यक्ति को जो कुछ भी कहा जाता है वह उसी प्रकार से करता रहता है, उसकी सारी इच्छाएँ विचार और तर्क समाप्त हो जाते हैं, केवल उसका ध्येय सम्मोहनकर्त्ता के कथन का पालन करना रह जाता है।

दूसरा सम्मोहन 'समूह-सम्मोहन' होता है इसमें सर्वप्रथम स्वयं पर सम्मोहन करना होता है। फिर वह सम्मोहनकर्त्ता जहाँ तक दृष्टि डालता है उस दृष्टिपथ में जितने भी लोग होते हैं वे सब सम्मोहित से रहते हैं, इस सम्मोहन के द्वारा विशाल भीड़ भी सम्मोहित की जा सकती है, और उस भीड़ से मनचाहा कार्य लिया जा सकता है, उस समय उस भीड़ की इच्छा और तर्क समाप्त हो जाते हैं, केवल वह सम्मोहनकर्त्ता की इच्छाओं का दास बन जाती है, ऐसे समय में यदि कोई साधु या सन्यासी प्रवचन करता है। तो सामने चाहे हजारों, लाखों व्यक्ति बैठे हों, वे चुपचाप उस प्रवचन को सुनते रहते हैं चाहे वह प्रवचन नीरस हो, परन्तु उस भीड़ को वह प्रवचन अद्वितीय लगता है और वह भीड़ यही चाहती है कि इस प्रकार बैठे रहे और सुनते रहे। उस समय

उनकी सारं ज्ञानेन्द्रिया और कर्मेन्द्रिया उस सम्मोहनकर्त्ता के अनुकूल बन जाती हैं तथा ऐसे समय वह जो भी आदेश या सलाह देता है भीड़ उस सलाह को मानने में प्रसन्नता अनुभव करती है।

आपने आगे समझाते हुए बताया कि यदि किसी व्यक्ति को जन मानस पर अपना नियंत्रण स्थापित करना है, या जन मानस को अपने नियंत्रण में रखना है, या उसे अपना अनुयायी बनाना है तो इस प्रकार की साधना सर्वश्रेष्ठ रहती है, परन्तु इसमें इस बात का ध्यान रखा जाना चाहिए कि भीड़ को यह मालूम नहीं होने देना चाहिए कि आपने उस भीड़ पर सम्मोहन किया है।

इसके बाद आपने इस साधना की क्रिया भी अपने शिष्य को समझाई थी, आपने बताया था कि इस प्रकार की साधना शुक्ल पक्ष की पचमी से प्रारम्भ होती है और इसमें एक महीना लग जाता है।

सर्वप्रथम पचमी को प्रातः उठकर स्नानादि कर पोली धोती पहन लेनी चाहिए, इसके अलावा शरीर पर अन्य किसी भी प्रकार का वस्त्र नहीं होना चाहिए। सूर्योदय से पूर्व ही पूर्व दिशा की ओर किसी भी वट वृक्ष या आक के वृक्ष को निमग्नित कर उसकी एक डाली तोड़कर ले आनी चाहिए, यह डाली हरी होनी चाहिए।

तत्पश्चात् सूर्योदय से पूर्व ही नदी तट पर जाकर कमर तक पानी में खड़े होकर दायें हाथ में वह डाली ले ले और दाहिने हाथ में मूंगे की माला ले ले। इस माला में चौपन मनके होने चाहिए, जो कि मूंगे के मनके होते हैं, मूंगा रत्न लाल रंग का होता है। और ज्योतिष की दृष्टि से इसे मंगल का रत्न माना जाता है।

इसके बाद निम्नलिखित मन्त्र की इक्कीस मालाएँ उसी जल में खड़े-खड़े जपनी चाहिए, खड़े होते समय पानी कमर तक होना चाहिए और पूर्व की तरफ मुह करके खड़ा होना चाहिए। चौपन मन्त्र जपने पर एक माला कही जाती है, यदि नदी नहीं हो तो तालाब में या अपने घर में पानी का कुण्ड बनाकर उसमें खड़े होकर भी यह साधना की जा सकती है, परन्तु इस बात का ध्यान रखें कि जब तक इक्कीस मालाएँ समाप्त न हो जाय तब तक किसी से भी बातचीत न करें और कितना ही जरूरी काम हो पानी के बाहर न निकलें, इसके अलावा किसी की आवाज आने पर या प्रश्न पूछे जाने पर भी जवाब न दें, केवल मुह से स्फुटित रूप में मन्त्र जप करते रहे। यह प्रयोग तीस दिन का होता है।

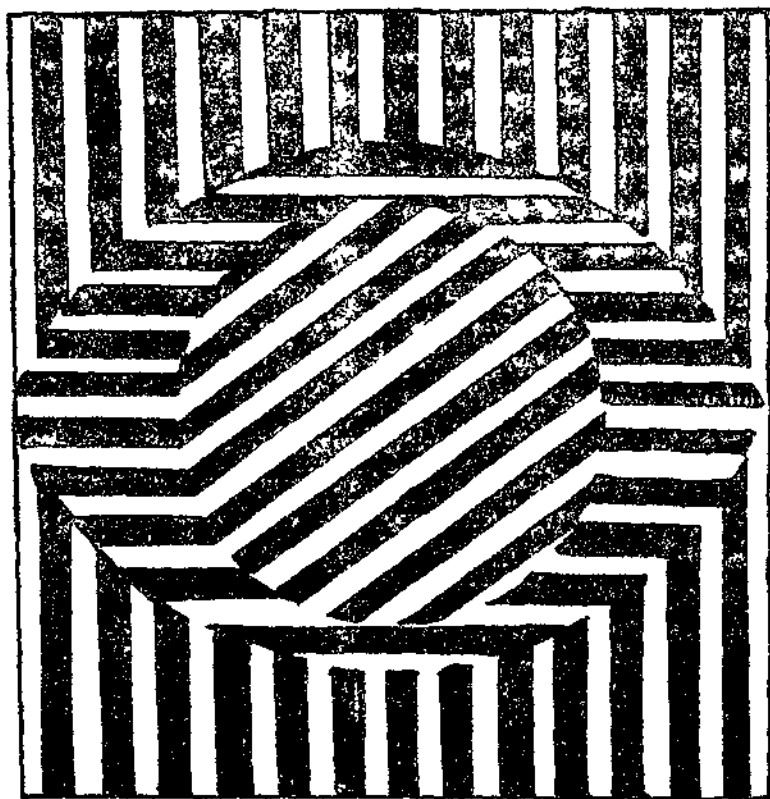
साधना काल में पूर्णतः ब्रह्मचर्य रखे, साथ ही इन तीस दिनों में स्त्री जाति से बातचीत न करें, चाहे वह मा, वहिन, पत्नी ही क्यों न हो, ययासम्भव चौबीसों घंटे तक भोजन न लें।

इसके अलावा एक समय भोजन करें और लोम-विलोम गति से भोजन किया करें, अर्थात् पहले दिन एक तोला भोजन करें, दूसरे दिन दो तोला। इस प्रकार पन्द्रहवें दिन पन्द्रह तोला भोजन करें, फिर सोहलवें दिन चौदह तोला और इस प्रकार कम करते-करते तीसवें दिन एक तोला भोजन करें, इसके अलावा अन्य किसी भी प्रकार

का कोई अन्न न ले। दूध, पेय पदार्थ आदि का भी सेवन न करे, साथ ही साधना काल में किसी भी प्रकार की नशीली वस्तु का सेवन भी वर्ज्य है।

साधना में प्रातः सूर्योदय से पूर्व ही जल में खड़े होकर इक्कीस मालाएँ फेंके। इसी प्रकार सूर्यास्त के बाद भी जल में खड़े होकर इक्कीस मालाओं का प्रयोग करें। दिन में मध्याह्न काल में अर्थात् वागहृ वजे से प्रारम्भ करके भी इक्कीस मालाएँ फेंके, दोपहर को तथा मध्य रात्रि को जप आसन पर बैठकर किया जाता है, सायं और प्रातः जल में खड़े होकर किया जाना चाहिए।

आसन पीले रंग का होना चाहिए और पूर्व की ओर मुह करके बैठना चाहिए, पद्मासन का प्रयोग आवश्यक है, आँखें स्थिर और कमर सीधी रहनी चाहिए, साधक को किसी भी प्रकार के आलस्य आदि से ग्रस्त नहीं होना चाहिए। एक महीने तक किसी भी पुरुष या स्त्री से सम्भाषण न करे और भोजन स्वयं के द्वारा पका हुआ या



किसी शुद्ध वर्ण के पुरुष द्वारा पकाया हुआ ग्रहण किया जा सकता है, भोजन सात्विक और शुद्ध शाकाहारी होना चाहिए।

जब तीस दिन समाप्त हो जाय तो इकतीसवें दिन किसी ऐसे माध्यम को चुनना चाहिए जो कि सीधा सरल व्यक्ति हो। उसकी उम्र बीस वर्ष से कम हो तो ज्यादा उचित रहेगा। यथासंभव माध्यम चौदह-पन्द्रह वर्ष का बालक उचित रहता है, उस दिन उस बालक को सामने बिठाकर मन-ही-मन मंत्र का पांच बार जप करना चाहिए और फिर मन में ही उस बालक को आज्ञा देनी चाहिए कि खड़ा होकर जल का लोटा भरकर ला। या ऐसा ही कोई सामान्य कार्य मन-ही-मन उस बालक को सम्बोधित करके कहना चाहिए, इसके लिए उस बालक को नाम उच्चारण करने की आवश्यकता नहीं है, केवल उस पर दृष्टि डालना या उसकी आख में आख डालकर मन-ही-मन कहना पर्याप्त होता है, ज्योंही आप मन में आज्ञा देंगे त्योंही वह बालक यदि उठकर आपका बताया हुआ कार्य कर लेता है तो प्रयोग मफल समझना चाहिए।

इसी प्रकार जब किसी समूह पर सम्मोहन करना होता है, तो समूह को सम्बोधित करने से पूर्व आँखें बंद कर अपने स्वयं के चित्र को या अपने स्वयं के स्वरूप को आँखों के सामने लाकर पांच बार मंत्र जप करना चाहिए, उसके बाद तुरन्त आँखें खोलकर सामने बैठे जन समूह पर दृष्टि डालनी चाहिए, उस समय आपकी दृष्टि जितनी दूर तक की भीड़ को देखेगी वह पूरी भीड़ आपके प्रति सम्मोहित रहेगी, उसके बाद आप जो भी आज्ञा देंगे वह समूह उस आज्ञा को क्रियान्वित करने में सौभाग्य समझेगी, या आप जो भी कहेंगे वह उनके लिए अमृत के समान होगा, आपके प्रवचन को वह भीड़ शान्ति से ध्यानपूर्वक सुनेगी और उस भीड़ को एक विशेष प्रकार का आनन्द अनुभव होगा। वे सारे सम्मोहित व्यक्ति बार-बार यही चाहेंगे कि आपकी बात को सुनते रहे, प्रवचन समाप्त होने के बाद भी वे एक अजीब-सा आकर्षण आपके प्रति अनुभव करेंगे और वे बार-बार आपको देखने, आपकी सेवा करने या आपकी बात सुनने के लिये लालायित रहेगे, उनमें तर्क करने या विरोध करने की क्षमता ही नहीं रहेगी। एक उच्चस्तरीय प्रवचनकर्ता के लिये यह साधना अत्यन्त आवश्यक है जिससे वह देश और विदेश में अपने भाषण के द्वारा लोकप्रियता प्राप्त कर सके।

आपने निम्नलिखित मंत्र अपने शिष्य को बताया था जो मैंने मन-ही-मन उसी समय स्मरण रखा था और बाहर आकर उसे अपनी डायरी में अंकित कर दिया था।

मंत्र

ओम श्री भैरवी भद्राक्षी आत्मन्, सर्व जन वाक्
चक्षु, श्रोत्र मन स्तभय स्तभय, बाधय बाधय मम
शब्दानुग्रह दर्शय दर्शय दृष्टिपथात् सम्मोहनाय
सम्मोहनाय कुरु कुरु स्वाहा।

मैं इसी प्रकार की साधना जानने के लिये ही तो भटक रहा था और उस दिन अनायास ही मेरी इच्छा पूर्ण हो गई थी। मैं आपके प्रति कृतज्ञ था कि आपने प्रत्यक्ष रूप से भले ही न सही परन्तु मेरे मन की बात जानकर अप्रत्यक्ष रूप से मुझे मेरी मनोवांछित साधना बता दी थी।

उसके तीसरे दिन ही आने जाने वाले लोगों की भीड़ से परेशान होकर आप जोधपुर के लिये प्रस्थान कर गये थे।

मैंने उसके बाद शुक्ल पक्ष की पचमी से आपने जो विधि बताई थी उसके अनुसार साधना प्रारम्भ कर दी थी। वहा पर एक फोटोग्राफर के द्वारा आपका जो चित्र लिया गया था उससे मैंने एक प्रति प्राप्त की थी और उसे अपनी कुटिया में रखकर आपको गुरु मान प्रार्थना निवेदन कर साधना कार्य प्रारम्भ कर दिया था।



शक्ति चक्र

साधना निर्विघ्न समाप्त हो गई थी, यद्यपि मुझे आशका थी कि मैं सफल हो सकूँगा या नहीं, परन्तु आपके मौन आशीर्वाद से इस साधना में सफल हो सका, और साधना के बाद मैंने व्यक्ति सम्मोहन किया और मन-ही-मन जो आदेश दिया उसका

उसने अक्षरशः पालन कर दिया था। जब तक उसने मेरी आज्ञा का पालन नहीं किया तब तक वह कममसाता रहा और कुछ ऐसा लगा जैसे कि कोई शक्ति उसे इस कार्य को करने के लिये प्रेरित कर रही है, जब उसने आज्ञा का पालन कर लिया तभी उसके चेहरे पर मन्तोप की झलक दिखाई दी।

साधना समाप्ति के बाद पन्द्रह दिन तक मैं विश्राम करता रहा और सोलहवें दिन मैंने गीता आश्रम के सचालको से निवेदन किया कि आज मैं सायंकाल को प्रवचन देना चाहता हूँ, वहाँ पर कोई-न-कोई प्रवचनकर्त्ता आते रहते हैं अतः जब मैंने अपनी बात उनके सामने रखी तो वे विश्राम नहीं कर सके कि मैं एक घंटे तक धाराप्रवाह प्रवचन दे सकूँगा, परन्तु मैंने उन्हें किसी प्रकार आश्वस्त किया और उस दिन घड़कते हृदय से व्यासपीठ पर जा बैठा।

मेरे सामने अपार जनसमूह बैठा हुआ था। एक क्षण के लिये मैं घबरा गया, परन्तु मैंने अपने सामने आपका चित्र लगा रखा था अतः मन-ही-मन आपको प्रणाम किया और प्रार्थना की कि मुझे पूरी सफलता प्राप्त हो, इसके बाद मैंने स्वयं को सम्मोहित कर अपनी दृष्टि सामने फैले हुए जनसमूह पर डाली, सचालक एक विद्युत् तरंग-सी मेरे सारे शरीर में दौड़ गई और कुछ ऐसा लगा कि जैसे मेरे होठ कुछ कहने के लिये उतावले हो। मैंने प्रवचन प्रारम्भ किया और धाराप्रवाह रूप से निर्धारित विषय पर बोलता रहा। मुझे ज्ञात ही नहीं हो सका कि समय कैसे बीत गया। उस दिन मैं एक घंटा बीस मिनट तक धारावाहित रूप से प्रतिपाद्य विषय पर बोलता गया और अपार जनसमूह शान्त चित्त से सुनता रहा। पूरे भाषण के दौरान इतनी शान्ति रही कि यदि सुई भी गिरती तो उसकी आवाज स्पष्ट सुनाई पड़ सकती थी, उस सभा में सैकड़ों साधु और सन्यासी भी थे, प्रवचन समाप्त होने पर उन सन्यासियों ने मुझे घेर लिया और मेरे प्रवचन की भूरि-भूरि प्रशंसा करने लगे। प्रवचन समाप्त होने पर पहली बार परम्परा तोड़ कर श्रोताओं ने हर्ष से तालियाँ बजायी थी जो कि मेरे प्रवचन के प्रभाव को स्पष्ट व्यक्त कर रही थी।

परन्तु मुझे कुछ भी ध्यान नहीं था कि मैं क्या बोला था और किस प्रकार से बोला था, पर गीता आश्रम के सचालको ने मुझे बताया कि आप निर्धारित विषय पर ही बराबर बोलते रहे थे, सबधित विषय से कहीं पर भटके नहीं थे। मैं स्वयं अपने आप आश्चर्यचकित था।

दूसरे दिन प्रातः से ही श्रोता भुञ्ज मिलने के लिए उतावले थे और जहाँ भी जाता मुझे घेर लेते। वे मेरा दर्शन कर अपना सौभाग्य समझने लगे थे। उनकी राय में मैं विद्वान् और उच्चकोटि का अध्येता हूँ, तभी तो मैं इस प्रकार के कठिन विषय पर इतनी गहराई और स्पष्टता के साथ बोल सका था।

इसके बाद मैंने एक महीने तक वहाँ निरन्तर प्रवचन किया, सचालको ने यह उचित समझा कि मेरे प्रवचन को टेप कर लिया जाए, जिससे कि भविष्य में भी इसका उपयोग हो सके।

आज मैं एक श्रेष्ठ आश्रम का सचालक हूँ, सैकड़ों शिष्य मेरे पास हैं आर्थिक दृष्टि से मैं सम्पन्न हूँ और लोगो के अनुसार मेरी जीभ पर सरस्वती विराजमान है, परन्तु मैं अपने आपको समझ रहा हूँ कि मैं क्या हूँ।

मेरा मन बराबर अपने आपको धिक्कार रहा है कि मैंने छुप करके, चोरी से यह साधना आपसे सीखी है, बिना आपकी स्पष्ट आज्ञा के इस साधना को सम्पन्न किया है। जब भी मैं अकेला होता हूँ मेरा मन पाश्चात्ताप की अग्नि में जलन लगता है, अब मैंने यह अनुभव कर लिया कि जब तक पत्र के माध्यम से मैं आपसे क्षमा याचना कर लू तब तक मेरे मन को शान्ति नहीं मिल सकेगी।

निश्चय ही मैं आपके प्रति अपराधी हूँ और इस अपमाद्य की आप जो भी सजा देना चाहे वह स्वीकार्य होगी। आप आज्ञा दें मैं स्वयं आपके चरणों में उपस्थित होकर क्षमा याचना करूँ और तब तक आपके चरणों में पड़ा रहूँ जब तक कि आप क्षमा नहीं कर देंगे।

इस पत्र के साथ मैं अपना पता लिखा लिफाफा सलग्न कर रहा हूँ। यद्यपि आप सर्वज्ञ हैं, आपसे कुछ भी छिपा नहीं है परन्तु मैं आपके सामने बालक के समान उपस्थित हुआ हूँ, इसीलिए यह पत्र और अपना पता लिखा लिफाफा भेजने की धृष्टता कर रहा हूँ। जब तक आपकी आज्ञा प्राप्त नहीं होगी तब तक मेरा मन इसी प्रकार छटपटाता रहेगा।

मैं तो अपने मन से आपको गुरु मानता हूँ और पूर्ण क्षमता तथा सर्वांग सहित आपके प्रति मनन करता हुआ याचना करता हूँ कि आप मुझे अभय दें जिससे कि मैं अपने अपराध का प्रायश्चित्त कर सकूँ और आपके चरणों में बैठकर कुछ ज्ञान प्राप्त कर सकूँ।

अकिंचन

साधु अमृतानन्द

अघोर गौरी-साधना

आदरणीय पण्डित जी,

सादर चरण स्पर्श ।

आपसे विछुड़े हुए लगभग एक वर्ष होने को आया है । मुझसे ऐसी क्या त्रुटि हुई है कि मेरे पत्र का उत्तर भी मुझे प्राप्त नहीं हो रहा है, इस एक वर्ष में मैंने कितने ही पत्र आपको दिये होंगे, परन्तु यह मेरा दुर्भाग्य है कि मुझे एक भी पत्र का उत्तर प्राप्त नहीं हो सका । मुझसे यदि कोई गलती हो गई हो तो मैं उसके लिए क्षमा प्रार्थी हूँ । मैं तो बालक हूँ और बालक हमेशा गलती करते रहते हैं आप मेरे लिए आदरणीय हैं और एक प्रकार से मेरे सर्वस्व हैं । अतः आपसे अलग रहकर मैं जीवित नहीं रहना चाहता । मुझसे जो कुछ अपराध हुआ हो वह मुझे बतायें जिससे कि मैं उसका प्रायश्चित्त करूँ ।

मुझे वे दिन याद हैं जब मैं आपके सान्निध्य में दो साल रहा था और आपसे काफी कुछ ज्ञान मुझे मिला था । यद्यपि मैंने आपसे मन्त्र साधना ही सीखी थी परन्तु मैं मन-ही-मन इसलिए चिन्तित था कि मेरी एक ही बहिन है जो कि रंग से काली और दिमाग से कुछ कमजोर है, इसलिए बहुत प्रयत्न करने पर भी उसका कहीं विवाह नहीं हो रहा था । मेरे पिताजी ने उसके विवाह के लिए अत्यधिक प्रयत्न किए थे पर अन्त में थक गये थे और यह निश्चय हो गया था कि अब इसका विवाह होना सम्भव नहीं है ।

उसके विवाह के लिए मेरे पिता अपने मकान को गिरवी रखकर भी दहेज की पूर्ति में हिचकिचा नहीं रहे थे । उन्होंने कई जगह इस प्रकार आश्वासन भी दिया था कि आप जो भी चाहेंगे मैं यथासम्भव उसकी पूर्ति करूँगा, परन्तु फिर भी मेरे पिता अपने उद्देश्य में सफलता प्राप्त नहीं कर पाये थे ।

जिसके घर में जवान बहिन हो और उसका विवाह नहीं हो तो माता-पिता या भाई को कितना मानसिक दुःख होता है इसकी कल्पना वही कर सकता है जो मुक्त होगी हो, परन्तु मुझे रह-रहकर एक विचार आ रहा था कि यदि मैं आपके सामने इस समस्या को रखूँ तो शायद उसका समाधान मिल सकेगा ।

पिछली बार जब मैं आपके पास आया था तो मैं इस समस्या से बहुत अधिक

दुखी और परेशान था, परन्तु मेरी आत्मा इस बात के लिए तैयार नहीं थी कि मैं अपने स्वार्थ के लिए आपको परेशान करूँ। परन्तु जब एक दिन अघोर मन्त्रों की चर्चा चली तो आपने ऐसे ही एक मन्त्र की चर्चा की थी कि वह मन्त्र सामान्य दिखाई देता है, परन्तु विवाह कार्य में पूर्ण सफलतादायक है। यह बात सुनकर जहाँ मुझे मन-ही-मन प्रसन्नता हुई, वहीं मेरी आँखों में आसू भी छलछला आये। मुझे उस एक क्षण



अघोर गौरी देवी

मे अपनी बहिन का स्मरण हो आया था। मैं उठकर एक तरफ चला गया था। मैं अपने आसू आपको दिखाकर परेशान नहीं करना चाहता था।

आपने बताया था कि यह मन्त्र अघोर मन्त्रों में विवाह मन्त्र कहलाता है और यदि नित्य इस मन्त्र की एक सौ आठ मालायें फेरें तो ग्यारह दिनों के भीतर-भीतर अनुकूल समाचार प्राप्त हो सकते हैं, पर आपने यह बताया था कि इस मन्त्र का जप वही करें जिनका विवाह होना है। आपने जो मन्त्र बताया था वह इस प्रकार था

अघोर विवाह मन्त्र

मखनो हाथी जर्द अम्बारी
 उस पर बैठी कमाल खा की सवारी
 कमाल खा कमाल खा मुगल पठान
 बैठे चबूतरे पढे कुरान
 हजार काम दुनिया का करे
 एक काम मेरा कर
 न करे तो तीन लाख तैंतीस हजार पैगम्बरों की दुहाई।

मैंने इस मन्त्र को एक अलग कागज पर नोट कर लिया था और उसके तीसरे दिन आपकी आज्ञा से मैं अपने घर चला आया था।

घर आने पर मैंने देखा कि मेरी घर की स्थिति में कोई सुधार नहीं हुआ है और पिताजी बेटी के विवाह की चिन्ता में घुलकर आघे हो गये हैं और मेरी मा ने खाट पकड़ ली है।

मैंने आपके बताये हुये मन्त्र का प्रयोग करने का निश्चय किया। यद्यपि यह मेरा अपराध ही है कि बिना आपको सूचना दिये इस प्रकार का प्रयोग अपनी बहिन से करवाया परन्तु इसके पीछे मेरा व्यक्तिगत स्वार्थ था और उससे भी ज्यादा यह स्वार्थ था कि मेरे माता-पिता की चिन्ता दूर हो सके।

मैंने अपनी बहिन को इस मन्त्र के बारे में बताया तो उसने इस मन्त्र को जपने से मना कर दिया, इससे पूर्व उसने सैंकड़ों व्रत-तप पूजा-पाठ आदि कर लिये थे और एक प्रकार से वह इन सबसे निराश हो गई थी। उसे विश्वास हो गया था कि यह मन्त्र-तन्त्र झूठे हैं, इनमें किसी प्रकार की कोई सत्यता नहीं है, पर मेरे आश्वासन देने पर कि यह अन्तिम बार है, मेरा कहना मानकर इस मन्त्र का जाप ग्यारह दिन कर ले। यदि इस बार भी सफलता नहीं मिली तो भविष्य में तुझे मैं कुछ भी नहीं कहूँगा।

मेरे कहने से उसने इस मन्त्र का जप प्रारम्भ किया। आश्चर्य की बात यह है कि नवें दिन ही मेरे दूर के चाचाजी ने एक लडके के बारे में सूचना दी। उनका

घर सम्पन्न और हमसे बड़ा-चड़ा था, लड़का योग्य तथा उच्च पद पर नौकरी कर रहा था, इसलिए मेरे पिताजी को बिल्कुल विश्वास नहीं था कि वहा सगाई हो सकेगी, परन्तु चाचाजी और मेरे विशेष आग्रह पर वे गये और प्रसन्नता की बात यह है कि उन्होंने सम्बन्ध स्वीकार कर लिया ।

इस अनुष्ठान को प्रारम्भ हुये ग्यारह दिन बीते थे कि लड़के वाली ने मेरे घर आ बहिन को देखकर स्वीकृति दे दी । उन्होंने कहा हमें रम-रूप की जरूरत नहीं है, हमें तो सुशील कन्या चाहिए, दहेज की भी इच्छा नहीं है, क्योंकि भगवान की पूरी कृपा है ।

ग्यारहवें दिन मेरी बहिन ने अनुष्ठान पूरा किया और उसके एक महीने बाद ही विवाह सम्पन्न हो गया । विवाह निर्विघ्न समाप्त हुआ और अब बहिन अपने ससुराल है तथा वहा पूरी तरह से सुखी है ।

मैंने यह पहली बार अनुभव किया कि अघोर मन्त्र भी अपने आप में चमत्कारिक है । उस दिन बातों-ही-बातों में आपसे यह मन्त्र प्राप्त हो गया था और इससे एक बार घर का कल्याण हो गया है ।

वास्तव में ही आपके साथ रहने से प्रत्येक क्षण मूल्यवान बन जाता है । बात-चीत के प्रसंग में भी हम शिष्यों को कब कौन-सा रत्न प्राप्त हो जाए, कुछ भी नहीं कहा जा सकता ।

यद्यपि मुझसे गलती हुई है कि मैंने इस मन्त्र का जप बिना आपकी अनुमति के अपनी बहिन से सम्पन्न कराया है पर इसके लिए इतनी कठोर सजा न दें कि मुझे आपके चरणों से विछुड़ना पड़े ।

मैं अपने अपराध के लिए बार-बार क्षमा प्रार्थी हूँ । आप मेरे अपराध को क्षमा कर पत्र का उत्तर दें और स्वीकृति दें जिससे कि मैं आपके चरणों में उपस्थित हो सकूँ ।

आपका ही,
कृष्ण गोपाल 'यदु'

काल ज्ञान मंत्र

आदरणीय गुरुदेव,

सादर चरण स्पर्श ।

यह मेरा सौभाग्य है कि आपका वरकहस्त पिछले बीस वर्षों से मुझ पर है और इन बीस वर्षों में समय-ममय पर आपने जो मुझे तन्त्र-मन्त्र का ज्ञान दिया है उसके लिए मैं आपका आभारी हूँ, केवल मात्र आभारी शब्द कहने से मैं उद्भूत नहीं हो सकता, क्योंकि मेरे जीवन का निर्माण और इस जीवन की संरचना आपकी कृपा के फलस्वरूप ही है, फलस्वरूप मेरा पूरा जीवन आपको समर्पित है ।

मैं कई वर्षों से आपसे 'काल ज्ञान मन्त्र' सीखना चाहता था क्योंकि मैंने कई ग्रन्थों में काल ज्ञान मन्त्र के बारे में काफी कुछ सुन रखा था, परन्तु कहीं से भी मुझे काल ज्ञान मन्त्र प्राप्त नहीं हो सका था, इसके लिए मैंने तन्त्र-मन्त्र की कई पुस्तकें टटोली परन्तु इस प्रकार का मन्त्र मुझे प्राप्त नहीं हो सका ।

मुझे यह विश्वास था कि आपको अवश्य ही काल ज्ञान मन्त्र का ज्ञान होगा, परन्तु मेरी हिम्मत नहीं हो रही थी कि मैं इस सम्बन्ध में आपसे निवेदन करूँ ।

परन्तु इस बार जब आपने मुझे अभयदान दिया तो मैंने सकुचा कर अपने मन की बात आपके सामने रख दी । आपने जब काल ज्ञान मन्त्र के बारे में सुना तो मेरे चेहरे की ओर दो क्षण के लिए देखने लगे । मैं उन दो क्षणों में पसीने-पसीने हो गया था कि शायद मुझसे कोई त्रुटि हो गई है, क्योंकि मैं आपकी उस भेदिनी दृष्टि का सामना नहीं कर पा रहा था ।

परन्तु यह मेरा सौभाग्य था कि आपने काल ज्ञान मन्त्र सीखने की स्वीकृति दी, साथ ही इस मन्त्र के बारे में बताया कि यह मन्त्र अत्यन्त गोपनीय है और जो साधक उच्चस्तरीय साधना सम्पन्न कर लेता है, तब उसे काल ज्ञान मन्त्र की साधना सिखाई जाती है । इस मन्त्र की साधना करने के बाद ही वह साधक सिद्धाश्रम में प्रवेश करने का अधिकारी होता है ।

आपने बताया था कि इस मन्त्र की इक्कीस भालाएँ नित्य फेरनी आवश्यक होती हैं, आसन सूती या रेशमी किसी भी प्रकार का हो सकता है, इसका प्रयोग

प्रयोग के समय अन्य किसी भी प्रकार के विधि-विधान की आवश्यकता नहीं होती, केवल सामने गुग्गुल धूप लगाते रहना चाहिये ।

आपने यह भी बताया था कि एक महीने तक इसका अनुष्ठान करने पर यह मन्त्र सिद्ध हो जाता है और इसके साथ-ही-साथ वह व्यक्ति भी सिद्ध पुरुष हो जाता है, और किसी को देखते ही उसका भूत, वर्तमान और भविष्य उसकी आखों के सामने स्पष्ट हो जाता है । उस साधक से कुछ भी छिपा नहीं रहता और वह सामने वाले व्यक्ति की गोपनीय-से-गोपनीय बात जान लेता है, इसी प्रकार वह भविष्य के प्रत्येक क्षण को अपनी आखों के सामने देख लेता है और वह जो कुछ भी कहता है भविष्य में सत्य होता है, एक प्रकार से कहा जाय तो उसका वचन मिथ्या नहीं जाता ।

आपने यह भी बताया था कि यह मन्त्र अत्यन्त गोपनीय होता है और सामान्य रूप से इस मन्त्र का ज्ञान साधक को नहीं दिया जाता, जब तक कि सिद्धाश्रम स्थित गुरु की आज्ञा प्राप्त नहीं हो जाती, सम्भवत यह मेरे पूर्व जन्मों का पुण्योदय था कि आपने मेरी प्रार्थना को स्वीकार करते हुए मुझे काल ज्ञान मन्त्र प्रदान किया था ।

आपने जो मुझे मन्त्र बताया था वह इस प्रकार था

काल ज्ञान मन्त्र

ओम नमो भगवते ब्रह्मानन्द पद गोलोकादि असंख्या ब्रह्माण्ड भुवन नाथाय
 आशाक शख गोक्षीर कर्पूर धवल गात्राय नीलाभोधि जलद पटलाधिव्यक्तस्वरूपाय
 व्याधिकर्म निर्मूलोच्छेदन कराय, जाति जरायमरण, विनाशनाय, ससारकान्तारोन्मूल
 नाय, अचिन्त्य बल पराक्रमाय, अति प्रतिमाह चक्राय त्रैलोक्याधीश्वराय, शब्दै के
 त्रैलोक्याधिनरिबल भुवन कारकाय, सर्वसत्य हिताय, निज भक्ताय, अभीष्ट फल प्रदाय
 भक्त्याधीनाय सुरासुरेन्द्रादि मुकुटकोटि धृष्टवाद पीठाय, अनन्त युग नाथाय, देवाधि-
 देवाय, धर्मचक्राधीश्वराय, सर्वे विद्या परमेश्वराय, कुविद्या विघ्न प्रदाय, तत्पादपकजा
 श्रयानि यवनी देवी सासन देवते त्रिभुवन सक्षोभनी, त्रैलोक्य शिवापहारकारिणी श्री
 अद्भुत जातवेदा श्री महालक्ष्मी देवी (अमुकस्य) स्थावर जगम कृत्रिम विषमुख सहा-
 रिणी सर्वाभिचार कर्मपहारिणी परविद्योच्छेदनी परमन्त्र प्रनाशिनी अष्ट महानाग
 कुलीच्चाटनी कालदण्ड भूत कोत्पापिनी (अमुकस्य) सर्वरोग प्रमोचनी, ब्रह्माविष्णु-
 रुद्रेन्द्र चन्द्रादित्यदिग्रह नक्षत्रोत्पात मरण भय पीडा मदिन त्रैलोक्य विश्वलोक वशकरि
 भुविलोक हितक महाभैरवि भैरव शस्त्रोपधारिणी रौद्रे, रौद्ररूपधारी प्रसिद्धे, सिद्ध
 विद्याधर यक्ष राक्षस गरुड गधर्व किन्नर कि पुरुषो दैत्यारगेन्द्र पूजिते ज्वालापात
 कराल विगन्तराले महावृषभ वाहिनी, छेटक कृपाण त्रिशूल शक्ति चक्रपाश शरासन
 शिव विराजमान षोडशार्द्ध भूजे एहि एहि ल ज्वाला मालिनी ही ही हू हा ही हू
 हूँ हू देवान् आकर्षय आकर्षय नाग ग्रहान् आकर्षय आकर्षय यक्ष ग्रहान् आकर्षय
 आकर्षय गधर्व ग्रहान् आकर्षय भूत ग्रहान् आकर्षय आकर्षय दिव्यतर ग्रहान् आक-

अनग साधना

परम पूज्य स्वामी जी,

दण्डवत् प्रणाम ।

आज से पाच वर्ष पूर्व आपके चरणों में उपस्थित हुआ था, सम्भवत आपको मेरा स्मरण नहीं रहा होगा । मैं नेपाल में काठमाण्डू से एक सौ पचास मील दूर कोसाना गाव में रहने वाला युवक हूँ और आपका नाम सुनकर आपके चरणों में उपस्थित हुआ था ।

आपके यहाँ आने से पूर्व मैं अपने जीवन से पूरी तरह से निराश हो चुका था, क्योंकि मैं सामान्य रूप से नपुंसक था । मैं सही रूप में सम्भोग करने में सक्षम नहीं था और इस सम्बन्ध में जितनी भी दवाइयाँ लेता उसका विपरीत असर ही मुझे प्राप्त होता ।

मैं अपने पिता का इकलौता पुत्र था, इसलिए वे मेरा विवाह करने को इच्छुक थे जिससे कि बहू घर में आ सके और पौत्र हो जिससे कि उनकी वंश परम्परा आगे बढ़े, परन्तु मैं अपने आपको भली प्रकार से जानता था क्योंकि बचपन में कुटेवें और कुसगति में पड़कर अपने स्वास्थ्य को चौपट कर दिया था । मेरी इन्द्री कमजोर और टेढ़ी हो गई थी । मैं किसी कन्या का जीवन बर्बाद नहीं करना चाहता था, इसलिए मैं विवाह करने को इच्छुक नहीं था ।

परन्तु मेरे पिता इस सम्बन्ध में कुछ भी नहीं जानते थे और मैं शर्म के मारे उन्हें कुछ नहीं कह सकता था । फलस्वरूप कुछ समय बाद ही मेरा विवाह हो गया । मैं मन-ही-मन लज्जित रहने लगा । मेरी पत्नी मेरे घर आ गई थी, परन्तु मैं हर समय उससे कटा-कटा रहता, क्योंकि मेरे मन का चोर मुझे खाये जा-रहा था ।

इस प्रकार लगभग एक महीना बीत गया और मैंने एक दिन - भी पत्नी से बातचीत नहीं की, पिताजी मुझे ठेलकर छत पर भेज देते तो मैं अलग बिछौना बिछाकर सो जाता और ऐसा प्रदर्शन करता जैसे कि मुझे खौद आ गई हो ।

परन्तु यह कब तक चलता और एक दिन मेरे इस रहस्य का भण्डाफोड पत्नी के सामने हो गया । पत्नी को जब विश्वास हो गया कि मैं नपुंसक हूँ और मैं किसी भी स्थिति में पत्नी की इच्छा पूर्ण नहीं कर सकता तो उसकी आँखों में आसूँ आ गये । उस

समय मुझे जितनी ग्लानी और वेदना हुई थी उसे मैं ही जान सकता हूँ। इस प्रकार का दुख और शर्म वही जान सकता है जो भुक्तभोगी हो।

उस रात मैं एक क्षण के लिये भी सो नहीं पाया। दूसरे दिन मैं दिना घर वालों को बताये घर से भाग खड़ा हुआ। मैं किसी भी हालत में अपने जीवन को समाप्त कर देना चाहता था।

इस प्रकार मैं लगभग दो महीने भटकता रहा, न तो मेरे खाने का ठिकाना था और न रहने का आश्रय। मेरे पास जो थोड़ी बहुत पूजी थी वह भी समाप्त हो गई। अतः मैं इलाहाबाद में मजदूरी करने लगा। मैं नित्य सगम पर जाकर सो जाता और यदि कोई साधु सन्यासी मिलता तो उसकी थोड़ी बहुत सेवा भी कर लेता।

एक दिन मैंने अपनी व्यथा एक सन्यासी को बताई तो उसने कहा कि इस सब में मेरे पास तो कोई उपाय नहीं है और गरम दवाइयाँ लेकर तुमने अपने शरीर को बर्बाद कर दिया है। अतः दवाइयों से अब तुम्हारा कल्याण नहीं हो सकता, यदि कोई 'मदन साधन मंत्र' का ज्ञान तुम्हें दे या तुम 'अनग यत्र' प्राप्त कर सको तो तुम्हारी समस्या का हल हो सकता है। उन्होंने स्पष्ट बताया कि मैं ऐसे किसी भी साधु को या पण्डित को नहीं जानता, परन्तु मैंने जोधपुर के श्रीमाली जी का नाम अवश्य सुना है, वे समर्थ हैं और यदि तुम्हारी समस्या का समाधान कोई भी कर सकता है तो वे ही कर सकते हैं।

मेरे मन में जिन्दा रहने की आशा जगी और मैं उसी दिन जोधपुर के लिये रवाना हो गया। जोधपुर में मैं एक धर्मशाला में टिक गया, परन्तु आपके सामने आने की हिम्मत नहीं हो रही थी।

एक दिन मन कड़ा करके आपके सामने उपस्थित हुआ और अपनी पूरी राम कहानी आपके सामने प्रकट कर दी। मैं बात कहता जा रहा था और साथ-ही-साथ मेरी आँखों से आँसू भी बहते जा रहे थे। संभवतः आपको मेरे आँसुओं पर तरस आया होगा और आपने मुझे अनग मंत्र का ज्ञान दिया था और बताया था कि इस मंत्र का एक लाख जप नदी के किनारे किया जाय और जप समाप्ति के बाद एक हजार चमेली के पुष्पों से आहुति दी जाय तो तुम वापस पूर्ण पुरुष बन सकते हो और तुम्हारी वंश परम्परा कायम रह सकती है।

आपने जो मंत्र दिया था वह इस प्रकार था

मंत्र

ओम् ए मदने मदनविद्रावणे अगसगमे देहि
देहि श्री-श्री स्वाहा।

मैं वापस इलाहाबाद आ गया था, और सगम तट पर इस मंत्र का जप प्रारम्भ कर दिया था। चौदह दिनों में मैंने इस मंत्र का एक लाख जप कर दिया था। दिन में

का ठिकाना न रहा। उसी दिन रात्रि को मैंने पूर्ण सन्तुष्टि के साथ अपने पौरुष का प्रदर्शन किया। मेरी पत्नी और मैं पूर्णतः सन्तुष्ट थे।

आज मेरे दो पुत्र तथा एक पुत्री हैं, और यह जो कुछ भी है वह आपकी कृपा के फलस्वरूप ही है। इसके बाद मैं ऐसे तीन और युवकों को यह अनुष्ठान सम्पन्न करवा चुका हूँ और वे पुनः नया जीवन प्राप्त कर चुके हैं।

मैं लज्जा के साथ यह पत्र लिख रहा हूँ क्योंकि मैं पिछले पांच वर्षों से आपको पत्र नहीं दे सका। आपने मुझे जीवन दान दिया है और मुझ में एक नई चेतना जाग्रत की है। मेरे वश को आगे बढ़ाने में आपका ही मन्त्र सहयोग रहा है, इसके लिए मैं और मेरा पूरा परिवार आपका आभारी है।

इस महीने के अन्त में मैं अपनी पत्नी और पुत्रों के साथ आपके दर्शनो के लिए आ रहा हूँ। पिछली बार जब मैं आपके यहाँ आया था तब मैं कुछ भी भेंट करने के योग्य नहीं था, परन्तु इस बार मैं आपके चरणों में पत्र पुष्प अर्पित कर अपने मन के वेग को शान्त करना चाहता हूँ।

मुझे विश्वास है कि इस महीने के अन्त में आप जोधपुर में ही होंगे, जिससे कि मैं और मेरा परिवार आपके दर्शन कर जीवन को सफल बना सकें।

भवदीय,
(शमशेर बहादुर राणा)

दत्तात्रेय-साधना

श्रद्धेय पण्डितजी,

सादर चरण स्पर्श ।

आपकी कृपा से मैं सकुशल घर पहुँच गया था । आपने जिस प्रकार से दत्तात्रेय साधना करने को कहा था उसी प्रकार से मैंने उस साधना को सम्पन्न किया है और उसका अनुकूल परिणाम भी मुझे प्राप्त हुआ है ।

आपने मुझे आज्ञा दी थी कि मैं साधना सम्पन्न कर उससे सबधित अनुभव को आपके सामने रखूँ ।

यह मेरा सौभाग्य था कि मुझे इस बार आपके चरणों में बैठकर 'दत्तात्रेय साधना' सीखने का अवसर मिला । आपने बताया था कि यह साधना अभी तक गोपनीय रही । बहुत ही कम साधकों को इस साधना का ज्ञान रहा है । यह मेरे ऊपर आपका विशेष अनुग्रह है कि आपने कृपा कर इस साधना को करने के लिए मुझे प्रेरित किया ।

आपने बताया था कि यदि किसी का बालक खो जाय, या उसका पता नहीं चले, इसी प्रकार किसी भी बन्धु बान्धव के खो जाने पर इस प्रकार की साधना सम्पन्न की जाती है, फलस्वरूप खोया हुआ प्राणी साधना सम्पन्न होते-होते घर आ जाता है ।

आपके कहने के अनुसार मैंने इस साधना को शुक्ल पक्ष की पूर्णिमा से प्रारम्भ किया । सर्वप्रथम मैंने अलग कक्ष में एक ऊनी आसन बिछा दिया था और उसके सामने एक लकड़ी का बाजोट या तख्ता रख दिया था जो डेढ़ फुट लम्बा तथा डेढ़ फुट चौड़ा था । उस पर लाल वस्त्र बिछा दिया था और उस पर चावली से दत्तात्रेय यन्त्र बना दिया था जो कि आपने मुझे बताया था ।

इसके बाद इस यन्त्र पर एक कासी का कटोरा रखकर उसमें एक किलो तेल भर दिया था और उसके सामने एक छोटा-सा दीपक भी जलाकर रख दिया था ।

पूर्णिमा की रात्रि को स्नान कर लाल धोती पहन नौ बजे मैं आसन पर बैठ गया और फिर दत्तात्रेय यन्त्र की षोडशोपचार पूजा कर उस पर जो तेल का पात्र था उसकी भी पूजा की ।

तत्पश्चात् सकल्प कर मैंने आपके बताये हुए तरीके से दत्तात्रेय मन्त्र की इक्यावन मालाएँ फेरी । आपने मुझे जो मन्त्र बताया था वह इस प्रकार था

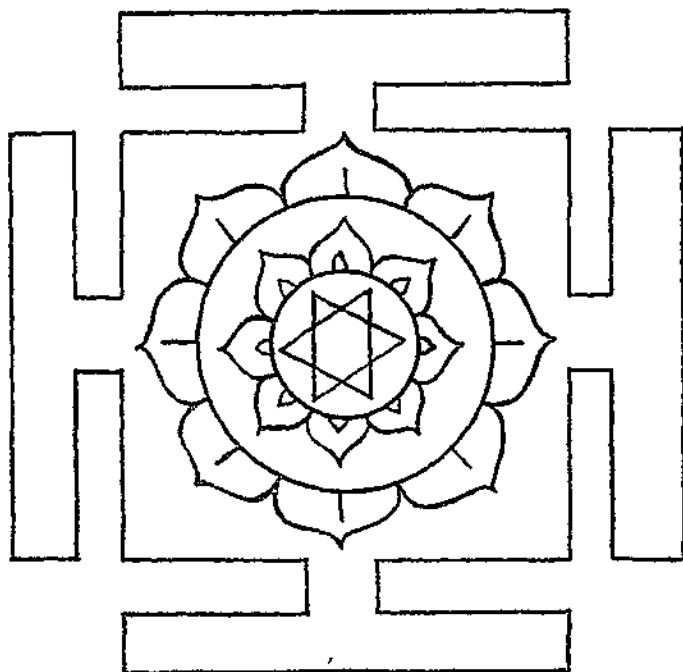
मंत्र

ओम् ह्रीं क्लीं ऐं श्री महायक्षिण्ये

(लुप्त प्राणी) आगच्छ स्वाहा

रात्रि को जब इक्यावन मालाएं समाप्त हुईं तो मैं वहीं आसन पर सो गया। दिन को मैं एक समय भोजन करता और व्यसन आदि का परित्याग कर दिया था।

इस प्रकार तीन रात्रि तक मैंने प्रयोग कर दत्तात्रेय मन्त्र को सिद्ध कर दिया।



दत्तात्रेय यन्त्र

सयोगवश उन्हीं दिनों मेरे गांव के सेठ श्री कस्तूरचन्दजी के इकलौते पुत्र का अपहरण हो गया था, और दो महीने बीतने पर भी उसका कोई पता नहीं लग रहा था। पुलिस एक प्रकार से थक गई थी और सेठजी भी पूरी तरह से निराश हो गये थे।

एक दिन सेठजी को किसी ने बताया कि मैं श्रीमाली जी से दत्तात्रेय साधना सीखकर आया हूँ जो कि इस प्रकार के कार्यों के लिये उपयुक्त है। तब सेठजी ने मुझसे निवेदन किया कि मेरा इकलौता पुत्र रमेश का अपहरण हो गया है और दो महीनों से पता नहीं चल रहा है, अतः आप यदि श्रीमालीजी से इस प्रकार की कोई साधना

सीखकर आये हो तो कृपया उस अनुष्ठान को सम्पन्न कर दें, जो भी व्यय आयेगा मैं वहन करने को तैयार हूँ।

यह मेरा पहला अवसर था। मैंने इस अनुष्ठान को करने का निश्चय कर लिया और दूसरे दिन से ही इसके लिये व्यवस्था प्रारम्भ कर दी। आपने बताया था कि मन्त्र सिद्ध होने पर किसी भी दिन से इस अनुष्ठान को प्रारम्भ किया जा सकता है और यह अनुष्ठान प्रातः नौ बजे से प्रारम्भ होकर सायं पाँच बजे तक चलता है। इसमें आसन विच्छाकर पूर्व की ओर मुह करके बैठना चाहिए और सामने तख्ते पर चादलो से दत्तात्रेय यन्त्र बनाकर उस पर कासी का कटोरा रख देना चाहिए और उसमें एक किलो शुद्ध मूँगफली का तेल भर देना चाहिए। इसके अलावा साधक के चारों ओर एक हजार दीपक जला देने चाहिए। एक व्यक्ति इस कार्य के लिये नियुक्त कर देना चाहिए। वह उन दीपकों में तेल डालता रहे, वे बुझने न पावें। दीपकों में मूँगफली या तिल्ली का तेल डाला जाता है।

इस प्रकार वे हजार दीपक प्रातः नौ बजे से जलाने चाहिए और सायं पाँच बजे तक जब तक अनुष्ठान पूरा न हो तब तक उन दीपकों को जलाये रखना चाहिए। इस प्रकार यह प्रयोग सात दिन तक होता है और इसमें दत्तात्रेय यन्त्र की एक सौ एक माला फेरनी पड़ती हैं। एक माला में एक सौ आठ मनके होते हैं। कोई भी माला प्रयोग में ली जा सकती है। आसन पर बैठने के बाद साधक को बीच में उठना नहीं चाहिए, ऐसा करने पर सातवें दिन अनुष्ठान सम्पन्न होने से पूर्व ही खोया हुआ बालक या प्राणी घर आ जाता है और यदि वह पहले ही मर गया हो तो उस कटोरे में वह दृश्य स्पष्ट दिखाई दे जाता है कि उस प्राणी को किसने, कब और किस प्रकार मारा है? साथ ही उसकी लाश कहाँ पर है?

ऊपर जो मन्त्र दिया है, उसके कोष्ठक में लुप्त प्राणी के स्थान पर उस खोए हुए बालक या प्राणी का नाम उच्चारण करना चाहिए।

आपने जिस प्रकार से विधि बताई थी उसी प्रकार से मैंने अनुष्ठान प्रारम्भ कर दिया था और अपने आसन के चारों ओर एक हजार दीपक जला दिये थे। एक व्यक्ति इस बात का ध्यान रखता कि किसी भी दीपक का तेल समाप्त न हो जाय।

अनुष्ठान प्रारम्भ होने के चौथे दिन ही सेठजी का पुत्र रमेश घर आ गया था। उसने जो कहानी बताई वह आश्चर्यजनक थी। उसने बताया कि मुझे डाकू अपहरण करके ले गये थे और किसी एक पहाड़ी में छुपाकर रख दिया था, परन्तु आज से चार रोज पूर्व (जिस दिन से अनुष्ठान प्रारम्भ हुआ) एक डाकू का सरदार से मतभेद हो गया और वह रात्रि को चुपचाप मुझे उठाकर भाग गया। उसने आज प्रातः गाव के पास मुझे लाकर छोड़ दिया और कहा कि मेरे भी तुम्हारी उम्र का ही एक पुत्र था जिसे डाकू उठाकर ले गये थे और उसे मार दिया था। उस समय जो मुझे वेदना हुई थी वैसी ही वेदना तुम्हारे माता-पिता को होती होगी, इसलिये मैं तुम्हें छोड़ देता हूँ जिससे कि तुम अपने दुखी माता-पिता से मिल सको।

जब बालक घर आ गया तो चौथे दिन साय मैंने अनुष्ठान को समाप्त कर दिया। वास्तव में ही यह एक आश्चर्यजनक घटना है और इसके लिये मैं आपका अत्यधिक कृतज्ञ हूँ। बालक के घर आने से सेठजी को जो प्रसन्नता हुई है उसका मैं वर्णन नहीं कर सकता, साथ-ही-साथ इस कार्य से मेरी प्रतिष्ठा आसपास के गावों में बहुत अधिक हो गई है।

परन्तु पण्डितजी यह सम्मान और प्रतिष्ठा मेरी नहीं अपितु आपकी है। पिछले दस वर्षों से मैं आपसे सम्पर्क रख रहा हूँ और इन दस वर्षों में आपने जो-जो साधनाएँ सुझा दी हैं वे अद्भुत हैं। मानव कल्याण में सहायक हैं। जैसा कि आपने कहा था मैं पुनः आपके चरणों की सौगन्ध खाकर प्रतिज्ञा करता हूँ कि मैं इन मन्त्रों का उपयोग जन-कल्याण के लिये ही करता रहूँगा।

नवरात्रि में मैं आपके चरणों में उपस्थित होना चाहता हूँ, इसकी स्वीकृति देने की अनुकम्पा करें।

आपका चरणानुरज,
केशव नारायण 'सपा')

धर्मनिष्ठ लोगो के लिए श्रद्धापूर्ण उपहार

बड़े साइज के
208 पृष्ठ
मूल्य 36/-
डाकखर्च 6/-



हमारे पूज्य तीर्थ

कैलास पर्वत से कन्याकुमारी,
कामाख्या से कच्छ तक के संपूर्ण
तीर्थों का विश्वकोश।

यदि आप तीर्थ-यात्रा करना चाहते हैं तो यह
पुस्तक आपको सभी तीर्थों की विस्तृत व
वांछित जानकारी प्रदान करेगी।

सभी जिज्ञासाओं का समाधान -

- चार धाम कोन-से हैं?
- द्वादश ज्योतिर्लिंग कैसे बने?
- सप्तपुरी यात्रा का महात्म्य?
- पंच-सरोवर कितने पावन हैं?
- मातृ व पितृ-गया का विधि-विधान?
- वावन शक्तिपीठों का जन्म?
- जैन व सिक्ख-तीर्थों की महिमा?

- लक्ष्मी महिमा
- हनुमान महिमा
- विष्णु महिमा
- शिव महिमा
- गणेश महिमा
- दुर्गा महिमा



प्रत्येक मूल्य 24/- डाकखर्च 6/-

सभी पुस्तकें 272 से 352 पृष्ठों तथा
मंदिरों व मूर्तियों के असंख्य चित्रों से
सुसज्जित

गीताकथा

-ब्रह्मदत्त वात्स्यायन



श्रीमद्भगवद्गीता के सम्पूर्ण श्लोक, उनका
पदच्छेद, सरल हिन्दी में पदार्थ, श्लोकानुवाद एवं
कठिन स्थलों पर टिप्पणी के रूप में विस्तृत
विवेचन, अध्यायों का सारांश, महाभारत और
गीता के प्रतिपाद्य विषयों पर विचारोत्तेजक
आलेख तथा रोचक एवं शिक्षाप्रद परिशिष्टों से
संपन्न इस पुस्तक में गीता-प्रेमियों के लिए
परमोपयोगी पाठ्य-सामग्री प्रस्तुत की गयी है।

मूल्य 48/- डाकखर्च 6/-

3,00,00,000

तीन करोड़ से भी अधिक पाठकों की पसंद

रैपिडैक्स

इंगलिश स्पीकिंग कोर्स

प्रिय अभिभावक,

आपका बच्चा अंग्रेजी स्कूल में पढ़ता है,

अंग्रेजी अच्छी तरह लिख-पढ़ लेता है

उसकी एकमात्र समस्या

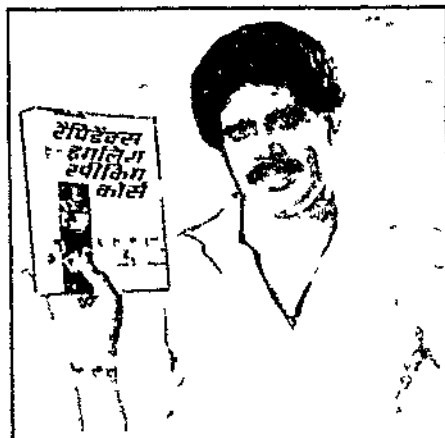
वह इसे बोलने में हिचकता या अटकता है।

इसका समाधान चला रहे हैं

उसके प्रिय खिलाड़ी कपिलदेव—

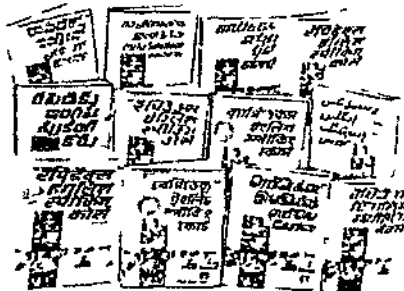
अंग्रेजी घोसवास सीखने का एकमात्र सोर्स

रैपिडैक्स इंगलिश स्पीकिंग कोर्स



It's really a good book to learn spoken English

—Kapil Dev



12 भारतीय भाषाओं में प्रकाशित

कान्वेट स्तर की शुरुआत व फगटेदार अंग्रेजी
मिखलाने वाली ऐसी पुस्तक जो भारत के
कोने-कोने में फैली, जिसे हर भाषा के लोग ने
पसंद किया तथा समाज के हर वर्ग ने अपनाया।

सभी भाषाओं में बड़े साइज के 400 से अधिक पृष्ठ

मूल्य 50/- प्रत्येक

स्त्री के सौन्दर्य, स्वास्थ्य एवं रोगों का एनसाइक्लोपीडिया

लेडीज हैल्थ गाइड

लेखिका: महिला-विषयों की विशेषज्ञ श्रीमती आशारानी चोपरा

- * सौन्दर्य-समस्याएँ वेडोलपन, अपष्ट वक्ष, छोटा कद, बालों का झड़ना, चेहरे की कमियाँ आदि।
- * आम शिकायतें मासिक धर्म की गड़बड़ियाँ, बेजा धक्का व तनाव, पीठ-दद, हीन-भावना, यौन रोग आदि।
- * शिशु-जन्म प्रक्रिया गर्भाधान से लेकर प्रसवोपरान्त का भोजन, सतर्कताएँ एवं समस्याएँ।
- * सामान्य स्वास्थ्य नारी शरीर रचना की संपूर्ण जानकारी, फर्ट-एड, मीनूपाज, वाइपन आदि।
- * बीमारियाँ रक्तचाप, मधुमेह, तपेदिक, दमा, वक्ष तथा गर्भाशय का कैंसर तथा ऑपरेशन आदि।



मूल्य 60
डाकखर्च
6/-

बड़े साइज के
410 पृष्ठ
चित्र 300

25 विशेषज्ञ डाक्टरों के इंटरव्यू के

पुस्तक

खेल-खेल में सीखो विज्ञान

01

पाइंस

एक्सपेरिमेंट्स

—आइवर यूशिएल



नहे वैज्ञानिकों के लिए लिखी गई एक ऐसी स्तक—जो सरल व रोचक प्रयोगों द्वारा विज्ञान के जटिल सिद्धांतों को समझने में निश्चित रूप से मदद देगी।

प्रयोगों की एक झलक —

- कैसे चल पाते हैं जल-सतह पर कीट?
- नहाने के बाद क्यों लगती है ठंड?
- कमरे में बैठ नापो सितारों की दूरी!

इसके साथ ही वर्षामापी, सूक्ष्मदर्शी, डायनेमो आदि अनेक उपकरण बनाने की सचित्र विधि।

मूल्य 24/- डाकखर्च 5/- पृष्ठ 120

English Edition also available

अनुभवी फोटोग्राफर द्वारा लिखित घर-बैठे फोटोग्राफी सिखाने वाला

प्रेक्टिकल
फोटोग्राफी
कोर्स



लेखक ए एच हाशमी

पोर्ट्रेट्स, ग्रुप्स, स्टिल-लाइफ, लैण्डस्केप, स्पोर्ट्स तथा स्पीड फोटोग्राफी, विवाह-उत्सव, जानवर, प्राकृतिक दृश्यावलिया आदि सभी मौकों के फोटो खींचना सीखो।

- डेवलपिंग • कण्टेबट • एन्लार्जमेंट • रीटचिंग
- डक्यूमेंट क्रापिंग • फिनिशिंग • कलरिंग।

डिमांड साइज 244 पृष्ठ मूल्य 28/- डाकखर्च 6/-

तत्त्वश्रेष्ठ ट्रिक्स का अनूठा संकलन



चिल्ड्रन्स
ट्रिक्स
एण्ड
स्टंट्स

इस सचित्र पुस्तक में तुम पाओगे

- ऐसी कुर्सी, जिसे तुम नहीं उठा सकोगे।
- ऐसा गुब्बारा, जिसे तुम नहीं फोड़ सकोगे।
- अदृश्य मानव, जो तुम्हारी आंखों के सामने से गायब हो जाएगा।
- अगुली, जो हवा में तैरेगी।

तुम्हारे दोस्तों को चकरा देने वाली—रहस्यमय,

20—खरचे में आमान 70 ऐसी

क्विज टाइम

—आइवर यूशिएल

मूल्य 24/-

डाकखर्च 6/-

पृष्ठ 128



जन-सामान्य तथा विद्यार्थियों के लिए समान रूप से उपयोगी प्रश्नोत्तर शैली में लिखी यह पुस्तक विज्ञान, इतिहास, भूगोल, साहित्य, खेलकूद तथा फिल्म जगत से जुड़े आधारभूत 1001 प्रश्नों के सचित्र उत्तर प्रस्तुत करती है।

Also available in English

English edition



उदीयमान कार्टूनिस्टों के लिए विशेष उपयोग

कार्टून कैसे

अनजाने तथ्य जानिए

501 रोचक तथ्य

मूल्य 15/-
डाकखर्च 5/-



- मोडावाटर में बिलकूल मोडा नहीं होता।
- मनुष्य की रक्तवाहिनियों की कुल लम्बाई 100,000 मील होती है।

ऐसे ही गुदगुसाने वाले व ज्ञान-विज्ञान के नए क्षितिज खोलने वाले 501 अनजाने तथ्य।

विचित्र दुनिया—विचित्र लोग



विश्व के विचित्र इंसान

—ए एच हारामी
मूल्य 20/- डाकखर्च 5/-
बंड साइज का 108 पृष्ठ

- दो सिर वाला अजूबा बच्चा कसा था?
- शरीर से जुड़े स्थायी भाई?
- तीन दागो वाला व्यक्ति कैसे चलता था?
- क्या कोई व्यक्ति आधे टन का था?

ऐसी ही कितनी अन्यान्य विचित्र जानकारीया।

विचित्र जन्तुओं का संसार

विचित्र जीव-जन्तु

—ए एच हारामी
मूल्य 20/-
डाकखर्च 5/-



दुआँटेरा तीन भागों वाला विचित्र प्राणी।
काच मेंढक जिसकी पारदर्शी त्वचा में से भीतर का मारा शरीर देख पड़ता है।
लैंपघारी मछली जिसके सिर पर प्रकृति ने जलने वाले बल्ब दिए हैं।

इसी प्रकार के 75 से भी अधिक विचित्र-जंतु।

भाकीटिकट अशोक गोयल की प्राणाणिक पुस्तकें

होम डेकोरेशन गाइड



मूल्य 36/- डाकखर्च 6/-

इन रंग-रंगीन गृह-मञ्जों में नवधी नवधी विषयों में विस्तारपूर्वक और चित्रा सहित समझाया गया है।

—धर्मपु

इस किताब की मदद से छोटी-छोटी जगहों में भी अच्छी तरह सजा कर दर्शनीय बनाया जा सकता है।

—नवभारत टाइम्स

70 से 225 वर्गमीटर के नक्शे



51 हाउस डिजाइंस

मूल्य 48/- डाकखर्च 6/-

प्रत्येक नक्शा निम्न बातों को ध्यान में रखकर बनाया गया है।

- ड्राइंग, डार्निंग, बैठक व बाथरूम एवं रसोईघर आदि का सही तालमेल हो
- जगह का सदुपयोग हो सभी कमरे हवादार हो व उनमें कुदरती रोशनी हो आदि।

250 से 500 वर्गमीटर के नक्शे (फ्रंट एलिवेशन के डिजाइनों सहित)

मार्डन हाउस प्लान्स

मूल्य 36/- डाकखर्च 6/-



- गेन्ट्रि-गार्थ के डिजाइनों की पूर्ण जानकारी
- सजावटी पेइंग-पेंथो की जानकारी
- कमरों के परस्पर सही तालमेल के तरीके
- मकान-सम्बन्धी प्राविधिक जानकारीया
- विलिडिंग वाई-लॉज का विवरण

बच्चों को इटैलीजेंट बनाने वाला अद्भुत नॉलिज बैंक

बच्चों के मस्तिष्क में घुमड़ने वाले हजारों अनबूझे 'क्यों और कैसे'
किस्म के प्रश्नों के उत्तर बताने वाला एक अनूठा प्रकाशन

चिल्ड्रन्स नॉलिज बैंक (छ छण्डो में)



बच्चों के मस्तिष्क के लिए एक दैनिक

जरा भी समय आते ही बच्चों के मस्तिष्क में 'क्यों' और 'कैसे' किस्म के हजारों प्रश्न घुमड़न लगते हैं। उचित समय पर मिले प्रश्नों के उत्तर उसके दिमाग के लिए दैनिक का काम करने हैं जबकि उत्तर न मिलने से उसका मानसिक विकास रुक जाता है।

प्रश्नों में से कुछ की झलक

☐ महिलाओं की दाढ़ी क्यों नहीं होती? ☐ क्या अन्य ग्रहों में लोग पृथ्वी पर आते हैं?
☐ आकाश नीला क्यों है? ☐ मुहाम क्यों होते हैं? ☐ टस्ट ट्यूब बेबी क्या है? ☐ स्पूने क्या दिखाई देते हैं? ☐ इलेक्ट्रॉनिक घड़ी कैसे काम करती है? ☐ मिस्र में सभी कैसे पनाते थे? ☐ उड़न-तश्तरी क्या है? ☐ एल एम डी क्या है? ☐ हाइड्रोजन बम क्या है? आदि

6 छण्डों की इस शृंखला में है

- 1300 बड़े आकार के पृष्ठ
- 1100 से अधिक चित्र
- 5,00,000 शब्दों की पाठ्य-सामग्री
- 1050 प्रश्नों के संचोध उत्तर

मूल्य

पेपरबैक 40/- डाकखर्च 6/- प्रत्येक

पूरा सेट 240/- (गिफ्ट बॉक्स में) डाकखर्च भाफ

अंग्रेजी तथा 8 भारतीय भाषाओं में प्रकाशित

विशेषताएं

- 50 लाख से भी अधिक पाठकों की पसंद
- विद्यालयों में पुरस्कार के रूप में वितरित
- प्रत्येक खण्ड अपने आप में संपूर्ण
- पत्र-पत्रिकाओं द्वारा प्रशंसित

आधारभूत विषय

★ पृथ्वी एवं सूर्यमंडल ★ आधुनिक विज्ञान, वनस्पति एवं पशु-पक्षी जगत ★ आविष्कार एवं खोजे ★ खल एवं खिलाड़ी ★ आश्चर्य एवं रहस्य ★ सामान्य ज्ञान ★ मानव शरीर विज्ञान आदि

Master Computer Today For A Better Tomorrow

Computers are invading every facet of a person's life—the home the office the classroom or the play ground Whether in job or business they are opening up bright new vistas of knowledge and happiness



— Er VK Jain

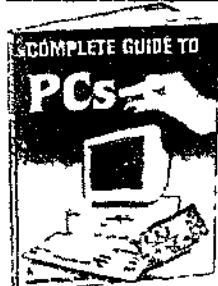
• Computer for Beginners

• Basic Computer Programming

The twin-books are a must for those who are interested in computers their function and operation but are discouraged by their complexities All is made easy through simple language and instructive illustrations

The books are designed for mass education as per Computer Literacy Project of NCERT and also conform to course on computers recently undertaken by CBSE

Big Size 192 & 172 pages respectively
Price Rs 36/ each Postage Rs 6/ each

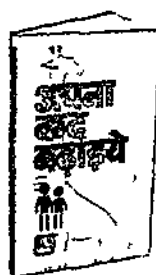


A Complete Guide to PCs

- * Creates awareness about modern computer—Hardware & Software & how these can serve as productivity aids
- * Imparts working knowledge of Computer technology Software Packages like Word Star Lotus 1-2-3 dBASE-II, etc to an ordinary man avoiding technical words
- * Helps in assessing the operations that require computer

Price Rs 48/ Postage Rs 6/

कद बढ़ाने के अनुभूत तरीके



अपना कद बढ़ाइये

मूल्य 20/-

डाकखर्च 5/-

Also available in English

प्रस्तुत है कद लम्बा करने का आजमाया हुआ वैज्ञानिक अनुसंधान। इसमें यूरोप और अमरीका में टेस्ट किया हुआ ऐसा सचित्र कोर्स दिया गया है जिसकी मदद से आप केवल 15 मिनट प्रतिदिन अभ्यास द्वारा कुछ ही हफ्तों में अपनी हाइट 10 सेमी तक तो बढ़ा ही सकते हैं।

विना हथियार भारघाड़ की जापानी कलाएं

जूडो कराटे

(जुजुत्सु-बॉक्सिंग सहित)

मूल्य 20/- डाकखर्च 5/-

पृष्ठ 128

Also available in English



हिन्दी में पहली बार प्रकाशित 300 से अधिक दाब-पेचों का सचित्र कोर्स। इसकी मदद से आप चाकू, लाठी, भाला आदि के बार से अपना बचाव करके अपने से चार गुना ताकतवर हमलावर को भी चुटकियों में धराशायी कर सकते हैं।

आप भी सीखो करना बुनाई



आधुनिक बुनाई शिक्षा

पुस्तक में 200 से अधिक नई बुनाइतियों से ऊनी वस्त्र तैयार करने की विधियाँ दी गई हैं। साथ में उनकी धुलाई व दाग-धब्बे छुड़ाने के विभिन्न तरीके भी दिये गये हैं। मूल्य रु 48/-

Skill in correspondence ensures

Brighter Career... Faster Promotion... Sure Success in Business...

Rapidex Self Letter Drafting Course

Whether you are an administrator or a supervisor office superintendent or a stenotypist—the skill in correspondence is an art you must master because almost every situation every occasion calls for a well-drafted letter. And with this skill in hand none can stop you from getting ahead.

While other books teach you to copy readymade letters given in them this course will teach you how to draft a letter of your own choice.



Big Size
Pages: 354
Price Rs 50/-

FEATURES

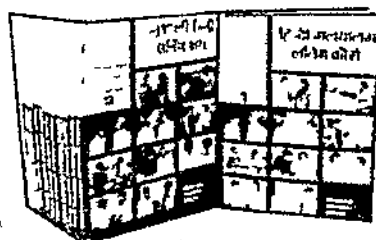
- ☐ Sentences and phrases in abundance
- ☐ Tick mark the required ones
- ☐ Arrange in proper order instantaneously
- ☐ Shape & mould the way you want to

And now make as many letters as you want on the same subject

DIVIDED UNDER 3 SECTIONS

It takes care of your personal and social letters commercial correspondence and applications for job

कोई भी भाषा सीखें



रेपिडैक्स

लैंग्वेज लर्निंग सीरीज

इतनी सरल व प्राथम्य सीरीज कि आप कुछ ही दिनों में काम चलाने लायक कोई भी भारतीय भाषा बोलने और समझने लगेंगे

12 खण्डों की तैरीज़ की पुस्तकें

- हिन्दी-तेलुगू लर्निंग कोर्स
- हिन्दी-कन्नड़ लर्निंग कोर्स
- हिन्दी-तमिल लर्निंग कोर्स
- हिन्दी-गुजराती लर्निंग कोर्स
- हिन्दी-मलयालम लर्निंग कोर्स

इसी प्रकार प्रांतीय भाषाओं से हिन्दी सीखने के लिए भी 6 पुस्तकें उपलब्ध

सभी पुस्तकें लगभग 250 पृष्ठों में

Books for Science Students

General Science

A series of five books

The series provides help and guidance on all the major branches of science—Physics, Chemistry, Biology, Geology & Astronomy
Price 15/- each Postage 4/- each

Quiz Series

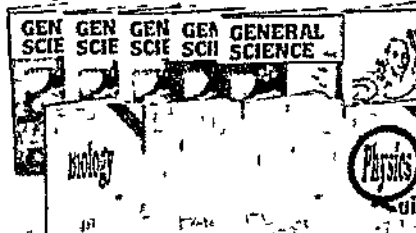
(Work Books for Physics, Chemistry, Biology & Science)

Each book in this series contains 1000 quiz type questions covering almost every branch of particular science with answers. Also
Price 12/- each Postage 4/- each in Hindi

Know Science

Know Science offers pupils in the 10-13 age range 1000 questions in the general field of science

Price Rs 15/- Postage Rs 4/-



खेल-खेल में जादू सीखो, खेल वाइन के खेलो—जान बढ़ाओ, रोच जमाओ, मित्रों में यश लेलो

101

मैजिक

ट्रिक्स

—आइवर यूशाएल



इस सचित्र पुस्तक में दी गई हैं—ऐसी 101 शानदार व जानदार ट्रिक्स, जिनका समझना जितना सरल है, उनका प्रदर्शन—उससे भी आसान। वस! जरूरत है तो थोड़े से अभ्यास के साथ चन्द ऐसी चीजों की, जो तुम्हें आसानी से उपलब्ध हो जाएगी।

ट्रिक्स की एक झलक ■ टूटी माला फिर तैयार ■ गिलास का पानी गायब करना ■ रुमाल आग से न जले ■ सर पर रखा हैट स्वयं उछले आदि

मूल्य 24/- डाकखर्च 5/- पृष्ठ 120

Also available in English

101

साइंस

गेम्स

—आइवर यूशाएल



विज्ञान के 101 खेलों की यह पुस्तक खेल ही खेल में कुछ ऐसे वैज्ञानिक उपकरण बनाना सिखा देती है, जो बनेंगे तो खिलौने ही पर बच्चों को विलकुल असली उपकरण जैसा ही आनंद देगे। जैसे—बैरोमीटर, विद्युत-चुम्बक, हैटोग्राफ, स्टीम टरबाइन, इलेक्ट्रोस्कोप आदि

इनके अलावा बहुत से अन्य रोचक प्रयोग जैसे—कागज के बर्तन में पानी उबासना, भाप से नाय चलाना आदि 101 मनोरंजक जादू से प्रतीत होने वाले वैज्ञानिक खेल।

मूल्य 24/- डाकखर्च 5/- पृष्ठ 120

English Edition also available

योगाभ्यास द्वारा किसी भी रोग से छुटकारा पाइये!



योगासन

एवं

साधना

योगासन पर सबसे ज्यादा बिकने वाली पुस्तक

- आसनो का सुबोध व सचित्र विवरण •
- प्राणायाम विधि • चक्षु-व्यायाम • पौष्टिक भोजन
- योगासनो द्वारा रोग निदान आदि

योगासन सैकड़ों शाखाओं में प्रतिदिन हजारों योगाभ्यासी रोगों से छुटकारा पा जीवन का आनन्द ले रहे हैं।

डिमाई साइज पृष्ठ 120/- मूल्य 20/- डाकखर्च 4/-

Also available in English

Get your child admitted in a public school



CHILDREN'S
PICTURE
DICTIONARY

All in colour

- Successfully prepares your child for admission in a Public School
- Contains 1500 words of daily use
- Each & every word has been explained with colourful pictures & small & simple sentences

The Dictionary is really a treasure trove of knowledge for your children wherein they will discover the names of • Birds • Animals • Fruits • Vegetables • Colours • Parts of Body etc.

Giant Size Price 40/- Postage 6'

Subject Quiz Series

in six subjects, so far

Science Quiz Book (General)

Covers advanced topics on Plant Kingdom, Animal World, Human Body, Human Diseases, Medicine, Universe, Science Laws, Scientific Instruments, Domestic Appliances, Computers, Space Exploration, Everyday Science, Scientific Achievements of India, Inventions and Inventors and many more similar topics

Electronics & Computers Quiz Book

From the history and evolution of Electronic science and computers to the latest developments in the field

Mathematics Quiz Book

Crisp questions that can be asked on Arithmetic, Algebra, Geometry, etc., covering all formulae, theorems and short-cuts

Environment Quiz Book

All ecological and biological aspects of the nature surrounding us

Medical Quiz Book

All developments in the field of medicine and medical equipment, diseases and all related zoological topics

Astronomy Quiz Book

The universe in a nutshell — stars, planets, satellites, comets and all the theories based on astronomical inventions

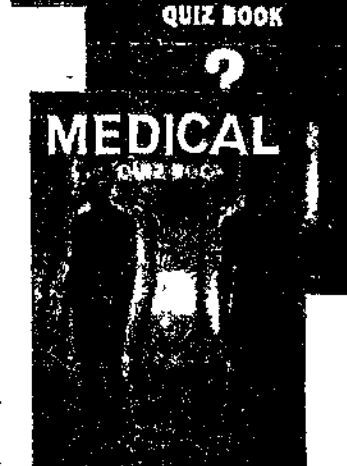
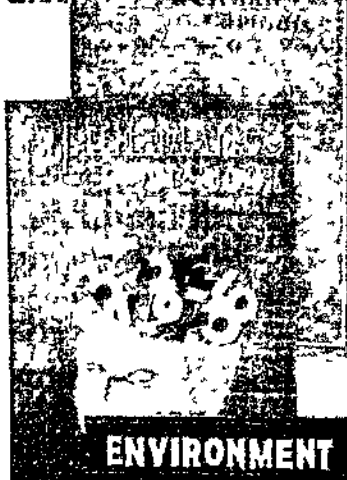
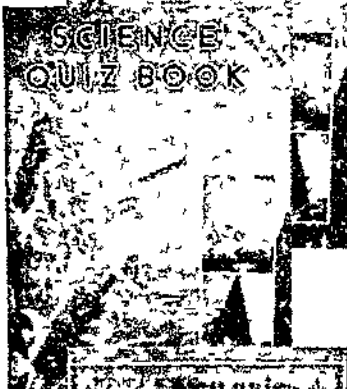
Explanatory answers provided for every question Profusely illustrated for better and quick understanding

Helpful for vivas, and competitive tests like MBBS and Engineering and other scientific courses

To face the challenges of competitive quiz programmes on Radio/TV or in Schools and Colleges

Useful scientific tips for all interviews

Recommended for 10 + 2 classes



'Science Quiz Book' also available in

Big Size
24 each. Postage Rs. 5

कैमरा साधारण हो या चढ़िया—आप स्वयं ट्रिक फोटोग्राफी कर सकते हैं...

ट्रिक फोटोग्राफी एंड कलर प्रोसेसिंग

—ए एच हाशमी

बोतल के भीतर आदमी, हथेली पर नाचती औरत, सेब में से झाकते बच्चे या पत्ते पर प्रेमिका का फोटो उतारिए।

ट्रिक फोटोग्राफी पर हिंदी में प्रथम पुस्तक—जिसमें ट्रिक और इफेक्ट की पूरी-पूरी प्रैक्टिकल जानकारी चित्रों के साथ दी गई है इसके अलावा कलर फोटोग्राफी व कलर प्रोसेसिंग की प्रैक्टिकल जानकारी भी इसमें है जिसकी मदद से आप निगेटिव या ट्रांसपेरेंसी की प्रोसेसिंग कर सकते हैं और अच्छे कलर एन्सार्जमेंट भी बना सकते हैं।



डिमाई साइज पृष्ठ 248
मूल्य 32/- डाकखर्च 6/-

डा. नारायणदत्त श्रीवाली द्वारा विरचित



मूल्य 30/-
डाकखर्च 5/-

मन्त्र 40
डाकखर्च 6

तांत्रिक सिद्धियां

मन्त्र-अध्येताओं, तांत्रिकों एवं साधकों के लिए ऐसी पथ-प्रदर्शक पुस्तक जिसमें दुष्कर तांत्रिक क्रियाओं का सरल एवं सचित्र विवरण है।

मंत्र रहस्य

मन्त्रों के मूल स्वरूप, मन्त्र-चेतन्य, मन्त्र कीलन-उत्कीलन, मन्त्र-ध्वनि, मन्त्र-विनियोग एवं मन्त्रों के सफल प्रयोगों के लिए सचित्र ग्रन्थ।

'रिप्ले' की Believe It or Not!
अब हिन्दी में भी....

संसार के
1500
अद्भुत
आश्चर्य



पुस्तक में कुदरत के चमत्कारों, अद्भुत ऐतिहासिक घटनाओं, बादशाहों की अजीबों-गरीब सनकों, साहस और वीरता के बेमिसाल कारनामों, पृथ्वी, समुद्र और आकाश के जीव-जन्तुओं और वनस्पतियों की अनजानी विचित्रताओं का सचित्र वर्णन किया गया है।

मूल्य 36/- डाकखर्च 6/- पृष्ठ 224

- दुर्गा महिमा
- लक्ष्मी महिमा
- शिव महिमा
- गणेश महिमा
- विष्णु महिमा
- हनुमान महिमा



पुस्तकों में महिमाओं के अतिरिक्त पूजा के मन्त्र, नैवेद्य आदि की विधिध्या भी हैं।

मूल्य 24/- डाकखर्च 5/-

तीर्थ-यात्रा का तुफल पाइये



हमारे
पूज्य तीर्थ

बड़े 208 पृष्ठ
मूल्य 36/-
डाकखर्च 6/-

यह पुस्तक आपको, तीर्थों की धार्मिक, ऐतिहासिक पृष्ठभूमि, उपयोग में आने वाले साज-सामान, आने-जाने के मार्ग का निर्देश, ठहरने आदि की वांछित जानकारी प्रदान करेगी।

घर बैठे दर्जियों जैसी टेलरिंग सिखाने वाला प्रभावी एवं सरल कोर्स

रैपिडैक्स होम टेलरिंग कोर्स

(लेखिका श्रीमती आशारानी खोरा)

- मनमोहक फ्रांके, लुभावनी मेक्सिया, सलौनी नाइटी, नाइट सूट व गाउन, आकर्षक टाप्स, नन्हे-मुन्ने के रंगारंग कपड़े, युवक-युवतियों के लिए पट, येल-वाटम, शर्ट, बुशर्ट व जीन्स
- गृह-सजा के लिए परदे, कुशन आदि
- पुराने कपड़ों से बच्चों के कपड़े बनाना
- भाँति-भाँति की डाट्स, चुनट, प्लीट्स, जेबे, आस्तीन, कालर योक, बटन आदि
- मशीन के कलपुर्जों की जानकारी भी

300 से अधिक रेखा व छायाचित्रों से सुसज्जित मूल्य 48/- डाकखर्च 6/-



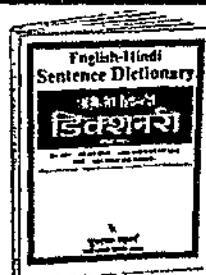
English-Hindi Sentence Dictionary

अंग्रेजी-हिन्दी बोलती डिक्शनरी (वाक्यों सहित)

हिन्दी में यह अपने ही प्रकार की पहली ऐसी डिक्शनरी है जिसकी शब्दावली वाक्यों के रूप में बोलती है और अपने पाठकों को उसकी व्याकरण-रचना से परिचित कराकर उसका सही-सबभों में प्रयोग भी सिखाती है।

प्रायः प्रयोग में आने वाले अंग्रेजी के 4000 शब्दों का हिन्दी में उच्चारण, हिन्दी-अर्थ तथा उनका अंग्रेजी के वाक्यों में प्रयोग सिखाने वाली अपने प्रकार की पहली डिक्शनरी।

मूल्य 28/-
डाकखर्च 6/-
पृष्ठ 154



अंग्रेजी मराठी संस्करण भी उपलब्ध

अपना दिमाग तेज कीजिए



101
दिमागी
कसरतें

हरीश चंद्र ससी

सिर को खुलाने के लिए विवश कर देने वाली ऐसी पहलीनुमा चुनौतियाँ, जिनको हल करने की कोशिश में जहाँ एक ओर आपका मनोरंजन होगा वहीं दूसरी ओर आपका दिमाग भी तेज होगा। बच्चों, जवानों तथा बूढ़ों—सभी के लिए मजेदार 101 रोचक दिमागी कसरतें

My Picture Dictionary

For Nursery Classes

All illustrated 48 multi-colour pages



My
Picture
Dictionary

Price Rs 15/-
Postage Rs 5/-



**प्रसिद्ध भविष्यवक्ता, प्रकाण्ड ज्योतिषी, हस्तरेखा-विशेषज्ञ एवं तिंदहस्त
तांत्रिक-नात्रिक डा. नारायणदत्त श्रीमाली की अनमोल पुस्तकें**

**बृहद्
हस्तरेखा शास्त्र**



- आप खुद अपने हाथ की रेखाएँ पढ़कर अपना भविष्यफल जान सकते हैं। किसी पणित अथवा ज्योतिषी के पास जाने की आवश्यकता नहीं है।
- हस्तरेखा के 240 विभिन्न योगों का पहली बार प्रकाशन, जैसे—आपके हाथ में धन-संपत्ति का योग, पुत्र-योग, विदेश-यात्रा योग आदि हैं या नहीं?
- आपके हाथ की रेखाएँ क्या कहती हैं? कोन से व्यापार से आपको लाभ होगा? नोकरी में तरक्की कब तक होगी? पत्नी कैसे मिलेगी? इत्यादि सैकड़ों प्रश्नों के उत्तर।

डिमाई साइज 266 पृष्ठ मूल्य 40/- डाकखर्च 6/-
Also available in English

**प्रेक्टिकल
हिप्नोटिज्म**



- पुस्तक में हिप्नोटिज्म को सरल-सरस ढंग से चित्रों द्वारा समझाया गया है, जिससे साधारण पाठक भी एक अच्छा सम्मोहन विशेषज्ञ बन सकता है।
- पुस्तक में हिप्नोटिज्म के प्रकार, प्रयोग, शक्ति, हिप्नोटिज्म के सिद्धांत, नाटक, सम्मोहन के तथ्य आदि पर पूर्ण प्रामाणिकता के साथ सचित्र विवरण है।
- रोग-निवारण, कष्ट दूर करने व जीवन में प्रतिदिन आने वाली बाधाओं व आपदाओं के निराकरण में इस पुस्तक में दिया गया विवरण पूर्णतया उपयोगी है।

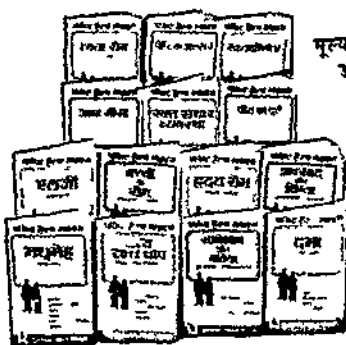
मूल्य 40/- डाकखर्च 6/-
Also available in English

**रोगों से निबटने में डाक्टर से भी ज्यादा आपकी अपनी
भूमिका आवश्यक है**

इंग्लैंड के प्रसिद्ध डाक्टरों एवं विशेषज्ञों द्वारा
लिखित प्रसिद्ध ग्रंथ

**पॉकेट हैल्थ गाइड्स
(अब हिन्दी में भी उपलब्ध)**

पॉकेट हैल्थ गाइड्स इन बीमारियों के कारणों,
जटिलताओं, सावधानियों तथा रोकथाम के
उपायों के बारे में आपका ज्ञानवर्द्धन करेगी।



मूल्य 8/- प्रत्येक
अकखर्च 4/-
प्रत्येक

हिन्दी में 16 तथा अंग्रेजी में 18 हैल्थ
गाइड्स

- एलर्जी (Allergies)
- रक्तहीनता (Anaemia)
- संघर्षीय एवं गठिया (Arthritis & Rheumatism)
- दमा (Asthma)
- पीठ का दर्द (Back Pain)
- बच्चों के रोग (Children's Illnesses)
- रक्त-संचार की समस्याएँ (Circulation Problems)
- अवसाद और चिंता (Depression & Anxiety)
- मधुमेह (Diabetes)
- उच्च रक्तचाप (High Blood Pressure)
- हृदय रोग (Heart Trouble)
- रजोनिवृत्ति (The Menopause)
- माघासीसी का दर्द (Migraine)
- पेटिक अल्सर (Peptic Ulcers)
- रजोपूर्व तनाव (Pre Menstrual Tension)
- त्वचा-रोग (Skin Troubles)
- Cystitis • Hysterectomy

Out with all Stains

Spot Check



Straightforward tips to cope with all types of stains. A full section on fabrics with a comprehensive chart. Tackle stains on Wallcoverings Carpets Pots Furniture Metals etc

यह पुस्तक हिन्दी में भी उपलब्ध है।
Price Rs 18/- Postage Rs 5/-

घर में ही ब्यूटी क्लीनिक

होम ब्यूटी क्लीनिक

-परवेश हाडो

Also available in English



घर-बैठे ब्यूटी क्लीनिक जैसे मेकअप की विधियाँ सिखाने वाली एक ऐसी पुस्तक, जिसमें त्वचा की देखभाल, शरीर को सुझाल बनाने संबंधी व्यायाम तथा आकर्षक हेयर स्टाइल्स आदि की संपूर्ण जानकारी दी गई है।

बड़े 140 पृष्ठ मूल्य 28/- डाकखर्च 6/-

समय और धन की बचत करें

गृह-उपयोगी नुक्तें (Home Hints)

Also available
in English



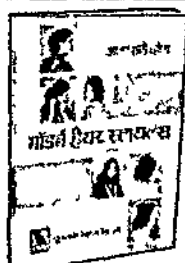
चीजों के लंबे समय तक बिना सड़े-गले भंडारण की विधियाँ, बोटलो, टी-पॉट आदि की सफाई सहित हजारों नुक्तों का एक बहुमूल्य सचित्र संकलन।

मूल्य 18/- डाकखर्च 5/-

आधुनिक केश-सज्जा तालिका

मॉडर्न हेयर स्टाइल्स

-आशारानी च्होरा



इस पुस्तक की मदद से किसी भी प्रकार की हेयर सैटिंग घर में ही की जाए। बॉय-कट, बॉब-कट, राजण्ड-कट, स्ट्रेट-कट, फीजर-कट स्टम्प पोनी-टेल, रिगलट्स, शोल्डर-कट, शेग-स्टायल या म्विच-सज्जा-मूल्य 24/- डाकखर्च 6/-

कमर मतली कौजिए

लेडीज स्लीमिंग कोर्स



केवल 15 मिनट रोज के इस कोर्स की मदद से आप अपनी कमर और पेट पर चढ़ी फालतू चरबी शीघ्र ही घटा सकती हैं और अपनी कमर का साप

18 विशेषज्ञ डाक्टरों के इंटरव्यू पर आधारित

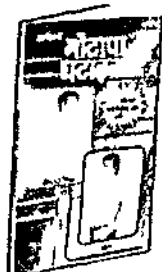
बेबी हेल्थ गाइड

-आशारानी च्होरा



यह गाइड बच्चों से संबंधित सभी विषयों का एक अनुष्ठान एनसाइक्लोपीडिया है, जिसमें उनके शारीरिक रोगों से लेकर उनके मनोविज्ञान तक

मोटे पतले हो सकते हैं



**20 दिन में
मोटापा
घटाइये**

Also available in English

मोटापा भयंकर वीमारियों की जड़ है, सेक्स-क्रीड़ा में बाधक है, सेहत के लिए अभिशाप है। केवल 15 मिनट नियम का कोर्स लगातार 20 दिन तक करिए, आपको आश्चर्यजनक फल नजर आएगा।

मूल्य 20/- डाकखर्च ५/- पृष्ठ 72

पेंटिंग सिखाने वाला कोर्स

ड्राइंग

तथा

पेंटिंग कोर्स

—एच हाशमी



इस कोर्स की मदद से आप कुछ ही दिनों में आकृतियों के एक्शन से भरे चित्र तथा सीन-सीनरिया, वाटर-कलर, ऑयल-कलर, एक्वेलिक-पेंटिंग, हिन्दी-अंग्रेजी लेटरिंग आदि सीख कर लाभान्वित हो सकते हैं।

पृष्ठ 144 मूल्य 28/- डाकखर्च 6/-

Bring Greenery Indoors



**House
Plants**

Price Rs 18/-
Postage Rs 5/-

Tips on indoor greenery Get to know all about choosing buying watering and feeding House plants Bottle gardens Flowering and Foliage plant from BULBS to BONSAI

Full of Colourful Illustrations

वाटिक कला सीखिए



**वाटिक
कला**

बड़ साइज क 120 पृष्ठ

मूल्य 20/- डाकखर्च ५/-

घर की सजावट के साज-सामान से लेकर पहनने के वस्त्रों तक पर वाटिक कला का प्रयोग कर—पर्द, मेजपोश, दीकोजी, रेडियो कवर, चादरे, कुशन, साड़ी-ब्लाउज आदि पर विभिन्न प्रकार के रंग-विरंगे डिजाइन बना सकते हैं।

आकस्मिक दुर्घटना के तन्त्र

**प्राथमिक
उपचार
(First Aid)**



Also available in English

मूल्य 18/- डाकखर्च 5/-

पुस्तक में डाक्टर सहायता उपलब्ध होने तक दिल का दौरा पड़ने, करंट लगने, विषाक्त भोजन खाने, जल जाने, चोट से निरंतर खून बहने, हड्डी टूटने आदि जैसी अनेक आकस्मिक दुर्घटनाओं से जूझने की विधि दी गई हैं।

रतोई की रानी बानिये



**भारतीय
व्यंजन**

—कुमदिनी मुशी

मूल्य 15/- डाकखर्च 5/-

परांठे, पूरी, सत्तिया, बाटी, कढ़ी, कोफ्ते, सलाद, घटनी, मुरब्बे, अचार, खीर, हलवा, डोसा-इडली, कचोरिया, शरबत, आइसक्रीम आदि बनाने की विधि।

हिन्दी में पहली बार प्रकाशित चहुरंगी एनसाइक्लोपीडिया

जूनियर साइंस एनसाइक्लोपीडिया

(Junior Science Encyclopedia)



पृष्ठों में 800 से भी अधिक रंगीन चित्रों एवं 1000 शब्दों की पाठ्य-सामग्री से युक्त प्रस्तुत एनसाइक्लोपीडिया वैज्ञानिक विषयों पर लिखा एक अमूल्य सदर्भ-ग्रंथ है। बच्चों की हर 'कैसे', 'कौनसे', और 'कहाँ' का उत्तर देने में सक्षम संग्रहीत ग्रंथ।

मूल्य 300/- डाकखर्च 10/-

पाच छड़

- 1 पृथ्वी एवं ब्रह्मांड, 2 नाप, गति एवं ऊर्जा,
- 3 प्रकाश, दृष्टि तथा ध्वनि, 4 इलेक्ट्रॉनों की उपयोगिता, 5 खोज एवं आविष्कार।

Published in India in collaboration with Hamlyn Publishing London

सुविधायक पाक-कला विशेषज्ञा 'श्रीमती आशारानी चोरा' द्वारा प्रस्तुत

मॉडर्न कुकरी बुक

दक्षिण एव पश्चिमी स्टाइल में किचन सैटिंग 15 से अधिक फोटोग्राफ्स, रंगीन चित्रों के साथ-साथ व आधुनिक उपकरणों का उपयोग।



बड़े साइज के
148 पृष्ठ
सैकड़ों रेखा व
छाया चित्र
मूल्य 24/-
डाकखर्च 5/-

Also available in English

- मेहमानों का स्वागत कैसे करें, परोसने के क्या-क्या तरीके हैं, व्यंजनों को प्लेटों में कैसे सजाएँ तथा डायनिंग टेबल पर प्लेटों व क्रॉकरी आदि को कैसे सजाएँ।
- दैनिक नाश्ते, लजीज सज्जिया तथा विशेष अवसरों के लिए मीठे व नमकीन विशिष्ट पकवानों के साथ-साथ जम, मुरब्बा, जेली, आइसक्रीम, कुल्फी, स्कवैश, फ्रूट-कस्टर्ड, अचार, चटनी, सॉस, सलाद, सूप, सैंडविच और फ्रूट-काकटेल आदि व्यंजनों को बनाने की सविन विधि।

चमत्कारी किरण-लेसर

रक्षा ब्रह्मचर्य भारत सरकार द्वारा प्रस्तावित



एक ऐसा चमत्कारिक आविष्कार, जिसके उपयोगों ने आज सारे ससार में धूम मचा दी है। लेसर क्या है तथा लेसर के 50 से भी अधिक उपयोगों की सविन जानकारी।

बड़े साइज के
112 पृष्ठ

अपने भाइयों के लिए कोई भी नमपत्तन नाम चुनिए!

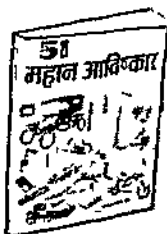
बच्चों के
2001 नाम



51

महान आविष्कार

-राजेन्द्र कुमार राजीव



पुस्तक में आज के विज्ञान और आधुनिक सभ्यता का आधार समझे जाने वाले हजारों साल पहले के पहिए के आविष्कार से लेकर आधुनिक युग के राडार, कम्प्यूटर, रॉकेट आदि तक के आविष्कारों का सचित्र वर्णन किया गया है।

बड़े 168 पृष्ठ मूल्य 30/- डाकखर्च 6/-

हम जीव-जन्तु

लेखक-रवि लायट
भूमिका-रामेश बेदी

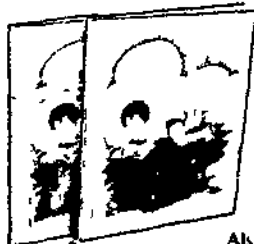


जीव-जन्तुओं के सत्कार के 50 सदस्यों के रोचक आत्मकथाएं, उनकी जबानी सुनिए-

- * वे किस जात बिरादरी के हैं?
- * उनकी दिनचर्या क्या है?
- * वे क्या खाते-पीते हैं? आदि-आदि

बड़े 116 पृष्ठ मूल्य 20/- डाकखर्च 5/-

नवजात शिशु के लिए सर्वोत्तम उपहार



बेबी रिकार्ड एलबम

Also available in English

इसमें आप अपने बच्चे के जन्म से अगले पांच वर्ष तक के सीढ़ी-दर-सीढ़ी विकास (वत-अकुरण, पहली बार बैठना व चलना आदि), जन्म संबंधी विवरणों (जन्म तिथि, जन्म का वजन, लंबाई व कुडली आदि), के रिकार्ड के साथ ही प्रत्येक अवसर के स्मरणीय फोटो भी सजो सकते हैं।

पृष्ठ 52 मूल्य 50/- डाकखर्च 6/-

लैटरिंग की आकर्षक विधियां तीखी



इंगलिश-हिन्दी मॉडर्न लैटरिंग

लेखक ए एच हाशमी

- अक्षरों की बनावट का वर्गीकरण, तर्थात् बनावट, स्ट्रोकम लगाने के तरीके, पन, स्टील तथा फ्लैट ब्रश द्वारा लैटरिंग।
- अक्षरांकन के मूल सिद्धांत। सभी तरह की अंग्रेजी-हिन्दी लैटरिंग करने की विधियां तथा सैकड़ों आकर्षक नमूने।

172 पृष्ठ मूल्य 48/- डाकखर्च 6/-

अपना मनपसन्द वाद्य बजाना सीखिए

- सितार सीखिए
- गिटार सीखिए
- वायलिन सीखिए
- हारमोनियम सीखिए
- मेडोलिन व बेजो सीखिए
- तबला व कोणो-बोणो सीखिए

संगीताचार्य श्री रामावतार 'वीर' रचित युवा पीढ़ी के चहेते वाद्य, जिन्हें बिना शिक्षक के सरलता से सीखा जा सकता है और हमारे इन कोशों की मदद से आप कुछ ही दिनों में फिल्मों व शास्त्रीय धुने निकालने लगेंगे।



मूल्य 22/- डाकखर्च 5/- प्रत्येक

